राजभाषा भारती विशेषांक
ISSN NO. 0970-9398
राजभाषा विभाग स्वर्ण जयंती वर्ष

हिंदी दिवस-2025 एवं पंचम

अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन
गांधीनगर

स्मारिका

सहकार से समृद्धि
अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष-2025
हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में परस्पर समभाव
हिंदी के संवर्धन में गुजरात के मनीषियों का योगदान

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

हमारे प्रेरणा स्रोत

"हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदुस्तान की सभी बोलियों व भाषाओं में जो उत्तम चीजें हैं, उन्हे हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए उसका हिस्सा बनाना चाहिए और यह प्रक्रिया अविरल चलती रहनी चाहिए।"

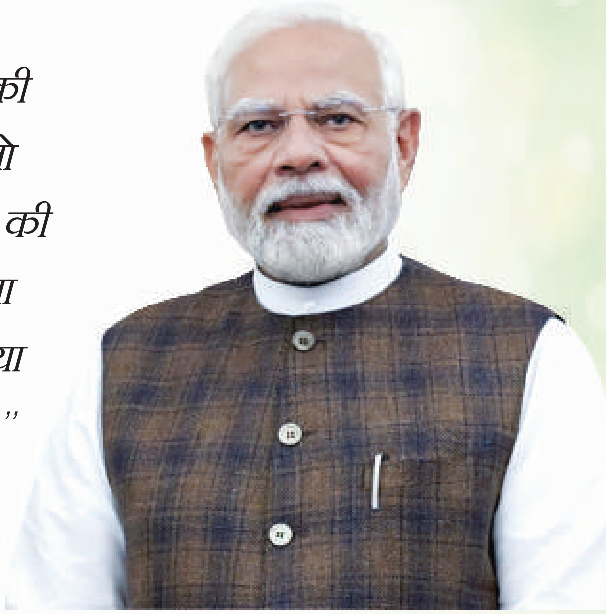

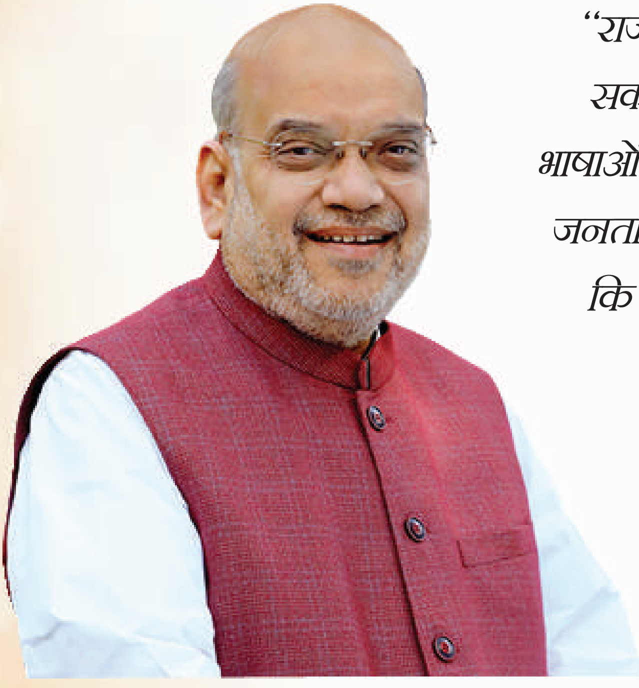

"राजभाषा का विकास तभी हो सकता है जब सभी स्थानीय भाषाओं का विकास हो। देशभर की जनता का यह लक्ष्य होना चाहिए कि हम राजभाषा को मजबूत करें।"

स्मारिका

हिंदी दिवस–2025 एवं पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन
14–15 सितंबर 2025, गांधीनगर (गुजरात)

संरक्षक
अंशुली आर्या
सचिव, राजभाषा विभाग

प्रधान संपादक
डॉ. मीनाक्षी जौली
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

उप सचिव (पत्रिका)
अनिल कुमार

संपादन
वीरेन्द्र कुमार

विशेष सहयोग
भावना सक्सैना
सत्येंद्र दहिया

टंकण एवं वितरण सहयोग
विनोद कुमार
प्रीतम सिंह
अनिल कनौजिया

स्मारिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधिक लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र व्यवहार का पताः
उप सचिव (पत्रिका)
राजभाषा विभाग, एनडीसीसी–II भवन,
चतुर्थ तल, बी विंग, जय सिंह रोड,
नई दिल्ली–110001
ईमेल–patrika-ol@nic.in
वेबसाइट–rajbhasha.nic.in

निःशुल्क वितरण के लिए

राष्ट्रपति का संदेश
प्रधान मंत्री का संदेश
गृह मंत्री का संदेश
गृह राज्य मंत्री (एन) का संदेश
गृह राज्य मंत्री (बी एस) का संदेश
सचिव, राजभाषा विभाग का संदेश
संयुक्त सचिव (राजभाषा) का संदेश

क्र. सं.	शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठ
	सहकार से समृद्धि		
1	विकसित भारत 2047 के सपने को साकार करने में सहकारिता की भूमिका	डॉ. आशीष कुमार भूटानी	15
2	राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के बढ़ते कदम	पंकज कुमार बंसल	22
3	'त्रिभुवन' सहकारी विश्वविद्यालय, आणंद (गुजरात)–एक सपने का साकार होना	डॉ. जे.एम. व्यास	28
4	सहकार से समृद्धि की ओरः कृभको की भूमिका और अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष 2025 का महत्त्व	डॉ. चंद्रपाल सिंह यादव	32
5	सहकार से समृद्धिः डेयरी सहकारिताओं के माध्यम से ग्रामीण विकास और आर्थिक प्रगति	डॉ. मीनेश शाह	43
6	ग्रामीण सहकारी क्षेत्र में नाबार्ड का योगदान	शाजी के. वी.	50
7	सहकारिता : ग्रामीण विकास से राष्ट्र निर्माण तक	डॉ. वरुण भारद्वाज	59
8	सहकार से समृद्धि : भविष्य निर्माण की नई दिशा	डॉ. अरुणा त्रिपाठी	63
9	सहकारः भारतीय चिंतन की आत्मा	भावना सक्सैना	67
10	लोकतांत्रिक भागीदारी का सशक्त माध्यमः सहकारिता	सतीश चन्द्र डबराल	71
11	भारत में सहकारी विपणन समितियांः कार्य, प्रगति, बाधाएं और संभावनाएं	ब्रह्म प्रकाश	78

रचनाक्रम

क्र. सं.	शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठ
12	भारत की परंपरा, विश्व की आवश्यकताः सहकारिता और वसुधैव कुटुंबकम	डॉ. संध्या सिलावट	85
13	भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी समितियों की भूमिका	डॉ. देवेन्द्र तिवारी	91
14	नवभारत के निर्माण में सहकारिता की भूमिकाः एक ऐतिहासिक विश्लेषण	नेहा गौड़ एवं विवेक शर्मा	98
15	सहकारिताः वर्तमान समय में विश्व की आवश्यकता	रूपेन्द्र कुमार कौशल	107
16	मैं से हम तकः नये भारत की सहकारी यात्रा	वैद्या हेतल प्रविणभाई बारैया	113
17	पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकासः आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक सामूहिक यात्रा	रेनू सनवाल, कुशाग्रा जोशी एवं लक्ष्मी कांत	119
18	आधुनिक भारत में सहकारिता की भूमिका	रवि कुमार साव	127
हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में परस्पर समभाव			
19	हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में परस्पर समन्वय और सहअस्तित्व	डॉ. दीक्षा मेहरा	137
20	हिंदी और गुजराती भाषाओं में साम्यता—भाषा इतिहास और विज्ञान	अमृता पांडेय	144
21	गुजरात में हिंदी का विकास और प्रसार	विकास कुमार	148
22	अनेकता में एकता की सूत्रधार—हिंदी	बिक्रम सिंह	152
23	भाषा : लोकतंत्र और सहकारिता की संवाहक शक्ति	आशीष भवनानी	156
24	सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन में स्वभाषा और भाषा प्रौद्योगिकी की भूमिका	संजय चौधरी	160
हिंदी के संवर्धन में गुजरात के मनीषियों का योगदान			
25	हिंदी और गुजरात : भाषा एवं संस्कृति का अटूट संगम	प्रीति अग्रवाल	167
26	गांधीनगर की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत	पद्मा कुलकर्णी	174
27	महर्षि दयानंद सरस्वती का हिंदी भाषा—कार्याचरण	डॉ. निशा शर्मा	180
28	हिंदी के संवर्धन में गुजरात के मनीषियों का योगदान	रजनीश कुमार यादव	186
29	हिंदी के प्रचार—प्रसार में गुजरात के विद्वानों का अविस्मरणीय योगदान	दिव्या शुक्ला	196
30	बापू और उनका हिंदी प्रेम	एस.के. सनोडिया	204
31	हिंदी को गुजरात का अवदान	मन मोहन वैश्य	211

सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

संदेश

यह हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, गाँधीनगर, गुजरात में 14-15 सितम्बर, 2025 को हिन्दी दिवस और पाँचवां अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन आयोजित कर रहा है। इस अवसर पर एक विशेष स्मारिका का भी प्रकाशन किया जा रहा है।

भारत की भाषाई विविधता हमारी एकता और सामूहिक पहचान का प्रतीक है। राजभाषा हिन्दी ने देश की विभिन्नताओं में सामंजस्य और सामाजिक सद्भाव स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन हमारी साझा जिम्मेदारी है। सरकार ने डिजिटल इंडिया, ई-गवर्नेंस और कृत्रिम मेधा जैसे क्षेत्रों में भारतीय भाषाओं के प्रयोग को बढ़ावा दिया है, जिससे सेवाएं प्रत्येक नागरिक तक उनकी मातृभाषा में पहुँच सकें।

हम सामाजिक-आर्थिक जीवन में सहकारिता को महत्व देकर राष्ट्र को अधिक संपन्न, सशक्त और संगठित बना सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 2025 को 'अंतर्राष्ट्रीय सहकारिता वर्ष' घोषित किया जाना इसकी वैश्विक महत्ता को दर्शाता है।

मुझे विश्वास है कि यह विशेषांक न केवल भाषाओं के विकास को बढ़ावा देगा, बल्कि सहकारिता की भावना को भी सामान्य जन तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

मैं, हिन्दी दिवस, 2025 के अवसर पर सभी देशवासियों को बधाई देती हूँ। साथ ही, मैं पाँचवें अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के आयोजन से जुड़े सभी लोगों को बधाई एवं शुभकामनाएं देती हूँ और सम्मेलन की सफलता की कामना करती हूँ।

द्रौपदी

(द्रौपदी मुर्मु)

नई दिल्ली
सितम्बर 04, 2025

**''संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।''**

ऋग्वेद (10.191.2–4)

अर्थात्– ''तुम सब मिलकर चलो, मिलकर बोलो, तुम्हारे मन एक समान हों। जैसे प्राचीन काल में देवता सामूहिक रूप से यज्ञ में सम्मिलित होते थे, वैसे ही तुम भी एक साथ रहो।''

सत्यमेव जयते

प्रधान मंत्री
Prime Minister

संदेश

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा गुजरात के गांधीनगर में हिंदी दिवस 2025 एवं पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के आयोजन के बारे में जानकर प्रसन्नता हुई है।

भारत की शक्ति इसकी विविधता में है और देश में विभिन्न बोलियों एवं भाषाओं का सह-अस्तित्व, हमें गौरवान्वित करता है। हमारी समृद्ध भाषाएं संवाद के सशक्त माध्यम के साथ ज्ञान, परंपरा और जीवन मूल्यों की वाहक भी हैं। इन भाषाओं ने देश को एकता के सूत्र में बांधने और समाज को निरंतर आगे ले जाने का कार्य किया है।

इस गौरवशाली यात्रा में हिंदी भाषा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसकी सरलता, सहजता और सुग्राह्यता इसे आम जनमानस से जोड़ती है।

आज जब दुनिया तेजी से बदल रही है, तो भाषा की पहुंच का दायरा भी विस्तृत हुआ है। डिजिटल मंचों, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और वैश्विक संचार के इस युग में हिंदी की भागीदारी लगातार बढ़ रही है। विज्ञान, तकनीक और उद्यमिता के क्षेत्रों में हिंदी का बढ़ता प्रयोग, आधुनिक विकास के युग में हिंदी की अहम् भूमिका का प्रमाण है।

यह भी गर्व का विषय है कि हिंदी का अध्ययन और उपयोग विश्वभर में तेजी से बढ़ रहा है। हिंदी अन्य देशों के साथ हमारे सांस्कृतिक संवाद का एक सशक्त माध्यम बन रही है।

राजभाषा विभाग द्वारा इस वर्ष स्मारिका के लिए 'सहकार से समृद्धि' विषय का चुनाव प्रासंगिक एवं सराहनीय है। सहकारिता के साथ सह-अस्तित्व भारतीय सांस्कृतिक परंपरा की विशेषता रही है। सहकारिता आधुनिक भारत में आत्मनिर्भरता एवं समावेशी विकास के लक्ष्य को मजबूती प्रदान करती है।

मुझे विश्वास है कि हिंदी दिवस के शुभ अवसर पर प्रकाशित यह स्मारिका सभी हिंदी प्रेमियों के लिए प्रेरणादायी होगी और सहकार की भावना से प्रेरित होकर आत्मनिर्भर और विकसित भारत के निर्माण की दिशा में हमारे संकल्प को दृढ़ करने में भी सहायक सिद्ध होगी। राजभाषा विभाग को इस सार्थक पहल और कार्यक्रम के सफल आयोजन की हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

(नरेन्द्र मोदी)

नई दिल्ली
भाद्रपद 11, शक संवत् 1947
02 सितम्बर, 2025

"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।"

महोपनिषद्, (अध्याय 4, श्लोक 71)

अर्थात्–"यह मेरा है, वह पराया है, ऐसी सोच संकीर्ण मानसिकता वाले लोगों की होती है, उदार चरित्र वाले लोगों के लिए सम्पूर्ण धरती ही एक परिवार है।"

अमित शाह

गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री
भारत सरकार

संदेश

यह हमारे लिए अत्यंत हर्ष और गर्व का विषय है कि गृह मंत्रालय का राजभाषा विभाग 14-15 सितंबर, 2025 को गांधीनगर, गुजरात में हिंदी दिवस एवं पाँचवें अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का भव्य आयोजन कर रहा है । इस अवसर पर हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के सहअस्तित्व से जुड़े विचारों के साथ-साथ **'सहकार से समृद्धि'** जैसे समयोचित विषय को समाहित करते हुए स्मारिका का प्रकाशन, निःसंदेह राजभाषा विभाग की एक अत्यंत सार्थक और प्रशंसनीय पहल है ।

हमारा देश सांस्कृतिक और भाषाई दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र है। देश की समस्त भाषाएँ और बोलियाँ हमारी जीवंत धरोहर हैं, और इनमें हिंदी वह सशक्त सूत्र है, जो विविधता में एकता की पहचान कराती है । हिंदी न सिर्फ हमारी राजभाषा और संपर्क भाषा है बल्कि एक वैश्विक भाषा के रूप में भी स्थापित हो चुकी है, जिसका प्रकाश विश्व के अनेक देशों; मॉरीशस, फिजी, त्रिनिदाद, अमेरिका, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया तक फैला है । प्रवासी भारतीयों द्वारा हिंदी और भारतीय संस्कृति का विश्व पटल पर प्रचार-प्रसार हम सभी के लिए गौरव का विषय है ।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के गतिशील नेतृत्व में देश के विभिन्न मंत्रालयों और विभागों में हिंदी का प्रयोग लगातार बढ़ा है । गृह मंत्रालय सहित अनेक मंत्रालयों में अधिकांश कार्य हिंदी में किए जाने लगे हैं । इसके अलावा देश और विदेश में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन, हिंदी में ई-प्रशिक्षण कार्यक्रम और तकनीकी नवाचारों ने राजभाषा हिंदी को नई ऊर्जा प्रदान की है । संसदीय राजभाषा समिति ने माननीय राष्ट्रपति महोदया को हाल के वर्षों में कुल 3 प्रतिवेदन प्रस्तुत किए हैं ।

आज सूचना-प्रौद्योगिकी के युग में राजभाषा विभाग ने महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ दर्ज की हैं, माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के मार्गदर्शन में **'कंठस्थ 2.0'** अनुवाद प्रणाली, **'हिंदी शब्द सिंधु'**, 14 भारतीय भाषाओं में हिंदी सीखने हेतु **'लीला राजभाषा'** और **'लीला प्रवाह'** पैकेज तथा **'भारतीय भाषा अनुभाग'** की स्थापना । ये प्रयास भाषाई समावेश और तकनीकी सामर्थ्य-वृद्धि की ओर एक महत्त्वपूर्ण प्रगति हैं ।

इन सबके साथ, भारत सरकार की 'सहकार से समृद्धि' की संकल्पना समाज के हर वर्ग को साथ लेकर विकास और आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करती है । संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2025 को 'अंतर्राष्ट्रीय सहकारिता वर्ष' घोषित करना भी इस विचारधारा की वैश्विक प्रासंगिकता को रेखांकित करता है । गुजरात की धरती, जिसने 'श्वेत क्रांति' और सहकारिता आंदोलन को दिशा दी थी, उसी राज्य में यह हिंदी दिवस और सम्मेलन होना निश्चय ही ऐतिहासिक है ।

राजभाषा विभाग द्वारा हिंदी दिवस के इस शुभ अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में **"सहकार से समृद्धि"** विषय को विशेष स्थान देना निःसंदेह अत्यंत प्रासंगिक एवं समयोचित है । मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह आयोजन न केवल हमारी राष्ट्रीय एकता और भाषाई गौरव को नई ऊँचाइयों तक ले जाएगा, बल्कि सहकारिता और सामूहिक समृद्धि की भावना से भारत को आत्मनिर्भर और विकसित राष्ट्र बनाने के संकल्प को और दृढ़ करेगा । इस महत्त्वपूर्ण आयोजन हेतु मैं राजभाषा विभाग को हार्दिक बधाई और उज्ज्वल सफलता की शुभेच्छा प्रेषित करता हूँ ।

धन्यवाद

(अमित शाह)

नित्यानन्द राय
NITYANAND RAI

सत्यमेव जयते

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
नार्थ ब्लाक, नई दिल्ली – 110001
MINISTER OF STATE FOR
HOME AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA
NORTH BLOCK, NEW DELHI - 110001

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि दिनांक 14 और 15 सितंबर, 2025 को गांधीनगर, गुजरात में हिंदी दिवस 2025 और पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। इस शुभ अवसर पर राजभाषा विभाग द्वारा एक विशेष स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें राजभाषा हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में परस्पर सामंजस्य जैसे विषयों सहित 'सहकार से समृद्धि' विषय पर लेख संकलित किए गए हैं।

माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का विचार है कि हमारा यह निरंतर प्रयास रहना चाहिए कि हिंदी भाषा समृद्ध कैसे बने। हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदुस्तान की सभी बोलियों व भाषाओं में जो उत्तम चीजें हैं, उन्हें हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए उसका हिस्सा बनाना चाहिए और यह प्रक्रिया अविरल चलती रहनी चाहिए।

भाषा और संस्कृति राष्ट्र की आत्मिक पहचान होती हैं, जिनके माध्यम से जन सामान्य न केवल संवाद करता है, बल्कि अपने विचारों, संस्कारों और परंपराओं को जीवंत बनाए रखता है। हिंदी ने निरंतर भारत की चेतना को वाणी देने का काम किया है। अपनी उदारता, सहजता, व्यापकता एवं ग्रहणशीलता से तथा देश की अन्य भाषाओं के साथ समभाव एवं सद्भाव बनाते हुए हिंदी हमारी सांस्कृतिक एकता की धुरी है।

माननीय केन्द्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के प्रेरणादायी मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग भारत संघ की राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित करने सहित भाषाई सौहार्द को सुदृढ़ करने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का प्रभावशाली ढंग से इस्तेमाल कर रहा है। भारतीय भाषाओं को समर्पित एक पूर्ण इकाई के रूप में 'भारतीय भाषा अनुभाग' की स्थापना, भाषाई विविधता को समावेशित करते हुए राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल है।

माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के 'आत्मनिर्भर भारत' और 'विकसित भारत' के स्वप्न को साकार करने के ध्येय की प्राप्ति में निश्चित ही हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं का अहम योगदान होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्मारिका में प्रकाशित उत्कृष्ट लेखों से सभी हिंदी प्रेमी लाभान्वित होंगे और यह संग्रहणीय रहेगी।

हिंदी दिवस की शुभकामनाएं!

(नित्यानन्द राय)

बंडी संजय कुमार
BANDI SANJAY KUMAR

International Year of Cooperatives 2025

सत्यमेव जयते

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF STATE FOR HOME AFFAIRS GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग द्वारा 14-15 सितंबर, 2025 को गुजरात की पावन धरती गांधीनगर में हिंदी दिवस, 2025 तथा पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है तथा इस अवसर पर स्मारिका का भी प्रकाशन किया जा रहा है।

भाषाई दृष्टि से भारत एक समृद्ध राष्ट्र है और सब भाषाओं का अपना गौरवशाली इतिहास है। संविधान निर्माताओं ने जनता की भावनाओं को सम्मान देते हुए हिंदी को राजभाषा के रूप में अंगीकार किया। भारत की विभिन्न भाषाओं और बोलियों के बीच हिंदी सदैव एक सेतु के रूप में कार्य करती आ रही है।

भारत जैसे बहुभाषी देश में भाषाओं का परस्पर सम्मान, संरक्षण और सामंजस्य राष्ट्रीय एकता के लिए आवश्यक है। वर्तमान सरकार द्वारा सभी भारतीय भाषाओं को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। सूचना और प्रौद्योगिकी के युग में आज किसी भी भाषा का विकास तकनीक से ही संभव है और यह प्रशंसनीय है कि माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के प्रेरणादायक मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग तकनीक के साथ समन्वय बिठाते हुए हिंदी सहित अन्य सभी भारतीय भाषाओं के प्रयोग को सर्व-सुलभ बनाने के लिए प्रतिबद्ध है।

भाषा और सहकारिता दोनों का दर्शन एक ही है। भाषा हमारे विचारों को जोड़ती है तथा सहकारिता हमारे श्रम और संसाधनों का समन्वय है। सहकारिता के माध्यम से हम विश्व में अग्रणी बन सकें इसलिए सहकारी तंत्र को अधिक मजबूत बनाने के विचार से माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा वर्ष 2021 में सहकारिता मंत्रालय का पहली बार गठन किया गया।

माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह के कुशल नेतृत्व में 'सहकार से समृद्धि' सहकारिता मंत्रालय द्वारा सहकारी विकास के लिए अपनाया गया राष्ट्रीय दृष्टिकोण है, जिसका उद्देश्य आर्थिक सशक्तीकरण, सामाजिक समावेश और ग्रामीण उत्थान को सुनिश्चित करना है।

हिंदी दिवस 2025 और पंचम अखिल भारतीय सम्मेलन के संयुक्त आयोजन के प्रतिभागियों तथा देश भर से आने वाले सभी हिंदी प्रेमियों को मैं हिंदी दिवस की हार्दिक बधाई देता हूँ और सम्मेलन की सफलता की कामना करता हूँ।

(बंडी संजय कुमार)

अंशुली आर्या, आई.ए.एस.
सचिव
ANSHULI ARYA, I.A.S.
Secretary

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

संदेश

हिंदी दिवस 2025 के अवसर पर प्रकाशित हो रही इस स्मारिका के माध्यम से मैं आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएँ देती हूँ। 14 सितंबर, 1949 को संविधान सभा द्वारा हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्रदान किया गया था। यह दिन हमें हमारी भाषायी अस्मिता, सांस्कृतिक धरोहर और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक स्वरूप निरंतर प्रेरणा देता है।

गुजरात की पावन धरती पर दूसरी बार हिंदी दिवस और अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन हमारे लिए गर्व और आनंद का विषय है। वर्ष 2022 में सूरत इस आयोजन का साक्षी बना था और अब 2025 में गांधीनगर इस महत्त्वपूर्ण सम्मेलन की मेज़बानी कर रहा है। यह संयोग और भी सार्थक है क्योंकि यह वर्ष अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है।

गुजरात वह राज्य है जिसने वर्तमान युग में सहकारिता की भावना को स्थापित और परिपक्व किया है। सहकारिता की प्रयोगधर्मी परंपरा ने यहाँ समाज और अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऐसे में इस सम्मेलन का यहाँ होना सहकारिता की गूंज को और व्यापक बनाता है।

भारत की प्राचीन परंपरा में भी सहकारिता निहित रही है। "वसुधैव कुटुंबकम्" का उद्घोष इस बात का द्योतक है कि हमारे ऋषि-मनीषियों ने सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की दृष्टि दी। यही दृष्टि आज भी भाषाई और सांस्कृतिक समरसता का मूलाधार है।

यह सम्मेलन हिंदी भाषा के संवर्धन का अवसर है और साथ ही भारतीय भाषाओं के बीच समभाव, सहकार और समृद्धि का उत्सव भी है। जब हम भाषाओं की विविधता को सम्मानपूर्वक स्वीकार करते हैं, तब समभाव प्रकट होता है। जब हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाएँ एक-दूसरे की शक्ति को साझा करती हैं, तब सहकार सशक्त होता है। और इसी सहकारिता से उभरता है समृद्धि का वह मार्ग जो भाषाई विकास के साथ-साथ सांस्कृतिक और राष्ट्रीय उत्थान का प्रतीक है।

मुझे विश्वास है कि गांधीनगर का यह सम्मेलन 'समभाव, सहकार और समृद्धि' की उस भावभूमि को और गहराई देगा, जिसमें हिंदी और भारतीय भाषाएँ मिलकर आत्मनिर्भर भारत की नींव को और अधिक सुदृढ़ करेंगी।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी और गृह मंत्री श्री अमित शाह जी के मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग निरंतर नए आयाम स्थापित कर रहा है और हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के विकास को नई दिशा प्रदान कर रहा है। मुझे प्रसन्नता है कि इस स्मारिका में हिंदी एवं भारतीय भाषाओं के परस्पर संबंध, सहकारी आंदोलन के इतिहास और समकालीन संदर्भों के साथ-साथ गुजरात की साहित्यिक और भाषायी विरासत पर भी लेख शामिल हैं। यह स्मारिका निश्चित ही पाठकों को ज्ञानवर्धन, प्रेरणा और भावनात्मक जुड़ाव का अनुभव कराएगी और भाषाई विविधता के सम्मान और सहकारिता की भावना को नई दिशा प्रदान करेगी।

आप सभी को हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ।

अं आर्या

(अंशुली आर्या)

डॉ० मीनाक्षी जौली
संयुक्त सचिव
DR. MEENAKSHI JOLLY
JOINT SECRETARY
Telefax : 23438130
E-mail : jsol@nic.in

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
गृह मंत्रालय
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
राजभाषा विभाग
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE
चतुर्थ तल, एन.डी.सी.सी.–II भवन,
4th FLOOR, N.D.C.C.-II BHAWAN,
जय सिंह रोड, नई दिल्ली-110001
JAI SINGH ROAD, NEW DELHI-110001

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता और गर्व का विषय है कि 14-15 सितंबर, 2025 को हिंदी दिवस एवं पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का भव्य एवं गरिमामयी आयोजन गुजरात के ऐतिहासिक नगर गांधीनगर में किया जा रहा है।

भारत की संविधान सभा ने 14 सितंबर, 1949 को संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी को अंगीकार किया था। हिंदी अपनी सरलता, सहजता और समावेशी स्वरूप के कारण भारत की विविध भाषाओं और बोलियों के बीच एक सशक्त सेतु के रूप में कार्य करती रही है।

भारत सरकार संविधान की आठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्धन और सतत विकास के लिए पूर्णत: प्रतिबद्ध है। इसी क्रम में, गृह मंत्रालय का राजभाषा विभाग सूचना प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग करते हुए हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं को डिजिटल प्लेटफॉर्म पर वैश्विक पहचान दिलाने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

हिंदी दिवस 2025 के शुभ अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में परस्पर समभाव जैसे विषयों सहित 'सहकार से समृद्धि' से संबंधित विविध विषयों पर भारत सरकार के वरिष्ठतम अधिकारियों एवं हिंदी सेवियों के अनुभवजनित बहुमूल्य विचार संकलित किए गए हैं। इसमें 'गांधीनगर की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत', 'हिंदी के संवर्धन में गुजरात के मनीषियों का योगदान', 'हिंदी और भारतीय भाषाओं में परस्पर समभाव', 'लोकतांत्रिक भागीदारी का सशक्त माध्यमः सहकारिता', 'भारत की परंपरा, विश्व की आवश्यकता: सहकारिता और वसुधैव कुटुंबकम' जैसे महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक विषय शामिल हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्मारिका की रोचक एवं ज्ञानवर्धक विषयवस्तु से हिंदी प्रेमियों में नई ऊर्जा का संचार होगा और यह सुधी पाठकों के लिए संग्रहणीय होगी।

हिंदी दिवस की शुभकामनाओं सहित!

मीनाक्षी जौली

(डॉ. मीनाक्षी जौली)

सहकार से बढ़े समृद्धि का आधार
आत्मनिर्भर एवं विकसित भारत का स्वप्न साकार

विकसित भारत 2047 के सपने को साकार करने में सहकारिता की भूमिका

– डॉ. आशीष कुमार भूटानी
सचिव, सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के 'सहकार से समृद्धि' की परिकल्पना को साकार करने के लिए 6 जुलाई, 2021 को भारत में पहली बार एक समर्पित सहकारिता मंत्रालय की स्थापना की गई। यह एक ऐतिहासिक निर्णय था, जिसके अंतर्गत सहकारिता के लिए एक स्वतंत्र मंत्रालय की स्थापना हुई और श्री अमित शाह को देश के पहले सहकारिता मंत्री के रूप में दायित्व सौंपा गया। इससे पहले सहकारी मामलों का प्रबंधन कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत किया जाता था। नवगठित मंत्रालय को देशभर में सहकारी आंदोलन को सशक्त बनाने के लिए आवश्यक प्रशासनिक, कानूनी एवं नीतिगत ढांचा उपलब्ध कराने की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी गई, जिससे यह आंदोलन भारत के सामाजिक–आर्थिक रूपांतरण में केंद्रीय भूमिका निभा सके।

यह मंत्रालय एक समावेशी, सहकारिता–आधारित आर्थिक मॉडल की परिकल्पना करता है जो विभिन्न क्षेत्रों में देश के सामाजिक–आर्थिक विकास में योगदान दे। माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह के गतिशील नेतृत्व में, मंत्रालय ने सहकारी क्षेत्र को सशक्त करने, ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने तथा आर्थिक समावेशन को सुनिश्चित करने हेतु त्वरित और ठोस कदम उठाए हैं। अल्प समय में ही इस विशाल क्षेत्र में नई ऊर्जा का संचार हुआ है, जो देश भर में फैली 8.40 लाख से अधिक सहकारी समितियों और 30 करोड़ से अधिक सदस्यों को जोड़ता है। मंत्रालय अपनी पहलों के माध्यम से किसान–केंद्रित सहकारी मॉडल को बढ़ावा देकर, ग्रामीण नागरिकों के लिए पारदर्शिता, दक्षता और सशक्तिकरण के एक नए युग की शुरुआत कर रहा है।

मंत्रालय की प्रमुख उपलब्धियों में सहकारी क्षेत्र को आधुनिक बनाने और सशक्त करने हेतु कई उच्च प्रभावशाली योजनाओं की शुरुआत और क्रियान्वयन शामिल है। मंत्रालय ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बदलने के लिए 100 से अधिक प्रमुख पहलें की हैं। यह परिवर्तन पारंपरिक उपायों को आधुनिक सोच से जोड़ता है। यह बदलाव न केवल मौजूदा संस्थाओं को मजबूत बना रहा है, बल्कि तकनीक आधारित आधुनिक सहकारिताओं के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोज़गार और अवसर भी उत्पन्न कर रहा है।

इस व्यापक परिवर्तन की आधारशिला हैं प्राथमिक कृषि ऋण समितियां (पैक्स), जो भारत की सहकारी प्रणाली की नींव हैं और ग्रामीण समुदायों की मदद करती हैं। पैक्स मुख्यतः किसानों और छोटे उधारकर्ताओं को वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं। इनकी शुरुआत 1904 में 'सहकारी ऋण समितियां अधिनियम' के तहत हुई थी। तब से यह ग्रामीण क्षेत्रों में अल्पकालिक और मध्यकालिक ऋण, कृषि आदानों की आपूर्ति और अन्य सेवाएं प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती आ रही हैं।

सूचना और प्रौद्योगिकी के इस युग में पैक्स की कार्यक्षमता सीमित हो गई थी क्योंकि उनके पास डिजिटल अवसंरचना और आधुनिक कार्य प्रणाली का अभाव था। अतः इन्हें वर्तमान ग्रामीण विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप सुधारना अत्यंत आवश्यक हो गया था।

इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण सुधार रहा पैक्स के लिए मॉडल उपविधियों की शुरुआत। ये नई उपविधियां पैक्स को एकल–उद्देश्यीय ऋण संस्थाओं से बहुउद्देशीय ग्रामीण सेवा केंद्रों में परिवर्तित करने की दिशा में उठाया गया कदम हैं। यह नया ढांचा पैक्स को व्यावसायिक एवं सेवा–आधारित गतिविधियों में विविधता लाने की अनुमति देता है, जिससे वे स्थानीय समुदायों की ज़रूरतों के अनुसार कार्य कर सकें। राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में इनके व्यापक रूप से लागू होने से पैक्स धीरे–धीरे ऐसे गतिशील एवं उत्तरदायी संस्थानों में परिवर्तित हो रही हैं जो रोजगार उत्पन्न कर सकती हैं, सार्वजनिक सेवाएं प्रदान कर सकती हैं और ग्रामीण आर्थिक मजबूती में योगदान दे सकती हैं।

सुधार की प्रक्रिया में डिजिटलीकरण एक प्रमुख स्तंभ के रूप में उभरा है, जो सहकारी संस्थाओं को पारदर्शी, जवाबदेह और कार्यकुशल बनाने की दिशा में एक निर्णायक कदम है। इस दिशा में भारत सरकार ने प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पैक्स) के कम्प्यूटरीकरण हेतु एक केंद्र प्रायोजित योजना को अनुमोदित किया है, जिसे नाबार्ड (NABARD) के माध्यम से क्रियान्वित किया जा रहा है। रु. 2925.39 करोड़ के कुल वित्तीय परिव्यय वाली इस परियोजना के तहत देश के 31 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों की 73,492 कार्यशील पैक्स को एक कॉमन ERP–आधारित राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर प्लेटफॉर्म पर लाया जा रहा है। इन पैक्स को राज्य सहकारी बैंकों (StCBs) और जिला केंद्रीय सहकारी बैंकों (DCCBs) के माध्यम से नाबार्ड से जोड़ा जा रहा है। परियोजना में आईटी हार्डवेयर की आपूर्ति, क्षेत्रीय भाषाओं में क्लाउड–आधारित ERP सॉफ्टवेयर, पुराने रिकॉर्ड का डिजिटलीकरण और कर्मचारियों का प्रशिक्षण शामिल है। यह तकनीकी रूपांतरण पैक्स को वास्तविक समय में लेखांकन, कुशल सेवा वितरण और बेहतर समन्वय की क्षमता प्रदान करेगा, जिससे वे उच्च स्तरीय सहकारी बैंकिंग संरचना के साथ प्रभावी ढंग से एकीकृत हो सकेंगी।

नीतिगत योजना निर्माण और प्रभावी निगरानी के लिए, सहकारिता मंत्रालय ने राष्ट्रीय सहकारी डेटाबेस (NCD) का विकास किया है, जो एक व्यापक डिजिटल डेटाबेस है। यह डेटाबेस देशभर की सहकारी समितियों की अद्यतन जानकारी प्रदान करता है, जिससे सटीक योजना निर्माण, प्रदर्शन की निगरानी और निधियों के आवंटन में पारदर्शिता सुनिश्चित होती है। यह डेटाबेस सक्रिय, निष्क्रिय और कमजोर प्रदर्शन वाली समितियों की पहचान कर लक्षित हस्तक्षेप को संभव बनाता है। साथ ही, यह पंजीकरण और अनुपालन प्रक्रियाओं को सरल बनाकर पैक्स के लिए कारोबारी सुगमता को बढ़ाता है और उन्हें आधुनिक सहकारी शासन के अनुरूप लाता है।

इसी दिशा में, CRCS (Central Registrar of Cooperative Societies), CRCS–सहारा रिफंड पोर्टल, ई–समयुक्ति और ई–समृद्धि जैसे केंद्रीकृत पोर्टलों की शुरुआत उल्लेखनीय पहलें हैं। इनसे न केवल सहकारी संस्थाओं में पारदर्शिता, जवाबदेही और कार्यकुशलता बढ़ेगी, बल्कि जनता का विश्वास भी सुदृढ़ होगा। साथ ही, यह क्षेत्र युवाओं और पेशेवर प्रतिभाओं को भी आकर्षित करेगा।

प्रौद्योगिकीय आधुनिकीकरण के साथ–साथ, मंत्रालय पैक्स के विस्तार पर भी ध्यान दे रहा है। नाबार्ड, राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड (NDDB) और राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड (NFDB) जैसे राष्ट्रीय संस्थानों के सहयोग से देशभर में नई बहुउद्देशीय पैक्स/डेयरी/मत्स्य सहकारी समितियों की स्थापना की प्रक्रिया आरंभ की गई है। इन समितियों को डेयरी, मत्स्य पालन, वेयरहाउसिंग, स्वास्थ्य सेवा और रिटेल जैसे विविध क्षेत्रों में संचालित करने के लिए डिज़ाइन किया जा रहा है। इसका उद्देश्य हर ग्राम पंचायत/गांव में एक कार्यशील, पेशेवर रूप से प्रबंधित सहकारी समिति की उपस्थिति सुनिश्चित करना है, जिससे स्थानीय शासन और भागीदारी आधारित सहकारी सेवाओं की अंतिम छोर तक पहुंच संभव हो सके।

पैक्स का यह रणनीतिक विस्तार और सुधार अनेक लाभ उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। एक डिजिटल रूप से सक्षम, बहु–क्षेत्रीय संस्था के रूप में पैक्स अब ग्रामीण आर्थिक परिवर्तन के इंजन बन सकते हैं। ये वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देंगे, आवश्यक सेवाओं की पहुंच सुधारेंगे, संचालन में पारदर्शिता लाएंगे और समुदायों को अधिक आत्मनिर्भर बनाएंगे।

इस दृष्टिकोण के अनुरूप, पैक्स को कॉमन सर्विस सेंटर्स, जन औषधि केंद्र, पीएम किसान समृद्धि केंद्र, एलपीजी वितरण, पेट्रोल पंप, एफपीओ, पानी समिति आदि संचालित करने हेतु सशक्त बनाया जा रहा है। ये गतिविधियां पैक्स को सस्ती दवाएं, रसोई गैस, डिजिटल बैंकिंग और विभिन्न सरकारी योजनाओं की पहुंच जैसी आवश्यक सेवाएं प्रदान करने में सक्षम बनाती हैं। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करता है, स्थानीय रोज़गार के अवसर उत्पन्न करता है और सेवाओं को वंचित समुदायों के समीप लाता है। यह ग्रामीण–शहरी अंतर को भी कम करता है और डिजिटल इंडिया व आत्मनिर्भर भारत जैसे प्रमुख कार्यक्रमों के उद्देश्यों को समर्थन देता है।

एक और उल्लेखनीय पहल में तीन राष्ट्रीय स्तर की बहु–राज्य सहकारी समितियों – भारतीय बीज सहकारी समिति लिमिटेड (BBSSL), राष्ट्रीय सहकारी जैविक उत्पाद लिमिटेड (NCOL), और राष्ट्रीय सहकारी निर्यात लिमिटेड (NCEL) की स्थापना की गई है। ये शीर्ष संस्थाएं पैक्स/सहकारी समितियों को बड़े बाज़ारों तक पहुंच और व्यवसाय के विस्तार में सहायता प्रदान करती हैं। BBSSL उच्च गुणवत्ता वाले बीजों के उत्पादन और वितरण पर केंद्रित है, NCOL जैविक खेती को बढ़ावा देता है और NCEL सहकारी आधारित निर्यात को सुगम बनाता है। ये

संस्थाएं प्राथमिक समितियों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों से जोड़कर किसानों को आय के विविध स्रोत उपलब्ध करवा रही हैं और मंत्रालय के ग्रामीण आत्मनिर्भरता एवं सहकारी आधारित विकास के लक्ष्य को आगे बढ़ा रही हैं।

कानूनी दृष्टिकोण से भी सहकारी समितियों के ढांचे को मज़बूत किया गया है। इसके तहत बहु–राज्य सहकारी समितियों (संशोधन) अधिनियम, 2023 को पारित किया गया है। यह अधिनियम राज्यों की सीमाओं से परे संचालित होने वाली सहकारी संस्थाओं के लिए एक ठोस कानूनी और प्रशासनिक ढांचा प्रदान करता है। यह पारदर्शिता, लोकतांत्रिक प्रबंधन और पेशेवर शासन को बढ़ावा देता है। इसके प्रमुख लाभों में अनिवार्य लेखा परीक्षण और चुनाव, सदस्य भागीदारी में वृद्धि और राजनीतिक हस्तक्षेप में कमी शामिल हैं। यह देश के विविध परिदृश्यों में कुशलतापूर्वक संचालन करने वाली सहकारी संस्थाओं के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करता है।

मंत्रालय के अंतर्गत एक परिवर्तनकारी पहल रही है श्वेत क्रांति 2.0 की शुरुआत, जो सहकारी मॉडल के माध्यम से डेयरी क्षेत्र को पुनर्जीवित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसमें ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। यह पहल भारत की मूल दुग्ध क्रांति की विरासत को आगे बढ़ाते हुए बुनियादी ढांचे के आधुनिकीकरण, दुग्ध उत्पादन में वृद्धि और महिला किसानों के लिए स्थायी आय के अवसर सृजित करने का प्रयास करती है। नए डेयरी सहकारी समितियों की स्थापना विशेष रूप से दूरदराज के क्षेत्रों में की जा रही है, ताकि निष्पक्ष दुग्ध खरीद, समय पर भुगतान और पशु चिकित्सा तथा चारा सेवाओं तक पहुंच सुनिश्चित की जा सके। इस कार्यक्रम में महिलाओं की नेतृत्वकारी भूमिका को प्रोत्साहित किया गया है, जिससे वे अपनी समुदायों में भागीदार और परिवर्तनकर्ता बन सकें।

श्वेत क्रांति 2.0 के तहत स्वच्छ दुग्ध उत्पादन, कृत्रिम गर्भाधान सेवाएं और मूल्य वर्धित डेयरी उत्पादों के लिए प्रशिक्षण भी प्रदान किया जा रहा है। किसानों को डिजिटल प्लेटफॉर्म्स और संगठित बाजारों से जोड़ा जा रहा है, जिससे बर्बादी कम हो और लाभप्रदता बढ़े। यह पहल खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण रोजगार और लैंगिक सशक्तिकरण के व्यापक लक्ष्यों के साथ "सहकार से समृद्धि" और "विकसित भारत 2047" दृष्टिकोण के अनुरूप है, जिससे सहकारिताओं को भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के स्तंभ के रूप में और अधिक मजबूत बनाया जा रहा है।

कृषि भंडारण से जुड़ी दीर्घकालिक चुनौतियों का समाधान करते हुए मंत्रालय ने सहकारी क्षेत्र में **'विश्व की सबसे बड़ी अनाज भंडारण योजना'** शुरू की है। इस योजना का उद्देश्य पैक्स स्तर पर आधुनिक भंडारण अवसंरचना जैसे गोदामों, प्राथमिक प्रसंस्करण इकाइयों और कस्टम हायरिंग सेंटर्स का निर्माण करना है। पायलट चरण के तहत 11 राज्यों के 11 पैक्स में गोदाम बनाए जा चुके हैं, जबकि विस्तारित पायलट के तहत अतिरिक्त 500 पैक्स को शामिल किया गया है। इस विकेंद्रीकृत भंडारण योजना से कटाई के बाद होने वाले नुकसान में कमी आएगी, किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त होगा और बफर स्टॉक प्रबंधन के माध्यम से खाद्य सुरक्षा भी सुदृढ़ होगी। यह निर्माण, लॉजिस्टिक्स और रखरखाव के क्षेत्र में ग्रामीण रोजगार भी उत्पन्न करेगा।

संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2025 को "अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष (आईवाईसी)" के रूप में घोषित किया है, जिसका विषय है **"Cooperatives Build a Better World" (सहकारिताएं एक बेहतर विश्व का निर्माण करती हैं)**। भारत, "सहकार से समृद्धि" के संकल्प के साथ सहकारी समितियों के सामाजिक एवं आर्थिक योगदान का उत्सव मना रहा है। यह पहल राष्ट्र के विकास में सहकारिताओं की केंद्रीय भूमिका को मान्यता देती है और संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक सहकारी मॉडल की स्वीकृति के साथ मेल खाती है। **आईवाईसी 2025** एक ऐसा मंच है, जो सफलता की कहानियों को प्रदर्शित करता है, नवाचार को बढ़ावा देता है और पूरे सहकारी क्षेत्र में कार्यप्रणालियों को आधुनिक बनाता है। इसका उद्देश्य युवाओं की भागीदारी बढ़ाना, वैश्विक साझेदारियों को सुदृढ़ करना और भारत को सहकारी उत्कृष्टता में अग्रणी के रूप में स्थापित करना है।

जैसे–जैसे देश **डिजिटलीकरण, नीति आधुनिकीकरण और राष्ट्रीय सहकारी संस्थाओं की स्थापना** जैसे प्रमुख सुधारों को आगे बढ़ा रहा है, वैसे–वैसे **आईवाईसी 2025** भारत के "सहकार से समृद्धि" के विज़न को मजबूत करता है और **विकसित भारत 2047** के दीर्घकालिक लक्ष्य को सशक्त बनाता है।

विकसित भारत 2047 का विज़न भारत की 100वीं स्वतंत्रता वर्षगांठ तक एक विकसित, आत्मनिर्भर और समावेशी राष्ट्र बनने की आकांक्षा में निहित है। यह एक राष्ट्रीय मिशन है जो देश के प्रत्येक क्षेत्र – आर्थिक, सामाजिक, प्रौद्योगिकीय और पर्यावरणीय – को आधुनिक, सतत और वैश्विक प्रतिस्पर्धा में सक्षम बनाने की दिशा में कार्य करता है। यह परिवर्तन केवल मैक्रो–इकोनॉमिक प्रगति या शहरी विकास तक सीमित नहीं है; यह समान रूप से **ग्रामीण भारत के उत्थान, जमीनी संस्थानों के सशक्तिकरण** और अंतिम व्यक्ति तक समृद्धि पहुंचाने के उद्देश्य से भी जुड़ा है। इस व्यापक मिशन में सहकारिताएं परिवर्तन के एक सशक्त माध्यम के रूप में उभर रही हैं। स्थानीय समुदायों में निहित और परस्पर लाभ के सिद्धांत पर आधारित सहकारिताएं एक सहभागी, समावेशी और टिकाऊ विकास प्रदान करने की अनूठी क्षमता रखती हैं।

सहकारिताओं ने भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, विशेषकर कृषि, डेयरी, मत्स्य पालन और ग्रामीण ऋण क्षेत्रों में। आज, जब माननीय प्रधानमंत्री

श्री नरेन्द्र मोदी और माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह के नेतृत्व में एक समर्पित सहकारिता मंत्रालय की स्थापना की गई है, तब सहकारी आंदोलन को एक नई गति प्राप्त हो रही है। यह मंत्रालय पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, डिजिटल एकीकरण और पेशेवर प्रबंधन के आधार पर एक नई क्रांति का संचालन कर रहा है। देश भर में विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लाखों सहकारी समितियों के माध्यम से जमीनी स्तर से परिवर्तन लाने की असीम संभावनाएं हैं। **साहसी सुधारों, लक्षित नीतियों और नवाचारपूर्ण योजनाओं** के माध्यम से सरकार सहकारिताओं को अधिक आधुनिक, सक्षम और प्रभावशाली बना रही है। इसका अंतिम उद्देश्य स्थानीय स्तर पर लोगों को सशक्त बनाना और उन्हें भारत को विकसित राष्ट्र बनाने की यात्रा में सक्रिय भागीदार बनाना है।

"सहकार से समृद्धि" की भावना **विकसित भारत 2047** रणनीति की आधारशिला बन गई है। सहकारिताएं लोगों को विशेष रूप से ग्रामीण और अर्ध–शहरी भारत में आर्थिक गतिविधियों से सीधे जोड़कर **समान विकास** लाने की दिशा में अग्रणी भूमिका निभा सकती हैं। कृषि, डेयरी, ऋण, आवास, मत्स्य पालन और विपणन जैसे क्षेत्रों में सहकारिताएं लाखों भारतीयों को देश की आर्थिक यात्रा में भागीदार बनाती हैं। **मंत्रालय एक मजबूत कानूनी, नीतिगत और वित्तीय पारिस्थितिकी तंत्र** के निर्माण में जुटा है, जो सहकारिताओं को प्रभावी, पेशेवर, पारदर्शी और भविष्य के लिए तैयार संस्थानों में परिवर्तित करता है। यह प्रयास **समावेशी और सतत विकास** के विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों के साथ पूर्ण रूप से मेल खाता है।

अगले दशक में सहकारी आंदोलन को सशक्त बनाने का रोडमैप व्यापक और दूरदर्शी है। यह सहकारी समितियों के लिए कारोबार करने में आसानी को बढ़ाने, सस्ती वित्तीय सहायता तक पहुंच सुनिश्चित करने, लक्षित प्रशिक्षण और शिक्षा के माध्यम से कौशल विकास, महिलाओं की अधिक भागीदारी, युवाओं के नेतृत्व में उद्यमिता को बढ़ावा देने और आधुनिक तकनीकों को तेजी से अपनाने पर केंद्रित है। इन प्राथमिकताओं का उद्देश्य सहकारिताओं को अन्य आर्थिक मॉडलों के समकक्ष कार्य करने योग्य बनाना है, साथ ही उनके परस्पर सहायता और लोकतांत्रिक शासन के मूल्यों को भी बनाए रखना है। इन संस्थाओं को अधिक चुस्त और बाज़ारोन्मुख बनाने पर ज़ोर दिया जा रहा है, बिना उनके सामाजिक उद्देश्य से समझौता किए। जैसे–जैसे सहकारिताएं विकसित होंगी, वे रोज़गार उत्पन्न करेंगी, आय में वृद्धि करेंगी और **साझा प्रगति, सहयोग और सामुदायिक विकास की संस्कृति** को पूरे देश में पोषित करेंगी।

सरकार का 2047 का विज़न भारत को **30 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था** बनाने और दुनिया की **शीर्ष तीन अर्थव्यवस्थाओं** में शामिल करने का है। इस योजना में गरीबी उन्मूलन, 100% साक्षरता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवा सुनिश्चित करना और स्मार्ट व सतत शहरों का निर्माण करना शामिल है। इस रोडमैप में **प्रौद्योगिकीय नवाचार, स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग, मजबूत डिजिटल अवसंरचना और वैज्ञानिक उन्नति** को आवश्यक तत्व माना गया है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह दृष्टिकोण एक न्यायसंगत, समावेशी और लचीले समाज के निर्माण पर आधारित है, जहां हर नागरिक–चाहे उसकी पृष्ठभूमि कुछ भी हो अवसरों तक पहुंचा हो और गरिमामय जीवन जी सके। इस व्यापक राष्ट्रीय परिदृश्य में, **सहकारी समितियां ग्रामीण–शहरी अंतर को पाटने, जमीनी उद्यमिता को बढ़ावा देने और यह सुनिश्चित करने में सक्षम हैं कि आर्थिक वृद्धि का लाभ सभी तक समान रूप से पहुंचे।**

विकसित भारत 2047 एजेंडा को साकार करने में सहकारिताओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। ये सरकार की योजनाओं और ग्रामीण समुदायों के बीच पुल का कार्य करती हैं, जिससे योजनाओं के लाभ अंतिम व्यक्ति तक पहुंचते हैं। उदाहरण के तौर पर, **कृषि सहकारी समितियां** किसानों को बीज, उर्वरक और सिंचाई सहायता जैसी इनपुट्स तक पहुंच उपलब्ध कराती हैं, साथ ही उत्पादों की खरीद, भंडारण और विपणन में भी मदद करती हैं। **डेयरी सहकारी समितियां** छोटे पशुपालकों को बाज़ारों और प्रसंस्करण अवसंरचना से जोड़ती हैं। **क्रेडिट सहकारी समितियां** किसानों और छोटे उद्यमियों को सस्ती दरों पर ऋण प्रदान करती हैं, जिससे उन्हें असंगठित उधारदाताओं पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। **आवास सहकारी समितियां** शहरी और अर्ध–शहरी क्षेत्रों में सस्ते घर उपलब्ध कराती हैं। जब इन सेवाओं को आधुनिक तकनीकों से जोड़कर और विस्तारित किया जाता है, तो यह सीधे **आर्थिक विकास, गरीबी उन्मूलन और सामाजिक समानता**–जो कि विकसित भारत 2047 के प्रमुख उद्देश्य हैं–में योगदान करती हैं।

समावेशिता इस दृष्टिकोण का एक अन्य आधार है, और सहकारिताओं में महिलाओं, युवाओं और वंचित समुदायों को मुख्यधारा में लाने की अपार संभावनाएं हैं। सहकारी मॉडल अपने **"एक सदस्य, एक मत"** के लोकतांत्रिक ढांचे के कारण समावेशी शासन के लिए अत्यंत उपयुक्त है। अब ऐसी नीतियां बनाई जा रही हैं, जो **सहकारिता नेतृत्व में महिलाओं की भागीदारी, युवा उद्यमिता को बढ़ावा, और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार प्रशिक्षण व क्षमता निर्माण कार्यक्रमों** को प्राथमिकता दें। विद्यालयों और महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में सहकारिता शिक्षा को सम्मिलित करने की मंत्रालय की पहल, छात्रों में सहकारिता के प्रति जागरूकता लाने और उन्हें इसे एक संभावित **रोजगार विकल्प** के रूप में देखने हेतु प्रेरित कर रही है – न कि केवल एक पारंपरिक ग्रामीण अवधारणा के रूप में।

भविष्य की ओर देखते हुए, सरकार का प्रयास है कि सहकारिताएं **जैविक खेती, नवीकरणीय ऊर्जा, आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन, कृषि–तकनीक, खाद्य प्रसंस्करण, ग्रामीण पर्यटन, स्वास्थ्य सेवाओं और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स** जैसे नए क्षेत्रों में भी प्रमुख भूमिका निभाएं। ये उभरते क्षेत्र **आय सृजन, सतत विकास और सामुदायिक स्वामित्व** के लिए विशाल संभावनाएं प्रस्तुत करते हैं। इन क्षेत्रों में सहकारिताओं की भागीदारी **पर्यावरणीय एवं आर्थिक स्थिरता** और जलवायु परिवर्तन एवं बाज़ार अस्थिरताओं के खिलाफ ग्रामीण समुदायों का **लचीलापन** बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होगी।

विकसित भारत 2047 केवल एक सरकारी कार्यक्रम नहीं, बल्कि एक **राष्ट्रीय आंदोलन** है, जो हर नागरिक, संस्था और समुदाय की भागीदारी चाहता है। सहकारी समितियां अपने **सामूहिक प्रयास, साझा उत्तरदायित्व और समावेशी समृद्धि** की भावना के कारण इस आंदोलन की आत्मा हैं। ये **जमीनी लोकतंत्र की भावना** को दर्शाती हैं और सामाजिक एकजुटता के वाहक हैं। जैसे–जैसे भारत **विकसित अर्थव्यवस्था** बनने की दिशा में तेज़ी से अग्रसर हो रहा है, सहकारी समितियों की भूमिका और भी केंद्रीय होती जा रही है। लोगों को संगठित करने, लाभों को समान रूप से वितरित करने और सामुदायिक केंद्रित आर्थिक गतिविधियों को बनाए रखने की उनकी क्षमता उन्हें भारत के विकासात्मक दृष्टिकोण के लिए **अनिवार्य** बनाती है।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के बढ़ते कदम

– पंकज कुमार बंसल
प्रबंध निदेशक, राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम

विकसित भारत का मार्ग ग्रामीण अर्थव्यवस्था की समृद्धि से होकर गुजरता है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सशक्तिकरण सहकारिताओं के उत्थान में निहित है। इसी विचार को माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा 'सहकार से समृद्धि' के रूप में दृष्टिबद्ध किया गया। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के नेतृत्व में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन.सी.डी.सी.) सहकारिताओं के सशक्तिकरण हेतु समर्पित है। भारत सरकार के एक सांविधिक निकाय तथा संसद के एक अधिनियम के अंतर्गत वर्ष 1963 में स्थापित यह संस्थान सहकारी क्षेत्र के विकास में वित्तपोषण की शीर्षस्थ भूमिका निभा रहा है। इस संस्थान की स्थापना उस समय की गई थी जब भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात आर्थिक पुनर्निर्माण कर रहा था। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों को सहज रूप से वित्तीय सहायता उपलब्ध होना बमुश्किल था। ऐसे समय में एन.सी.डी.सी. ने सहकारिता के माध्यम से कृषक समुदाय को संगठित किया, उन्हें ऋण प्रदान किए और बाजार तक पहुंच प्रदान की। यह न केवल एक संस्था की स्थापना थी, बल्कि एक क्रांति थी, जहां एक व्यक्ति के स्थान पर सम्पूर्ण समुदाय को समृद्ध करने की ओर कदम बढ़ाया गया। निगम का मुख्य कार्यक्षेत्र सहकारी क्षेत्र के उत्थान एवं विकास हेतु ऋण के रूप में सहकारिताओं को वित्तीय सहायता प्रदान करना है।

एन.सी.डी.सी. की प्रमुख गतिविधियाँ एवं उपलब्धियां

निगम का लक्ष्य आय सृजन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए सहकारी समितियों को सुविधाओं से लैस करना है, जिसके दायरे में विपणन एवं निवेश, कृषि–प्रसंस्करण, भंडारण और शीत श्रृंखला, कमजोर वर्गों के कार्यक्रम (मत्स्य पालन, डेयरी/पशुधन, कुक्कुटपालन, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, हथकरघा, और महिला सहकारी समितियां), युवा सहकारिताओं, एफ.पी.ओ. सहित औद्योगिक, ऋण एवं सेवा सहकारी समितियों, कम्प्यूटरीकरण, कृषि–निर्यात और निर्यात संवर्धन सम्मिलित हैं।

सहकारिताओं के माध्यम से ग्रामीण भारत का सुदृढ़ीकरण

समस्त भारत में स्थित अपने 19 क्षेत्रीय कार्यालयों एवं 9 उप–कार्यालयों के माध्यम से एन.सी.डी.सी. ने ग्रामीण भारत के आखिरी व्यक्ति तक अपनी पहुंच सुनिश्चित की है। 10,000 किसान उत्पादक संगठनों के गठन एवं संवर्धन, प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना, कृषि अवसंरचना विकास निधि, पीएम फॉर्मलाइजेशन ऑफ माइक्रो फूड प्रोसेसिंग एंटरप्राइजेज जैसी योजनाओं के जरिये एन.सी.डी.सी. ने गांवों में विकास की रफ्तार को कई गुना बढ़ाने में अपना योगदान दिया है।

केंद्रीय क्षेत्रक योजना – 10,000 किसान उत्पादक संगठन के गठन और संवर्धन के अंतर्गत, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम को सहकारी समितियों अधिनियम के तहत एफ.पी.ओ. के गठन और संवर्धन हेतु कार्यान्वयन एजेंसी के रूप में नामित किया गया है। इस योजना के अंतर्गत कृषि एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा एन.सी. डी.सी. को 746 एफ.पी.ओ. के गठन और संवर्धन का लक्ष्य सौंपा गया था, जिसे एन.सी.डी.सी. ने सहकारी क्षेत्र में 746 एफ.पी.ओ. का पंजीकरण करके पूर्ण किया।

इसके पश्चात, सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार की पहल पर, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा एन.सी.डी.सी.को सहकारी क्षेत्र में एफ.पी.ओ.के गठन एवं संवर्धन हेतु प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पैक्स) को सशक्त बनाने का अतिरिक्त लक्ष्य सौंपा गया। इस दिशा में एन.सी.डी.सी. को 1117 एफ.पी.ओ.का लक्ष्य प्रदान किया गया, जिसे एन.सी.डी.सी.ने पैक्स के सदस्यों के माध्यम से 1117 एफ.पी.ओ.को पंजीकृत/ऑनबोर्ड कर पूरा किया। यह पहल, किसानों को आवश्यक बाजारों से जोड़ने और उनके उत्पाद का उचित एवं लाभकारी मूल्य दिलाने में सहायक सिद्ध होगी।

एन.सी.डी.सी. ने वित्तीय प्रणाली में एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए फ्लोटिंग ब्याज दर की शुरुआत की। इससे सावधि ऋण की ब्याज दर में लगभग 2% की कमी आई। फ्लोटिंग ब्याज दर का मतलब है कि यह ब्याज दर बाजार के हालात और अन्य वित्तीय कारकों के आधार पर बदलती रहती है, जिससे उधार लेने वालों को कम ब्याज दर का लाभ मिलता है। इसके साथ ही एन.सी.डी.सी. ने डिफरेंशियल रेट तंत्र को अपनाया, जिसके तहत विभिन्न ऋण उधारकर्ताओं के लिए अलग–अलग ब्याज दरों का निर्धारण किया जाता है। यह तंत्र उधारकर्ताओं की वित्तीय स्थिति और उनकी क्षमता को ध्यान में रखते हुए ऋण की दर को अनुकूलित करता है, जिससे उधारकर्ताओं को अपनी स्थिति के अनुसार बेहतर दरों पर वित्तीय सहायता प्राप्त होती है।

"वर्ष 2021 में सहकारिता मंत्रालय के गठन के बाद से एन.सी.डी.सी. के संवितरण में अभूतपूर्व गति का संचार हुआ है। वर्ष 2020–21 में जहां 24733.24 करोड़ रूपये एन. सी.डी.सी. द्वारा संवितरित किए गए वहीं सहकारिता मंत्रालय के गठन के उपरांत वर्ष 2024–25 में 95182.84 करोड़ रूपये संवितरित किये गए हैं। एन.सी.डी.सी. ने इन चार वर्षों के दौरान संवितरण में 40% से अधिक चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर (सीएजीआर) हासिल की है। वर्ष 1963 में गठन के बाद से अब तक विभिन्न सहकारिताओं को कुल 4,08,381.27 करोड़ रूपये (2024–25 तक) का संवितरण किया गया है। वित्तीय सहायता प्रदान किए जाने के आंकड़ों में वृद्धि के साथ ही एन.सी.डी.सी.की ऋण वसूली दर 99.84% है जो एन.सी.डी.सी. के कुशलता एवं सहकारिताओं के भरोसे का भी परिचायक है।"

सहकारिता मंत्रालय के गठन के उपरान्त एन.सी.डी.सी.के दायरे को और भी व्यापक बनाने एवं योजनाओं के लाभ को भारत के प्रत्येक कोने में पहुचाने के लिए 1 क्षेत्रीय कार्यालय एवं 9 उप कार्यालयों की स्थापना की गई। अब एन.सी.डी.सी., 19 क्षेत्रीय कार्यालय, 1 प्रशिक्षण संस्थान तथा 9 उप कार्यालयों के माध्यम से सहकारिताओं के उत्थान हेतु समर्पित है।

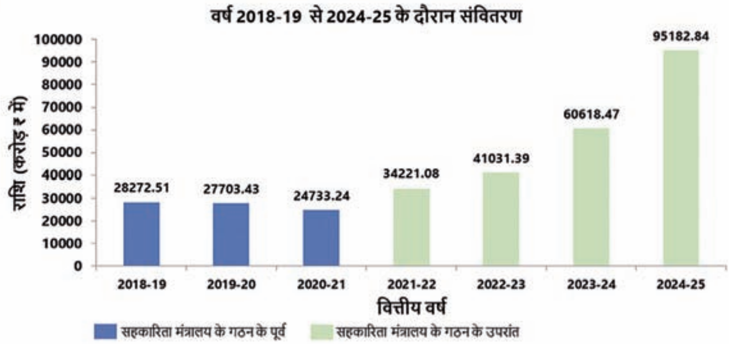

भारत सरकार द्वारा एन.सी.डी.सी. को अनुदान सहायता

माननीया वित्त मंत्री द्वारा बजट 2025–26 के भाषण में घोषित किया गया कि भारत सरकार सहकारी क्षेत्र के लिए एन.सी.डी.सी. के ऋण कार्यों के लिए सहायता प्रदान करेगी। तदनुसार, कैबिनेट द्वारा दिनांक 31.07.2025 को आयोजित बैठक में एन.सी.डी.सी. को ₹2000 करोड़ अनुदान प्रदान करने की मंजूरी दी गई। सरकार से 4 वर्षों में दौरान प्राप्त ₹2000 करोड़ के आधार पर एन.सी.डी.सी. बाजार से ₹20,000 करोड़ जुटाने में सक्षम होगा। इससे देश भर में डेयरी, पशुधन, मत्स्य पालन, चीनी, वस्त्र, खाद्य प्रसंस्करण, भंडारण और शीतगृह, श्रमिक और महिला सहकारिताओं जैसे विभिन्न क्षेत्रों की 13,288 सहकारी समितियां के लगभग 2 करोड़ 90 लाख सदस्य लाभान्वित होंगे।

मंत्रालय के अस्तित्व में आने के बाद एन.सी.डी.सी.द्वारा दो प्रमुख योजनाएं शुरू की गईं–

दीर्घावधि कृषक पूँजी सहकार योजना एवं स्वयंशक्ति सहकार योजनाः

दीर्घावधि कृषक पूँजी सहकार योजना के तहत एन.सी.डी.सी.कृषि ऋण सहकारी समितियों को दीर्घकालिक वित्तीय सहायता प्रदान करती है, ताकि वे कृषि से जुड़े विभिन्न कार्यों, वस्तुओं और सेवाओं में किसानों को लंबे समय के लिए ऋण या वित्तीय सहायता उपलब्ध करा सकें।

स्वयंशक्ति सहकार योजना महिला स्वयं सहायता समूहों को ऋण/अग्रिम वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए कृषि ऋण सहकारी समितियों को एन.सी.डी.सी. वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती है।

इसके अतिरिक्त निगम द्वारा चलाई जा रही कुछ प्रमुख योजनाएं जैसेः नवगठित समितियों के लिए युवा सहकार, स्वास्थ्य क्षेत्र से जुडी समिति के लिए आयुष्मान सहकार, महिला सहकारिताओं के लिए नंदिनी सहकार, डेयरी सहकारिताओं के विकास के लिए डेयरी सहकार, डिजिटल इंडिया में सहकारी समितियों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए डिजिटल सहकार जैसी योजनाओं के माध्यम से सहकारिताओं की सफलता की कहानी में निगम का योगदान महत्वपूर्ण है।

भारत में कुल चीनी मिलों में लगभग 30% से भी अधिक सहकारी चीनी मिलें हैं। सहकारी चीनी मिलें भारत के चीनी क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण हिस्सेदारी रखती हैं और इनका संचालन किसानों की

भागीदारी और उनके हितों की रक्षा के लिए होता है। चीनी उत्पादन के साथ ही एथेनोल, कोजेन ऊर्जा जैसे उत्पादों के माध्यम से इन सहकारिताओं का योगदान बेहद महत्वपूर्ण है।

चीनी सहकारिताओं के निर्बाध संचालन एवं उनके सतत योगदान को सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार से चीनी सहकारिताओं के लिए 1,000 करोड़ रूपये के अनुदान को प्राप्त करते हुए एन.सी.डी.सी. ने पिछले दो वित्तीय वर्षों में चीनी सहकारिताओं को 10,005 करोड़ रुपए से अधिक का संवितरण किया।

एन.सी.डी.सी.ने मत्स्य पालन क्षेत्र के छोटे व सीमांत मछुआरों को आधुनिक उपकरण एवं आधारभूत संरचनाओं के माध्यम से आय बढ़ाने के लिए वित्तीय सहायता एवं तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान किया है। यह गहरे समुद्र में मछलियां पकड़ने हेतु ट्रॉलर खरीदने, समुद्री खाद्य प्रसंस्करण और निर्यात के बुनियादी ढांचे जैसे क्षेत्रों में भी सहयोग करता है। प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (पी.एम.एम.एस.वाई.) के तहत एन.सी.डी.सी., मत्स्य किसान उत्पादक संगठन (एफ.एफ.पी.ओ.) के विकास में अहम कार्यान्वयन एजेंसी के रूप में कार्य करता है। पी.एम.एम.एस.वाई. के अंतर्गत एफ.एफ.पी.ओ. योजना का उद्देश्य एक समग्र और सहायक पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण के माध्यम से मत्स्य पालन क्षेत्र में समावेशी और सतत परिवर्तन लाना है। एन.सी.डी.सी. को 70 एफ.एफ.पी.ओ. का प्रारंभिक लक्ष्य आवंटित किया गया था, जो पहले ही पूरा हो चुका है। मत्स्य पालन विभाग, मत्स्य पालन, पशुपालन और डेयरी मंत्रालय, भारत सरकार ने वित्त वर्ष 2023–24 और वित्त वर्ष 2024–25 के लिए 1000 प्राथमिक मत्स्य सहकारी समितियों को एफ.एफ.पी.ओ. के रूप में सुदृढ़ करने का अतिरिक्त लक्ष्य दिया है। वित्त वर्ष 2024–25 में एन.सी.डी.सी. ने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।

सहकार टैक्सी कोऑपरेटिव लिमिटेड (बहु–राज्य सहकारी समिति अधिनियम 2002 के तहत पंजीकृत) एक अभिनव, सहकारिता–आधारित मोबिलिटी समाधान है जिसे ड्राइवरों को सशक्त बनाने और जनता को किफायती, विश्वसनीय परिवहन प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। सहकारिता, पारदर्शिता और साझा स्वामित्व के सिद्धांतों पर आधारित, सहकार टैक्सी पारंपरिक राइड–हेलिंग प्लेटफॉर्म का एक जन–केंद्रित विकल्प है। इस परियोजना को राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन.सी.डी.सी.) द्वारा संवर्धित किया जा रहा है और इसे सात प्रमुख संगठनों जैसे इफको,नेफेड, अमूल, कृभको, एनडीडीबी, एनसीईएल और नाबार्ड का समर्थन प्राप्त है।

सहकारिताओं की क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण में एन.सी.डी.सी. की अप्रतिम भूमिका

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम सहकारिताओं की क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण में एक महत्वपूर्ण एवं अप्रतिम भूमिका निभाता है, जिसका प्रमुख माध्यम है – लक्ष्मणराव इनामदार राष्ट्रीय सहकारी अनुसंधान एवं विकास अकादमी (लिनाक)। वर्ष 1985 में स्थापित और 2018 में व्यापक प्राधिकरण के साथ पुनर्गठित इस अकादमी का उद्देश्य सहकारी क्षेत्र के कार्मिकों को उच्च गुणवत्ता वाली प्रशिक्षण, अनुसंधान और परामर्श सेवाएं प्रदान करना है, ताकि सहकारी संस्थाओं के प्रबंधन, संचालन और विकास को सुदृढ़ किया जा सके।

लिनाक के अंतर्गत डेयरी, मत्स्य पालन, कृषि विपणन, महिला सहकारिता, सहकारी बैंकिंग, संगठनात्मक विकास आदि क्षेत्रों में गहन प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित होते हैं। इसके 19 क्षेत्रीय

प्रशिक्षण केंद्र देशभर में प्राथमिक स्तर की सहकारिताओं और उनके कर्मियों को प्रशिक्षण उपलब्ध कराते हैं। अकादमी में आधुनिक वर्चुअल क्लासरूम, वेबिनार और ई–लर्निंग कोर्स जैसी तकनीकी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

लिनाक अंतरराष्ट्रीय संगठनों के साथ समन्वय स्थापित करके सार्क देशों सहित कई देशों के सहकारी बंधुओं को सहकारी शिक्षा और प्रशिक्षण उपलब्ध कराता है। यह केवल प्रशिक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि सहकारी क्षेत्र में अनुसंधान, परामर्श, नवाचार और नीति निर्माण में भी सक्रिय भूमिका निभाता है। इसके प्रशिक्षण क्षेत्रों में प्रबंधन विकास, आईटी कौशल उन्नयन, उद्यमिता संवर्धन और कृषि सहकारी समितियों के लिए विशिष्ट कार्यक्रम शामिल हैं। दिनांक 31.03.2025 तक संचयी रूप से, अकादमी तथा क्षेत्रीय प्रशिक्षण केन्द्रों ने 2,452 प्रशिक्षण कार्यक्रमों में 2,28,548कर्मियों को प्रशिक्षित किया है, जिसमें भारत सरकार द्वारा सहायता प्राप्त राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई) क्षमता विकास परियोजना के तहत आयोजित 150 कार्यक्रम शामिल हैं, जिनमें 4831 कर्मियों ने भाग लिया।

इस प्रकार, लिनाक सहकारिताओं के सभी स्तरों पर क्षमता विकास, व्यवसायिक दक्षता वृद्धि और नवाचार को प्रोत्साहित करने का एक केंद्रीय मंच है, जिससे भारतीय सहकारी क्षेत्र की गुणवत्ता और प्रभावशीलता में निरंतर वृद्धि हो रही है।

भविष्य की दिशा

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन.सी.डी.सी.) ने आने वाले समय के लिए जो दृष्टिकोण तैयार किया है, उसका मुख्य केंद्र बिंदु अपनी कार्यक्षमता, प्रभाव और पहुंच का निरंतर विस्तार करना है। इस विज़न के अंतर्गत निगम का लक्ष्य है कि 3 लाख करोड़ रुपये से अधिक के वार्षिक कारोबार का मुकाम हासिल किया जाए। यह केवल एक आंकड़ा भर नहीं है, बल्कि एक महत्वाकांक्षी सपना है, जो पूरे भारत में सहकारी आंदोलन को नई ऊंचाई प्रदान करने और

सहकारी समितियों को और अधिक सक्षम, सशक्त तथा प्रतिस्पर्धी बनाने का संकल्प दर्शाता है। एन.सी.डी.सी. का यह दृष्टिकोण इसकी दृढ़ प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है—जिसमें वह नवाचार को निरंतर अपनाते हुए, सहकारी संस्थाओं को व्यापक वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने, उच्च–स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करने और क्षमता निर्माण संबंधी पहलों को गति देने के लिए तत्पर है। इन पहलों के माध्यम से सहकारी क्षेत्र को न केवल अधिक समृद्ध बनाया जाएगा, बल्कि उसे टिकाऊ और दीर्घकालिक विकास की दिशा में भी आगे बढ़ाया जाएगा।

इस मिशन को साकार करने में केंद्रीय गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह का मार्गदर्शन अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके नेतृत्व में, एन.सी.डी.सी. "सहकार से समृद्धि" के सिद्धांत को वास्तविक रूप देने के लिए पूर्णतः समर्पित है। यह न केवल सहकारी समितियों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करेगा, बल्कि यह सुनिश्चित करेगा कि वे भारत के सामाजिक और आर्थिक ढांचे का अभिन्न एवं प्रभावशाली हिस्सा बनी रहें। इस प्रकार, एन.सी.डी.सी. का विज़न केवल वर्तमान को बेहतर बनाने तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक ऐसे भविष्य का निर्माण करने की दिशा में अग्रसर है, जिसमें सहकारिता की भावना के माध्यम से पूरे देश में आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक प्रगति की नई कहानी लिखी जाए।

निष्कर्षतः, माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के "सहकार से समृद्धि" के दृष्टिकोण और केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह के नेतृत्व में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम देशभर में सहकारी क्षेत्र को सशक्त बनाने, किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने और एकीकृत सहकारी विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। कृषि विकास, विपणन, प्रसंस्करण तथा क्षेत्रीय विकास में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। आत्मनिर्भर और विकसित भारत के 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में एन.सी.डी.सी. की सक्रिय सहभागिता और प्रभावी पहल निर्णायक योगदान दे रही है।

'त्रिभुवन' सहकारी विश्वविद्यालय, आणंद (गुजरात) – एक सपने का साकार होना

– डॉ. जे.एम. व्यास
कुलपति, 'त्रिभुवन' सहकारी विश्वविद्यालय

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी कहा करते थे भारत की आत्मा उसके गाँव में बसती है। भारत का विकास तभी होगा जब विकास की अनवरत बहती धारा को ग्रामीण क्षेत्र के प्रत्येक हिस्से में पहुंचा दिया जाए। यद्यपि काल के क्रूर हाथों ने उन्हें उनके सपनों को साकार होते देखने नहीं दिया और स्वतन्त्रता प्राप्ति के अगले ही वर्ष वो हमसे बिछुड़ गए, लेकिन भारत के कर्णधारों ने उनके सपने को साकार बनाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी।

भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार – कृषि एवं पशुपालन

अनंत काल से भारत एक कृषि प्रधान समाज रहा है। कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था को किसी देश के पिछड़ेपन का प्रमाण माना जाता है। लेकिन कृषि पर अर्थव्यवस्था की निर्भरता के बावजूद भारत के यशस्वी प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र दामोदर दास मोदी के नेतृत्व में भारत विश्व की चौथी अर्थ व्यवस्था बनने में सफल हुआ है। इतना ही नहीं कोरोना काल की विभीषिका से जूझते हुए भी भारत लगातार 6.5% की वार्षिक दर से अपने विकास की गति को बनाए हुए है। यह भी किसी चमत्कार से कम नहीं है। प्रधान मंत्री श्री मोदी अपने सार्वजनिक भाषणों में एवं आर्थिक मंचो से हमेशा कहते रहते हैं कि आत्म निर्भर भारत कि परिकल्पना गावों के आत्मनिर्भर बने बिना साकार नहीं हो सकती। भारत सरकार का लक्ष्य कृषि क्षेत्र के विकास के साथ गांवों को समृद्ध बनाना है, उनको आर्थिक सशक्तिकरण की ओर ले जाना है। भारत के ऊर्जावान गृह मंत्री एवं प्रथम सहकारिता मंत्री श्री अमित भाई शाह भी मानते हैं कि कृषि तथा कृषि आधारित उद्योगों के विकास से ग्रामीण भारत का सशक्तिकरण होगा, हमारे गाँव जीवंत होंगे और नए–नए अवसरों के केंद्र बनेंगे।

भारत की आर्थिक प्रगति में सहकारी क्षेत्र की भूमिका

आत्मनिर्भरता की दिशा में भारत को आगे बढ़ाने में भारत की 8 लाख के लगभग सहकारी समितियों का महती योगदान है। भारत का गुजरात राज्य समस्त भारत में सहकारी आंदोलन का प्रमुख केंद्र बन कर उभरा है। श्वेत क्रान्ति का जनक भी यही राज्य है जिसके बल पर भारत आज विश्व में दूध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व का सबसे अग्रणी देश बन चुका है। महात्मा गांधी, सरदार बल्लभ भाई पटेल, त्रिभुवन दास पटेल तथा माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी एवं ऊर्जावान गृहमंत्री तथा सहकारिता मंत्री श्री अमित भाई शाह भी संयोगवश इसी गुजरात राज्य से हैं। दोनों का न केवल गुजरात बल्कि समस्त भारत के सहकारी क्षेत्र के उतरोत्तर विकास पर पूरा ध्यान है। भारत के प्रत्येक गाँव में कोई न कोई सहकारी समिति कार्यरत है। निर्धन एवं वंचित वर्ग के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में इन सहकारी समितियों का भरपूर योगदान है।

भारतीय ग्रामीण प्रबंध संस्थान (इरमा)– स्थापना की पृष्ठभूमि

गुजरात के आणंद जिले में स्थित भारतीय ग्रामीण विकास संस्थान (इरमा) अपनी स्थापना के वर्ष (1979) से ही कृषि क्षेत्र को सशक्त बनाने हेतु युवा कृषि प्रबन्धकों की नयी–नयी पौध तैयार कर देश को सौंपता जा रहा है। इरमा को एक राष्ट्रीय महत्व के संस्थान के रूप में एक विश्वविद्यालय का स्वरूप प्रदान करने का श्रेय भारत के दूरदर्शी यशस्वी प्रधानमंत्री एवं बेहद ऊर्जावान सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह को जाता है। उनकी परिकल्पना का मूर्त रूप देश को इस सहकारी विश्वविद्यालय के रूप में 5 जुलाई 2025 को देखने को मिला। सहकारिता जगत की महान विभूति तथा विश्व प्रसिद्ध अमूल ब्रांड के जनक श्री त्रिभुवनदास पटेल के नाम पर "त्रिभुवन" सहकारी विश्वविद्यालय का नामकरण हुआ। यह एक सपने के साकार होने के समान है।

भारतीय ग्रामीण विकास संस्थान (इरमा) भारत के गुजरात के आणंद में स्थित एक प्रमुख प्रबंधन संस्थान है, जिसका उद्देश्य भारतीय आबादी के वंचित वर्ग की सेवा के लिए पेशेवर प्रबंधक तैयार करना है। इसकी स्थापना 1979 में श्वेत क्रांति के जनक स्वर्गीय डॉ. वर्गीज कुरियन ने की थी। ऑपरेशन फ्लड कार्यक्रम के दूसरे चरण के तहत ग्रामीण विकास के उद्देश्य से प्रबंधन की शिक्षा और परामर्श केंद्र के रूप में की गई थी। डॉ. वर्गीज़ कुरियन के नेतृत्व में इरमा ने ग्रामीण उत्पादक संगठनों के प्रबंधन को पेशेवर बनाने और ग्रामीण प्रबंधन के क्षेत्र में ज्ञान का एक भंडार विकसित करने के लिए अपने कार्यक्षेत्र का तेज़ी से विस्तार किया। आईआरएमए अर्थात इरमा छात्रों में सर्वाधिक लोकप्रिय पाठ्यक्रम पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा इन मैनेजमेंट (रूरल मैनेजमेंट) के माध्यम से पेशेवर प्रबंधन की शिक्षा देता है ताकि भारत के ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग के लोगों के सतत और न्यायसंगत सामाजिक–आर्थिक विकास को बढ़ावा मिल सके, जो यहाँ से स्नातक होकर निकले तथा देश विदेश में फैले इसके 3500 से अधिक पूर्व छात्रों के योगदान से स्पष्ट है।

त्रिभुवन सहकारी विश्वविद्यालय – भविष्य की योजनाएं

05 जुलाई 2025 को आणंद में 'त्रिभुवन' सहकारी विश्वविद्यालय की आधारशिला रखते हुए गृह एवं सहकारिता मंत्री माननीय श्री अमित शाह जी ने कहा था "माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी की परिकल्पना के अनुसार यह विश्वविद्यालय सहकारी क्षेत्र में प्रशिक्षित जनशक्ति की आवश्यकता को पूरा करेगा, पारदर्शिता लाएगा, नवाचार को बढ़ावा देगा, नीतियां तैयार करेगा और लेखांकन, विपणन एवं सहकारी मूल्यों जैसे क्षेत्रों में तकनीकी शिक्षा प्रदान करेगा जिससे गरीबों की सेवा की भावना के साथ साथ विशेषज्ञता भी सुनिश्चित होगी।" अपने अभिभाषण में श्री शाह ने यह भी कहा कि 'त्रिभुवन' सहकारी विश्वविद्यालय का नाम स्वर्गीय श्री त्रिभुवनदास पटेल के नाम पर रखा गया है जिन्होंने सरदार पटेल के मार्गदर्शन में 1946 में खेड़ा जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ की स्थापना करके एक नए विचार का बीजारोपण किया और किसानों को सशक्त बनाने तथा आंदोलन को प्रेरित करने का मार्ग प्रशस्त किया जिसमे आज 36 लाख महिलाएं 80,000 करोड़ का व्यवसाय कर रही हैं। उनकी दूरदर्शिता ने सहकारी मॉडल को सफल बनाया और स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के सहयोग से एन.डी.डी.बी. का गठन हुआ जिसने एक तहसील के प्रयास को एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन में बदल दिया। अब यह विश्वविद्यालय सहकार से समृद्धि के दृष्टिकोण का केंद्र बनेगा।''

सहकारिता के पुरोधाओं का मानना है कि ग्रामीण समृद्धि मात्र सुविधाएं बढ़ा देने से नहीं बल्कि संगठन, साक्षरता और कुशल प्रबंधन से ग्रामीण जनता को मिलेगी। भारत वर्ष के विकास का मॉडल भारत की धरा से ही निकलेगा और यह मॉडल हमारी अपनी सभ्यता, संस्कृति और पारंपरिक शिक्षा में निहित है। विश्वविद्यालय छात्रों में भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम प्रज्ज्वलित करेगा जिससे उनकी शिक्षा मात्र वृति अथवा आजीविका कमाने तक सीमित नहीं रहेगी। वो अपने ज्ञान एवं कौशल को ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए समर्पित करेंगे जो सच्चे अर्थों में भारत की सेवा होगी। ये छात्र ग्रामीण क्षेत्र में पेशेवर तरीके से सहकारी दूध समितियों, महिला स्वयं सहायता समूहों का गठन, प्रबंधन तथा विपणन को और अधिक प्रभावी बनने में सहायक सिद्ध होंगे। भारतीय यूपीआई आज दुनिया में चर्चा का विषय है। ग्रामीण क्षेत्र में उसे घर–घर तथा जन–जन तक पहुंचाने और सीखाने का कार्य इस विश्वविद्यालय के छात्र कुशलता से कर सकेंगे। सहकार से समृद्धि अथवा दूसरे शब्दों में सहकारिता के माध्यम से समृद्धि द्वारा प्रेरित यह विश्वविद्यालय जमीनी स्तर के चिकित्सकों, उभरते पेशेवरों और वैश्विक विद्वानों के समान रूप से डिज़ाइन किए गए पाठ्यक्रमों से लेकर दूरस्थ क्षेत्र के छात्रों के लिए ऑनलाइन पाठ्यक्रम भी प्रदान करेगा। मानिकीकरण,नीति अनुसंधान का समर्थन करने और सामुदायिक नेतृत्व में नवाचार को बढ़ावा देने के लिए एक नोडल एजेंसी के रूप में भी कार्य करेगा।

भारतीय ग्रामीण प्रबंध संस्थान (इरमा) – वर्तमान के आइने में

आज इरमा "त्रिभुवन" सहकारी विश्वविद्यालय के घटक स्कूलों में से एक प्रमुख बिजनेस स्कूल है। विश्वविद्यालय अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार इरमा की स्वायत्त पहचान "त्रिभुवन" सहकारी विश्वविद्यालय के संस्थागत ढांचे के भीतर संरक्षित है। इरमा अपनी प्रशासनिक और शैक्षणिक स्वायत्तता को जारी रखते हुए, केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट ढांचे के भीतर कार्य करता है। इरमा का अपना कार्यकारी बोर्ड और एक निदेशक है। इरमा के सभी कर्मचारी "त्रिभुवन" सहकारी विश्वविद्यालय के कर्मचारी बन गए हैं। उनकी सेवा शर्तों में कोई बदलाव नहीं किया गया है। इरमा में चल रहे शैक्षणिक कार्यक्रमों और पाठ्यक्रमों में कोई भी संशोधन केवल इसके कार्यकारी बोर्ड की सहमति से ही किया जा सकता है। इरमा को ग्रामीण प्रबंधन के क्षेत्र में उत्कृष्टता केंद्र के रूप में एक सशक्त पहचान मिली है।

इरमा अब "त्रिभुवन" सहकारी विश्वविद्यालय का हिस्सा है। इसका वार्षिक दीक्षांत समारोह भारतीय संस्कृति और परंपराओं पर बल देने के लिए प्रख्यात है। स्नातक के सभी उत्तीर्ण छात्र–छात्राएँ पारंपरिक रूप से कुर्ता और पायजामा पहनते हैं और मुख्य अतिथि से अपने डिग्री प्रमाण पत्र के साथ एक अंगवस्त्रम प्राप्त करते हैं जो सादगी और भारत की सांस्कृतिक विरासत के प्रति संस्थान की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। वर्ष 2022 में भारत सरकार के माननीय गृह मंत्री और सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थिति से दीक्षांत समारोह शोभायमान हुआ। ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आणंद (इरमा) के 41वें दीक्षांत समारोह को संबोधित करते हुए गृह मंत्री श्री अमित शाह ने कहा, **"आत्मनिर्भर भारत की स्थापना का सपना तभी साकार होगा जब भारत के गांव आत्मनिर्भर होंगे।"**

सहकार से समृद्धि : आगे की राह

भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का सपना है "आत्म निर्भर भारत।" इस सपने को पूरा करने में सहकारी क्षेत्र की महती भूमिका होने वाली है। जब हमारे गाँव अपना उत्पादन, विपणन तथा अन्य व्यावसायिक गतिविधियां चलाएंगे और खेत से काँटा, बीज से बाजार और सहकारीता से निगम के मॉडल पर चलेंगे तो सहकार से समृद्धि का मार्ग प्रशस्त होगा। प्रधानमंत्री जी की परिकल्पना के अनुसार त्रिभुवन सहकारी विश्वविद्यालय सहकारी एवं ग्रामीण क्षेत्र के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के साथ नवाचार, कृषि क्षेत्र में नए शोध, कुशल लेखांकन, उत्पादों के मूल्य संवर्धन कि दिशा में अपने छात्र, संकाय के सदस्यों एवं प्रबंधन के विशेषज्ञों के बल पर श्री नरेंद्र मोदी जी एवं श्री अमित शाह जी के आत्म निर्भर भारत के सपने को साकार करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ेगा।

उपसंहार

एनडीडीबी द्वारा वित्त पोषित सहकारी समितियों से शुरुआत करते हुए इरमा ने ग्रामीण जीवन के मुद्दों जैसे प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन (विशेषकर जल और वन), ग्रामीण स्वास्थ्य, स्थानीय शासन संस्थान, आजीविका, प्रवासन, सूक्ष्म वित्त और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आईटी की तैनाती से जुड़े विकास संगठनों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र तक पहुंच बनाई है। स्थापना काल से ही इरमा का ध्यान गैर–सरकारी संगठनों और उन संगठनों में प्रबंधन क्षमताओं को मजबूत करने पर रहा है जो (जैसे सहकारिताएं) सेवाओं के उपयोगकर्ताओं द्वारा नियंत्रित होते हैं। इरमा का दावा है कि प्रबंधन के एक अनूठे क्षेत्र के प्रति इसकी ब्रांडिंग और प्रतिबद्धता इसे भारत के प्रबंधन संस्थानों में एक अलग ही स्वरूप प्रदान करती है। अपने पूर्ववर्ती भारतीय ग्रामीण प्रबंध संस्थान की थाती को सहेजने एवं भारतीय संस्कृति के मशाल को प्रज्वलित रखने का उत्तरदायित्व अब भारत के प्रथम और एकमात्र सहकारी विश्वविद्यालय के कंधों पर है। खेड़ा के धूल भरे मैदानों में जो जनक्रान्ति एक साधारण सहकारी दूध मंडली के रूप में शुरू हुई उसने अब एक राष्ट्रीय संस्था का रूप ले लिया है। ग्रामीण स्तर से प्रारम्भ हुई इस यात्रा का एक विश्वविद्यालय के निर्माण तक पहुंचना, भारत के समावेशी समाज और सर्वोच्च नेतृत्व की सोंच – सबका साथ, सबका विश्वास और सबके प्रयास का ज्वलंत स्वरूप है।

सहकार से समृद्धि की ओर: कृभको की भूमिका और अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष 2025 का महत्त्व

– डॉ. चंद्रपाल सिंह यादव,
अध्यक्ष, कृभको एवं आईसीए–एपी

संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 2025 को 'अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष' घोषित किया जाना, सहकारिता आंदोलन की वैश्विक मान्यता और उसकी सामाजिक–आर्थिक उपयोगिता को रेखांकित करता है। इस घोषणा का उद्देश्य विश्वभर में सहकारी संस्थाओं की भूमिका को सराहना और उनके योगदान को विस्तार देना है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में सहकारिता केवल एक आर्थिक मॉडल नहीं, बल्कि एक सामाजिक आंदोलन है, जिसने ग्रामीण भारत की संरचना और संभावनाओं को सशक्त किया है।

भारत में सहकारी आंदोलन का इतिहास

भारतीय सहकारी आंदोलन की शुरुआत 1904 में 'को–ऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटीज़ एक्ट' से हुई थी, जिसका उद्देश्य किसानों को साहूकारों के चंगुल से मुक्त कराना था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से सहकारी संस्थाओं को सरकारी सहयोग मिला और उन्होंने ग्रामीण विकास, कृषि, डेयरी, आवास, विपणन और बैंकिंग जैसे क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी समितियों की भूमिका

भारत में लगभग 8 लाख से अधिक सहकारी समितियां कार्यरत हैं जो विभिन्न प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलग्न हैं। इनका योगदान कृषि ऋण, फसल बीमा, वितरण प्रणाली, डेयरी उद्योग, चीनी मिलें, उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति और बीज वितरण जैसे क्षेत्रों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। सहकारी बैंकों और समितियों ने वित्तीय समावेशन को गति दी है, विशेष रूप से उन ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में जहां परम्परागत बैंकिंग पहुंच नहीं बना पाई थी।

'नवभारत' के निर्माण में सहकारिता की भूमिका

प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में 'नवभारत' के निर्माण का लक्ष्य एक समावेशी, आत्मनिर्भर और तकनीक–सक्षम भारत का निर्माण करना है। इसमें सहकारी संस्थाएं आत्मनिर्भर भारत अभियान का एक अभिन्न हिस्सा बन रही हैं।

सहकारिता मंत्रालय की स्थापना और श्री अमित शाह जी जैसे अनुभवी नेतृत्व की अगुवाई में सहकारी क्षेत्र को नई दिशा मिली है। 'सहकार से समृद्धि' का मंत्र अब नीति निर्धारण का मूल आधार बन गया है। खाद्य सुरक्षा, किसानों की आय में वृद्धि, डिजिटल समावेशन, महिला सशक्तिकरण और रोजगार सृजन जैसे क्षेत्रों में सहकारिता की भूमिका लगातार सुदृढ़ हो रही है।

कृभकोः सहकारी क्षेत्र में उत्कृष्टता का प्रतीक (एक समग्र कृषि सेवा प्रदाता की दिशा में)

कृषक भारती कोऑपरेटिव लिमिटेड (कृभको) की स्थापना वर्ष 1980 में भारत सरकार के सहयोग से एक बहु–राज्य सहकारी संस्था के रूप में की गई थी। इसका मूल उद्देश्य किसानों की आय में वृद्धि करना, कृषि उत्पादकता को बढ़ावा देना और सहकारिता के सिद्धांतों को ग्रामीण भारत में सशक्त रूप से लागू करना रहा है।

आज कृभको केवल एक उर्वरक उत्पादक संस्था नहीं रही, बल्कि यह भारत के सहकारी क्षेत्र की अग्रणी संस्था के रूप में "समग्र कृषि सेवा प्रदाता" की भूमिका निभा रही है। उर्वरकों से आगे बढ़कर कृभको जैविक उत्पाद, बीज, इथेनॉल, कृषि व्यापार, नवीकरणीय ऊर्जा तथा अंतरराष्ट्रीय निर्यात जैसे अनेक क्षेत्रों में सक्रिय है।

प्रमुख सहायक संस्थाएं एवं विस्तार गतिविधियाँ (विविधता में सहकारिता की शक्ति)

1. कृभको ग्रीन एनर्जी प्राईवेट लिमिटेड (KGEPL)

कृभको की 100% स्वामित्व वाली विशेष प्रयोजन इकाई (SPV) "कृभको ग्रीन एनर्जी प्राइवेट

लिमिटेड" की स्थापना भारत सरकार के 20% बायो–इथेनॉल मिश्रण लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए की गई है। इस इकाई द्वारा गुजरात (हजीरा) और आंध्र प्रदेश (नेल्लोर) में दो बायो–इथेनॉल संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं, जो किसानों को गन्ना, मक्का जैसी फसलों के माध्यम से आयवर्धन का अवसर प्रदान करेंगे। इन इकाइयों के कार्यशील होने पर किसानों को फसलों द्वारा अतिरिक्त आय भी प्राप्त होगी। तेल विपणन कंपनियों (OMCs) के साथ 10 वर्षों के दीर्घकालिक खरीद समझौते भी संपन्न किए गए हैं, जिससे तेल आयात कम होगा और विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी। दोनों संयंत्रों का निर्माण कार्य प्रगति पर है और शीघ्र ही उत्पादन शुरू होने की संभावना है।

2. कृभको फर्टिलाइजर्स लिमिटेड (KFL)

पूर्व में "कृभको श्याम फर्टिलाइजर्स लिमिटेड" के नाम से जानी जाने वाली यह इकाई आज कृभको की पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी है। उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर में स्थित इस इकाई की वार्षिक उत्पादन क्षमता 5.02 लाख टन अमोनिया और 8.64 लाख टन यूरिया है। संयंत्र प्राकृतिक गैस पर आधारित है और HVJ गैस पाइपलाइन से गैस प्राप्त करता है। इस इकाई द्वारा उत्पादित उर्वरकों का विपणन कृभको द्वारा ही किया जाता है।

3. कृभको एग्री बिजनेस लिमिटेड (KRIBHCO Agri Business Limited)

वर्ष 2022 में स्थापित यह कंपनी कृभको की वैश्विक कृषि व्यापार रणनीति का हिस्सा है। इसका उद्देश्य कृषि उत्पादों का निर्यात और व्यापार कर कृभको के कार्यक्षेत्र को विस्तार देना है। वित्तीय वर्ष 2024–25 में KABL ने 1752 करोड़ रुपये का व्यापार निर्यात द्वारा किया, जिसमें चावल, मक्का, मिर्च, मखाना और दालें शामिल हैं। उत्पादों का निर्यात अफ्रीका, एशिया और खाड़ी देशों सहित 18 से अधिक देशों में किया गया।

कृभको के संयुक्त उपक्रमः

ओमान इंडिया फर्टिलाइज़र कंपनी (OMIFCO)

ओमान और भारत सरकार के बीच सहयोग से स्थापित यह उर्वरक संयंत्र ओमान के सूर औद्योगिक क्षेत्र में स्थित है। इसमें कृभको और इफको की 25–25% हिस्सेदारी है, जबकि 50% हिस्सेदारी ओमान ऑयल कंपनी (OQ) के पास है। इस संयंत्र की अमोनिया और यूरिया की प्रतिदिन उत्पादन क्षमता क्रमशः 3500 मीट्रिक टन एवं 5060 मीट्रिक टन है। इस संयंत्र द्वारा उत्पादित यूरिया का विपणन कृभको एवं इफको द्वारा भारतवर्ष में किया जाता

है, जिससे देश में उचित मूल्य पर उर्वरक की उपलब्धता सुनिश्चित होती है और आयात व्यय भी कम होता है।

कृभको की सहायक कम्पनियाँ और संयुक्त उपक्रम न केवल संस्था की कार्यक्षमता को बहुआयामी बनाते हैं, बल्कि सहकारिता की शक्ति को आधुनिक कृषि, ऊर्जा और व्यापार क्षेत्रों में प्रभावी रूप से स्थापित भी करते हैं। कृभको निरन्तर नवाचार और विस्तार के साथ "नए भारत" की सहकारी नींव को मजबूत कर रहा है।

उत्पाद विविधता और नवाचार

कृभको पारम्पिक उर्वरकों जैसे यूरिया, DAP, NPK के साथ–साथ विशेष पोषक उत्पादों का उत्पादन और विपणन करती है। हाल ही में कृभको ने निम्नलिखित प्रमुख उत्पाद बाजार में उतारे हैं:

- Rhizosuper: यह उन्नत उत्पाद मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और पौधों की जड़ों को मजबूत बनाने में सहायक है।
- Zinc EDTA 12%: यह सूक्ष्म पोषक तत्व आधारित उत्पाद है जो फसलों में जिंक की कमी को दूर करता है और पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है।
- Liquid Biofertilizers: कृभको द्वारा उत्पादित जैविक तरल उर्वरक पर्यावरण–अनुकूल हैं जो मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखते हैं।
- Natural Potash, KRIBHCO Compost और Sivarika (Seaweed): ये सभी उत्पाद प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं और टिकाऊ एवं प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देते हैं।

कृभको 'Cooperation Among Cooperatives' सिद्धांत का परिपालन करते हुए भारत सरकार द्वारा बनाई गयी नयी सहकारी समितियों का मुख्य प्रवर्तक है। जो निम्नवत् हैं:

भारतीय बीज सहकारी समिति लिमिटेड (BBSSL)

भूमिका: बीज गुणवत्ता से सुनिश्चित होती है कृषि समृद्धि

बीज, किसी भी फसल की सफलता की मूलभूत इकाई होता है। बीज जितना अधिक शुद्ध, प्रमाणित और उपयुक्त जलवायु के अनुरूप होता है, कृषि उत्पादन उतना ही बेहतर होता है। इसी महत्त्वपूर्ण कड़ी को सशक्त बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा प्रवर्तित सहकारी समिति **'भारतीय बीज सहकारी समिति लिमिटेड'** की स्थापना में कृभको ने प्रमुख भूमिका निभाई है।

कृभको BBSSL की प्रमुख प्रवर्तक (Chief Promoter) संस्था है। इस संस्था का उद्देश्य है किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीजों की सहज उपलब्धता सुनिश्चित कराना है, जिससे वे उन्नत तकनीक के साथ आत्मनिर्भर खेती की ओर अग्रसर हो सकें।

स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुरूप बीज उत्पादन में भागीदार बनाकर 'बीज आत्मनिर्भरता' की दिशा में कार्य किया जाता है। समिति प्रमाणन मानकों के अनुरूप परीक्षण और मूल्यांकन के बाद उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित करती है। किसानों को प्रशिक्षित कर उन्हें बीज उत्पादन प्रक्रिया से जोड़ा जाता है, जिससे उनकी आमदनी में वृद्धि हो सके। साथ ही, बीजों को वैज्ञानिक विधियों से साफ, सुखाकर और प्रमाणित रूप से पैक कर भंडारित किया जाता है, ताकि उनकी गुणवत्ता और अंकुरण क्षमता बनी रहे।

BBSSL का संचालन **सहकारिता आधारित मॉडल** पर किया जाता है, जिसमें निर्णय प्रक्रिया और लाभ वितरण में किसानों की सीधी भागीदारी होती है। इससे बीज उत्पादन की पारदर्शिता बढ़ती है और किसान संगठनात्मक रूप से भी सशक्त बनते हैं।

कृभको और BBSSL का लक्ष्य है कि देश के हर किसान तक प्रमाणित बीजों की पहुंच बनाई जाए और भारत को **'बीज उत्पादन में वैश्विक शक्ति'** के रूप में स्थापित किया जाए। साथ ही यह पहल प्रधानमंत्री के 'आत्मनिर्भर भारत' और 'वोकल फॉर लोकल' अभियानों को भी सशक्त आधार प्रदान करती है।

Farming-as-a-Service (FAS): खेत से ज्ञान तक का सेतु

कृभको की Farming-as-a-Service (FAS) पहल, किसानों के समग्र विकास के लिए एक प्रभावशाली और व्यापक कार्यक्रम है, जो तकनीकी जानकारी, जागरूकता और सेवाओं को गाँव–गाँव तक पहुंचाने के उद्देश्य से संचालित किया गया है।

वर्ष 1984 से 2025 तक, कृभको द्वारा विभिन्न प्रकार की कृषि, सहकारिता और ग्रामीण कल्याण आधारित गतिविधियों के माध्यम से किसानों को लाभ पहुंचाया गया।

FAS कार्यक्रमों के प्रमुख आँकड़े (1984–2025):

गतिविधि	संख्या	उपशीर्षक
आयोजित कार्यक्रमों की कुल संख्या	1,29,792	देशभर में आयोजित समग्र कार्यक्रमों की संख्या जो सेवा, प्रशिक्षण एवं जागरूकता पर केंद्रित थे।
मृदा नमूनों का परीक्षण (मुख्य पोषक तत्व)	4.70 लाख	नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश जैसे आवश्यक पोषक तत्वों की जांच, जिससे किसानों को उर्वरकों के संतुलित उपयोग में मदद मिली।
मृदा नमूनों का परीक्षण (सूक्ष्म पोषक तत्व)	76,840	जिंक, आयरन, बोरॉन आदि सूक्ष्म पोषक तत्वों की जांच के माध्यम से फसलों की गुणवत्ता बढ़ाने में सहयोग।
फसल प्रदर्शन (Crop Demonstrations)	8,893	खेतों पर उन्नत बीजों और तकनीकों के प्रदर्शन से किसानों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किया गया।
फील्ड डे (Field Days)	4,945	खेत में आयोजित कार्यक्रम जिनमें किसान फसल की वृद्धि, प्रदर्शन और तकनीकी सलाह को प्रत्यक्ष देख सके।
किसान बैठकें (Farmers Meetings)	18,423	गाँव स्तर पर आयोजित सूचनात्मक बैठकें, जहां कृषि तकनीक, उत्पाद और सरकारी योजनाओं की जानकारी दी गई।
तकनीकी वाल पेंटिंग्स	14,359	दीवारों पर चित्रात्मक रूप में कृषि तकनीकों और जागरूकता संदेशों का प्रचार–प्रसार।
सहकारी समितियां अंगीकृत	3,903	ग्रामीण सहकारी समितियों को तकनीकी और प्रबंधकीय समर्थन प्रदान करना।
सहकारी सम्मेलन	7,538	सहकारी क्षेत्र के प्रतिनिधियों के साथ संवाद, प्रशिक्षण और नीति विमर्श के उद्देश्य से आयोजित सम्मेलन।
समूह चर्चा (Group Discussions)	7,471	किसानों के बीच विचार–विमर्श के मंच, जहां वे अपने अनुभव साझा कर समस्याओं का सामूहिक समाधान खोज सके।
मानव स्वास्थ्य अभियान	1,156	ग्रामीण समुदाय में स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता और निःशुल्क चिकित्सा शिविरों का आयोजन।
पशु स्वास्थ्य अभियान	806	किसानों के पशुधन के स्वास्थ्य को बनाए रखने हेतु चिकित्सा सेवाएं और सलाह।

ग्रामीण विद्यालयों को शिक्षा सहायता	174	ग्रामीण क्षेत्रों के स्कूलों को बुनियादी सहायता जैसे स्टेशनरी, फर्नीचर, और शिक्षण सामग्री प्रदान करना।
पेयजल सुविधा परियोजनाएं	596	गाँवों में स्वच्छ और सुरक्षित पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
भंडारण सह सामुदायिक केंद्र	200	कृषि उपज के भंडारण व ग्रामीण समुदाय के लिए बहुउद्देश्यीय सभा स्थलों का निर्माण।
क्लस्टर/गाँव अंगीकरण	1,764	एकीकृत विकास के लिए चयनित गाँवों में कृषि, शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं का कार्यान्वयन।
तकनीकी साहित्य वितरण	2.04 करोड़ प्रतियाँ	सरल भाषा में कृषि विषयों पर पुस्तिकाएँ, फोल्डर, ब्रोशर आदि वितरित कर जागरूकता बढ़ाई गई।

लाभार्थी किसान:

कृभको की सेवाओं और कार्यक्रमों से प्रत्यक्ष रूप से 1.67 करोड़ किसान लाभान्वित हुए और किसानों की फसल उत्पादकता एवं आय में वृद्धि हुई।

कृषक भारती सेवा केंद्र (KBSKs): किसानों की सेवा का समर्पित माध्यम

कृभको, एक किसान–आधारित सहकारी संस्था होने के नाते, किसानों के जीवन और आजीविका को बेहतर बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है। किसानों के साथ सीधा संवाद स्थापित करने और उन्हें एक ही स्थान पर बहु–आयामी सेवाएं उपलब्ध कराने के उद्देश्य से, कृभको ने वर्ष 1984 में **"कृषक भारती सेवा केंद्र"** की स्थापना की। यह पहल उस समय की दूरदर्शी सोच का परिणाम थी, जब सहकारी क्षेत्र में सेवा–आधारित विक्रय मॉडल की आवश्यकता महसूस की गई थी।

KBSKs का ढांचा **"सेल्स और सर्विस"** की दोहरी अवधारणा पर आधारित है। ये केंद्र कृषि सेवा केंद्र की परिकल्पना को साकार करते हैं, जहां किसानों को न केवल कृभको के उत्पादों की उपलब्धता सुनिश्चित होती है, बल्कि उन्हें वैज्ञानिक जानकारी, तकनीकी परामर्श और उन्नत कृषि तकनीकों से भी जोड़ा जाता है।

इन केंद्रों के माध्यम से किसानों को निम्नलिखित सेवाएं उपलब्ध कराई जाती हैं:

- उर्वरकों की समय पर और उचित मूल्य पर उपलब्धता।
- उत्पादों के उपयोग की विधियों पर तकनीकी मार्गदर्शन।
- मृदा परीक्षण, जल परीक्षण तथा खेत की विशेष आवश्यकताओं के अनुसार सुझाव।

- मौसम की जानकारी, कीट नियंत्रण तकनीक और फसल सुरक्षा उपाय।
- फसल विविधीकरण, जैविक खेती और सतत कृषि पद्धतियों की जानकारी।
- कृभको के जैविक और पर्यावरण–अनुकूल उत्पादों का प्रदर्शन और प्रचार।

इन केंद्रों के माध्यम से कृभको किसानों को न केवल कृषि–उत्पादन से जुड़ी आवश्यकताओं में सहयोग करता है, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर और तकनीकी रूप से सशक्त बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्तमान में कृभको देशभर में 67 कृषक भारती सेवा केंद्रों का संचालन कर रहा है, जिनकी राज्यवार संख्या इस प्रकार है: उत्तर प्रदेश (42 केंद्र), हरियाणा (16 केंद्र), पंजाब (5 केंद्र), राजस्थान (1 केंद्र), मध्य प्रदेश (3 केंद्र)

ये केंद्र ग्रामीण भारत की रीढ़ किसान समुदाय को समर्पित सेवा के मजबूत स्तंभ बन चुके हैं। KBSKs न केवल एक वितरण केंद्र हैं, बल्कि वे कृभको की "किसान पहले" नीति के व्यावहारिक उदाहरण हैं, जहां सेवा को व्यवसाय से ऊपर रखा गया है। कृभको की यह पहल, सहकारिता की भावना को जमीनी स्तर तक पहुंचाने और किसानोन्मुखी सेवाओं को सुलभ एवं प्रभावशाली बनाने की दिशा में एक अनुकरणीय मॉडल है, जो अन्य संस्थानों के लिए भी प्रेरणा का स्रोत है।

डिजिटल और सूचना माध्यमों से सशक्तीकरण

कृभको ने बदलते समय के साथ डिजिटल तकनीकों को अपनाकर किसानों से संवाद, सूचना–वितरण और प्रशिक्षण के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। संस्था का उद्देश्य केवल उत्पादों का प्रचार नहीं, बल्कि किसानों को सही, सटीक और समयबद्ध जानकारी प्रदान करना भी है, जिससे वे तकनीकी रूप से सशक्त और जागरूक बन सकें।

प्रमुख माध्यम:

- **मासिक न्यूज़लेटर 'कृषक सारथी'** – कृभको द्वारा प्रकाशित यह द्विभाषीय पत्रिका (हिंदी और अंग्रेज़ी) अब तेलुगु, कन्नड़ और गुजराती में भी उपलब्ध है। इसमें सहकारिता, उर्वरक एवं कृषि मंत्रालय द्वारा महीने में किये गये निर्णय एवं कार्यक्रम, कृषि संबंधित लेख, किसानों की कहानियाँ, तकनीकी जानकारी और उपयोगी सुझाव प्रकाशित किए जाते हैं।

- **अर्द्धवार्षिक 'KRIBHCO News'** – कृभको की गतिविधियों, कार्यक्रमों और उपलब्धियों को समेटे हुए एक व्यापक समाचार पत्र, जो संगठन के अंदरूनी कार्यों की पारदर्शिता और जानकारी को दर्शाता है।

- **सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स** – कृभको फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर (X), यूट्यूब और व्हाट्सएप चैनल पर अपनी सक्रिय उपस्थिति के माध्यम से लाखों किसानों से जुड़ा हुआ है। यहाँ पर नियमित रूप से जानकारीपरक, प्रेरणादायक और संवादात्मक सामग्री साझा की जाती है।

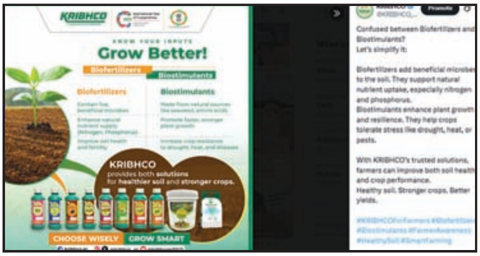

- **वीडियो और ऑडियो कंटेंट** – कृभको के विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई शैक्षिक वीडियो, ऑडियो संदेश, किसान अनुभव आधारित कहानियाँ और कार्यक्रमों की झलकियाँ, किसानों को जानकारी देने का सशक्त माध्यम बन चुकी हैं।

कृभको की डिजिटल नीति में न केवल अपनी संस्थागत गतिविधियों को शामिल किया जाता है, बल्कि यह **सहकारिता मंत्रालय, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय** और **उर्वरक विभाग** से संबंधित महत्वपूर्ण समाचार, योजनाओं और घोषणाओं को भी नियमित रूप से किसानों तक पहुंचाने का कार्य करती है। इससे किसानों को समग्र सरकारी नीतियों, योजनाओं, और सहकारिता क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों की जानकारी एक ही मंच पर सरल भाषा में उपलब्ध हो पाती है।

यह समन्वित दृष्टिकोण कृभको को केवल एक उर्वरक संस्था से आगे बढ़ाकर एक "कृषि ज्ञान और सूचना केंद्र" के रूप में स्थापित करता है, जो किसानों की हर आवश्यकता को डिजिटल रूप से पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध है।

पुरस्कार एवं सम्मान

कृभको को राष्ट्रीय और संस्थागत स्तर पर कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है, जो न केवल संस्था की कार्यक्षमता, नवाचार और सतत विकास के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं, बल्कि भारतीय सहकारिता क्षेत्र में इसकी अग्रणी भूमिका को भी रेखांकित करते हैं।

FAI (Fertilizer Association of India) पुरस्कार (2020–2024):

कृभको को FAI द्वारा विभिन्न श्रेणियों में उल्लेखनीय योगदान के लिए निम्नलिखित पुरस्कार प्रदान किए गए हैं:

- **FAI Award 2024** – "अपनी मिट्टी, अपना पानी, अपना भविष्य" पर आधारित प्रभावशाली वीडियो फिल्म के लिए।
- **FAI Award 2024** – जैविक खाद, कंपोस्ट और बायोफर्टिलाइज़र के प्रभावशाली प्रचार–प्रसार के लिए।
- **FAI Runner-Up Award** – नाइट्रोजन संयंत्रों में पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रबंधन के लिए।
- **FAI Award - Ammonia Compressor Turbine** में इलेक्ट्रॉनिक गवर्नर के स्वदेशी और इनहाउस विकास के लिए।
- **FAI Award - "Inspection and Maintenance of Rotating Machinery"** विषय पर प्रस्तुत श्रेष्ठ तकनीकी लेख के लिए।
- **FAI Special Award - "More Crop per Drop"** अभियान पर आधारित प्रेरणादायक फिल्म निर्माण के लिए।

PRSI (Public Relations Society of India) राष्ट्रीय पुरस्कार (2024):

- **श्रेष्ठ हिंदी न्यूज़लेटर पुरस्कार** – 'कृषक सारथी' को देश के सर्वोत्तम हिंदी समाचारपत्र के रूप में प्रथम पुरस्कार।
- **श्रेष्ठ संगठनात्मक प्रयास पुरस्कार** – आत्मनिर्भर भारत विषय पर कृभको की पहल को द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

अन्य प्रमुख पुरस्कार:

- **Green Rating Project Award (CSE) -** पर्यावरणीय उत्कृष्टता के लिए केंद्र सरकार द्वारा सम्मानित, जो उद्योगों में हरित प्रबंधन के मापदंडों पर कृभको की मजबूती को दर्शाता है।

इन पुरस्कारों की प्राप्ति कृभको की व्यावसायिक उत्कृष्टता, पर्यावरणीय प्रतिबद्धता, तकनीकी नवाचार और किसान–केंद्रित दृष्टिकोण का प्रमाण है। यह उपलब्धियां संस्था को न केवल राष्ट्रीय

स्तर पर बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी प्रतिष्ठा प्रदान करती हैं।

सहकारी सशक्तिकरण के लिए भविष्य की दिशा

- डिजिटल सहकारिता प्लेटफॉर्म का निर्माण जिससे सभी सहकारी संस्थाएं एक साझा मंच पर कार्य कर सकें।
- कृषि आधारित स्टार्टअप्स को सहकारी संस्थाओं से जोड़ना जिससे नवाचार को बढ़ावा मिले।
- क्लस्टर आधारित सहकारी मॉडल के माध्यम से क्षेत्रीय विशेषताओं के अनुसार उत्पादन और विपणन को बढ़ावा देना।
- कृषि निर्यात में सहकारी सहभागिता जिससे भारतीय किसान वैश्विक बाजार से जुड़ सकें।

2025 का 'अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष' केवल एक उत्सव नहीं, बल्कि सहकारिता की नई संभावनाओं की शुरुआत है। कृभको जैसी संस्थाएं सहकारिता को केवल एक आर्थिक तंत्र नहीं, बल्कि सामाजिक समावेशन, ग्रामीण उत्थान और आत्मनिर्भरता की कुंजी मानती हैं।

'सहकार से समृद्धि' का मार्ग भारत को सतत और समावेशी विकास की दिशा में अग्रसर कर रहा है – और इस यात्रा में कृभको की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और प्रेरणादायक है।

सहकार से समृद्धिः डेयरी सहकारिताओं के माध्यम से ग्रामीण विकास और आर्थिक प्रगति

– डॉ. मीनेश शाह
अध्यक्ष, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड

सहकारिता का महत्व इस बात में निहित है कि यह "सभी के लिए, सभी के साथ" के सिद्धांत पर आधारित है। इसका मूल भाव है कि व्यक्ति अकेले की बजाय मिलकर, साझेदारी और आपसी विश्वास के साथ कार्य करें, ताकि संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग हो और लाभ समान रूप से सभी तक पहुंचे। भारतीय संस्कृति में "सर्वे भवन्तु सुखिनः" और "वसुधैव कुटुम्बकम्" जैसे विचार सहकारिता के मूल भाव को दर्शाते हैं। सहकारिता में प्रतिस्पर्धा की बजाय सहयोग को प्राथमिकता दी जाती है, जिससे सामाजिक एकजुटता, आर्थिक समानता और सामूहिक प्रगति को बढ़ावा मिलता है।

'सहकार से समृद्धि' का अर्थ है–साझा प्रयासों से सामूहिक समृद्धि प्राप्त करना। इसी सोच को संस्थागत मजबूती देने के लिए भारत सरकार ने 6 जुलाई 2021 को एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए 'सहकारिता मंत्रालय' का गठन किया, ताकि सहकारी संस्थाओं के माध्यम से हर व्यक्ति तक विकास के लाभ पहुंच सकें। "सहकार से समृद्धि" पहल भारत की सामाजिक और आर्थिक विकास यात्रा का एक नया अध्याय है, जिसका उद्देश्य सहकारिता की शक्ति का उपयोग करते हुए एक समावेशी, सशक्त और आत्मनिर्भर राष्ट्र का निर्माण करना है।

भारत में "सहकार से समृद्धि" की अवधारणा को व्यावहारिक रूप से साकार करने में दुग्ध सहकारी समितियों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। आणंद पैटर्न जैसे सहकारी मॉडल ने यह साबित किया है कि यदि किसान, विशेषकर छोटे और सीमांत किसान, मिलकर संगठित रूप से काम करें तो वे न केवल अपने उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि विपणन, प्रसंस्करण और वितरण की चुनौतियों का भी सामूहिक रूप से सामना कर सकते हैं। दुग्ध सहकारिताओं ने करोड़ों ग्रामीण परिवारों, विशेषकर महिलाओं को, स्थायी आय का स्रोत प्रदान किया है और उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाया है।

डेयरी व्यवसाय : ग्रामीण समृद्धि का मूलाधार

भारत विश्व के भू–भाग का मात्र 2.4 प्रतिशत हिस्सा है, परंतु यहां विश्व की लगभग 18 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इस देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में, यानी 6 लाख से अधिक गांवों में रहती है। इन ग्रामीण समुदायों का जीवन आज भी मुख्यतः कृषि और उससे जुड़ी गतिविधियों पर आधारित है, जिनमें पशुपालन का एक विशिष्ट और केंद्रीय स्थान है। वर्तमान में, पशुधन क्षेत्र भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 5.62 प्रतिशत का महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है और इसी क्षेत्र में दूध उत्पादन एक सशक्त, सस्टेनेबल और समावेशी आर्थिक समृद्धि के स्तंभ के रूप में तेजी से उभरा है।

भारत का डेयरी क्षेत्र ग्रामीण विकास में एक निर्णायक भूमिका निभाता है, जो 8 करोड़ से अधिक

किसानों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करता है। हमारा देश न केवल वैश्विक स्तर पर दूध उत्पादन में अग्रणी है, जो विश्व की कुल आपूर्ति का लगभग 24.76% है, बल्कि यह दूध का सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। देश का दूध उत्पादन वर्ष 2014–15 में 146.3 मिलियन मीट्रिक टन (एमएमटी) से बढ़कर 2023–24 में 239.3 मिलियन मीट्रिक टन (एमएमटी) हो गया है, जो लगभग 6% की वार्षिक वृद्धि दर को दर्शाता है यह वैश्विक औसत 1.5% की तुलना में कहीं अधिक है। भारत में प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता प्रतिदिन 471 ग्राम है, जो वैश्विक औसत 329 ग्राम से अधिक है। यह आंकड़ा विशेष रूप से विशाल लैक्टोम–वेजिटेरियन जनसंख्या वाले देश में खाद्य सुरक्षा और पोषण में डेयरी क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका को दर्शाता है।

किफायती लागत, शीघ्र आय और सुनिश्चित लाभ के कारण डेयरी व्यवसाय छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए आय का एक आकर्षक विकल्प बनकर उभरा है।

डेयरी क्षेत्र की एक महत्वतपूर्ण विशेषता यह है कि दूध से प्राप्त आय की स्थिरता, पारंपरिक कृषि आय की तुलना में कहीं अधिक सशक्त और भरोसेमंद है। अनुभवजन्य तथ्यों से यह स्पष्ट हुआ है कि जब पर्यावरणीय परिस्थितियां प्रतिकूल होती हैं जैसे सूखा, बाढ़ या फसल की बर्बादी, तो ग्रामीण परिवारों की आर्थिक निर्भरता डेयरी व्यवसाय पर और अधिक बढ़ जाती है। इसलिए यह पूर्णतः स्पष्ट है कि यदि भारत के डेयरी क्षेत्र के आधुनिकीकरण और बदलाव की दिशा में कोई भी सार्थक कदम उठाया जाए, तो वह ग्रामीण भारत के समग्र विकास में उल्लेखनीय योगदान देगा।

डेयरी सहकारिताएं : एक तर्कसंगत एवं प्रभावी उद्यम मॉडल

दूध का उत्पादन ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे और सीमांत किसानों द्वारा किया जाता है, जबकि इसके बाज़ार दूरस्थ शहरों में स्थित होते हैं। अतः भारत में दूध व्यवसाय को संगठित करने के लिए किसान से उपभोक्ता तक एकीकृत प्रणाली की आवश्यकता होती है। इसी दृष्टिकोण के अनुरूप किसान–प्राथमिक दूध सहकारी समिति–संघ–महासंघ की सहकारी संरचना विकसित की गई है जिसे आणंद मॉडल के नाम से जाना जाता है।

गांव की प्राथमिक दूध उत्पादक सहकारी समिति, जमीनी स्तर पर सदस्यों के निकट होने के कारण सामान्यतः उनकी आवश्यकताओं और मांगों के प्रति अधिक संवेदनशील एवं उत्तरदायी होती है। इस प्रकार, यह समिति दूध उत्पादकों को आवश्यक इनपुट सेवाएं, दूध संकलन तथा भुगतान की सुविधाएं प्रदान करती है। यह संघ और दूध उत्पादक के बीच एक प्रभावी सेतु का कार्य करती है। डेयरी सहकारी समिति की आमसभा में दूध आपूर्ति करने वाले सभी दूध उत्पादक सदस्य होते हैं। इसका संचालन और प्रबंधन, सदस्य दूध उत्पादकों द्वारा निर्वाचित प्रबंध समिति के माध्यम से किया जाता है। यह व्यवस्था दूध उत्पादकों को डेयरी व्यवसाय में अपने हितों की रक्षा करने में सक्षम बनाती है।

सामान्यतः जिला स्तर पर स्थापित किया जाने वाला दूध संघ मूलतः प्राथमिक दूध सहकारी समितियों से दूध का संकलन एवं परिवहन, दूध का प्रसंस्करण, दुग्ध उत्पादों का निर्माण, डेयरी किसानों को प्रौद्योगिकी प्रदान करने तथा महत्वपूर्ण रूप से प्राथमिक सहकारिताओं की निगरानी और सदस्य शिक्षण कार्यक्रमों के लिए उत्तरदायी होता है। दूध संघ की संचालन समिति का गठन दूध सहकारी समितियों से निर्वाचित किसान प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है। संबंधित राज्य सहकारिता अधिनियम के अनुसार, इसमें विशेषज्ञ सदस्य के रूप में पेशेवरों को मनोनीत करने का प्रावधान भी होता है। इस व्यवस्था के चलते, डेयरी सहकारिताओं के बोर्ड न केवल विभिन्न सदस्य

हितों का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम होते हैं, बल्कि निर्णय प्रक्रिया में विशेषज्ञता का लाभ लेते हुए बाज़ार में प्रतिस्पर्धी बने रहने में भी सफल होते हैं।

राज्य स्तर पर दूध महासंघ दुग्ध उत्पादों के विपणन, अंतर–जिला तरल दूध विपणन, उत्पादन कार्यक्रम निर्धारण तथा आवश्यक सामग्री की आपूर्ति हेतु उत्तरदायी होता है। दूध महासंघ की संचालन समिति का गठन उससे संबद्ध दूध संघों के निर्वाचित अध्यक्षों द्वारा किया जाता है। दूध संघों की भांति, इसमें भी विशेषज्ञ सदस्यों को मनोनीत करने का प्रावधान होता है। ये डेयरी सहकारिताएं दूध उत्पादन की कमी और अधिकता के बीच की अवधि में मूल्य अस्थिरता को संतुलित करने, दूध उत्पादन मूल्य को मानकीकृत करने तथा उपभोक्ता द्वारा भुगतान किए गए मूल्य में किसानों की अधिकतम हिस्सेदारी सुनिश्चित करने में भी सहायक होती हैं।

डेयरी सहकारिताएं : विकास यात्रा और उपलब्धियां

1950 और 1960 के दशक में भारत का डेयरी क्षेत्र कम दूध उत्पादन, घटती प्रति व्यक्ति उपलब्धता, आयात पर भारी निर्भरता और असंगठित उत्पादन से जूझ रहा था। दूध प्रसंस्करण और कोल्ड चेन अवसंरचना का अभाव था और डेयरी को व्यावसायिक रूप में नहीं अपनाया जा रहा था, जिससे देश की समृद्ध दुग्ध परंपरा कमजोर हो रही थी। 1964 में प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने आणंद में अमूल के चारा कारखाने का उद्घाटन किया और किसानों से चर्चा कर सहकारिता की सफलता को समझा। वे 'आणंद मॉडल' को पूरे देश में लागू करने के पक्षधर हुए। इसके लिए भारत सरकार ने किसानों को संगठित करने और सहकारी समितियों को मजबूत बनाने की जिम्मेदारी निभाने हेतु राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (NDDB) की स्थापना करने का निर्णय लिया।

कभी दूध की कमी से जूझने वाला भारत आज विश्व का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश बन चुका है। इस अभूतपूर्व परिवर्तन का श्रेय मुख्यतः वर्ष 1970 में प्रारंभ 'श्वेत क्रांति (ऑपरेशन फ्लड)' कार्यक्रम के अंतर्गत भारत सरकार और राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड (एनडीडीबी) द्वारा विभिन्न राज्यों में संचालित सहकारी प्रणाली (आणंद मॉडल) के सफल क्रियान्वीयन को जाता है। श्वेत क्रांति ने न केवल डेयरी क्षेत्र में एक नई नीतिगत सोच को जन्म दिया, बल्कि ग्रामीण और शहरी आबादी को जोड़ा, बाजारोन्मुख दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया, तकनीकी प्रगति लाई, विस्तार सेवाओं का विकास किया और सहकारी संस्थाओं की मजबूती में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने 1998 तक भारत को विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक बनाने में अहम भूमिका निभाई।

ऑपरेशन फ्लड कार्यक्रम के तीन चरण पूरे होने के बाद, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने दुग्ध सहकारी समितियों को और मज़बूत करने के लिए एक परिप्रेक्ष्य योजना (Perspective Plan–2001–2005) लागू की, जिसका मुख्य फोकस चार प्रमुख क्षेत्रों पर था – उत्पादकता में वृद्धि, गुणवत्ता आश्वासन और संयंत्र प्रबंधन, सहकारी व्यवसाय को सुदृढ़ करना तथा राष्ट्रीय सूचना नेटवर्क का निर्माण। 2010–11 में दूध की तेज़ी से बढ़ती मांग को देखते हुए, एनडीडीबी ने 2012–19 के दौरान राष्ट्रीय डेयरी योजना चरण–1 लागू की। इसका लक्ष्य वैज्ञानिक तरीकों से दुग्ध पशुओं की उत्पादकता बढ़ाना और ग्रामीण उत्पादकों को शहरी बाज़ारों से जोड़ना था। इस योजना ने दूध देने वाले पशुओं की आनुवंशिक क्षमता सुधारने, प्राकृतिक संसाधनों का कुशल उपयोग, मीथेन उत्सर्जन में कमी, रोग नियंत्रण और बेहतर नीतिगत समर्थन में महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिससे छोटे और सीमांत दुग्ध उत्पादकों की आजीविका मज़बूत हुई।

इन सभी प्रयासों से देश में डेयरी सहकारी नेटवर्क में अभूतपूर्व विस्तार हुआ है। आज, भारत में 22 राज्य स्तरीय दूध महासंघ और लगभग 240 जिला स्तरीय दूध संघ तथा विपणन डेयरियां कार्यरत हैं। ग्राम स्तर की सहकारी संस्थाएं दो लाख से अधिक गांवों में फैली हुई हैं, जो देश के कुल गांवों का लगभग एक–तिहाई हिस्सा हैं। महिला नेतृत्व वाली डेयरी सहकारी समितियां आर्थिक आत्मनिर्भरता, निर्णय क्षमता और कौशल विकास के जरिए ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाकर उन्हें नेतृत्व की भूमिका में अग्रसर कर रही हैं।

दूध की बिक्री से प्राप्त राशि का वितरण करते समय दुग्ध सहकारी समितियां इस तरह भुगतान करती हैं कि डेयरी किसानों को उपभोक्ता द्वारा चुकाए गए प्रत्येक रुपये का लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा मिले, जो विश्व में सबसे अधिक है। वर्ष 2024–25 में दुग्ध सहकारिताओं ने अपने सदस्यों को लगभग 1,00,000 करोड़ रुपए का भुगतान किया, जो प्रतिदिन लगभग 270 करोड़ रुपये ग्रामीण अर्थव्यवस्था में प्रवाहित करने के बराबर है।

डेयरी क्षेत्र की चुनौतियां

भारत में डेयरी क्षेत्र की सफलताओं के बावजूद, डेयरी उद्योग कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है, जैसे दूधारु पशुओं की कम उत्पादकता, संगठित क्षेत्र की कम भागीदारी, मिल्क बास्केट में मूल्यवर्धित डेयरी उत्पादों की कम हिस्सेदारी, डेयरी कमोडिटी के वैश्विक व्यापार में भारत की कम भागीदारी तथा जलवायु एवं सस्टेनेबिलिटी से जुड़ी समस्याएं शामिल हैं।

इनमें से सबसे बड़ी चिंता का विषय प्रति पशु की प्रतिदिन दूध उत्पादकता में कमी है। भारत में गाय और भैंस का औसत दैनिक दूध उत्पादन लगभग 6 किलोग्राम है, जबकि अमेरिका और यूरोप जैसे उन्नत डेयरी सेक्टर वाले देशों में यह उत्पादन प्रतिदिन 18–20 किलोग्राम है।

बढ़ती दूध और दूध उत्पादों की मांग को पूरा करने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि पशुओं की उत्पादकता में वृद्धि की जाए तथा संपूर्ण पशु आबादी में उत्पादक पशुओं का अनुपात भी बढ़ाया जाए। इसके लिए भारत में डेयरी पशुधन के स्वास्थ्य देखभाल, पोषण प्रणाली और प्रजनन प्रणाली पर विशेष ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है।

वर्तमान में असंगठित क्षेत्र में लगभग 68% सरप्लस मिल्क का विपणन किया जाता है, जिसमें मुख्यतः दूधिये, व्यापारी और स्थानीय मिठाई की दुकानें शामिल हैं। इस क्षेत्र में गुणवत्ता नियंत्रण की कमी, अप्रभावी लॉजिस्टिक्स और प्रसंस्करण प्रणाली तथा खाद्य सुरक्षा नियमों का उल्लंघन जैसी समस्याएं विद्यमान हैं।

गुणवत्ता और खाद्य सुरक्षा वे महत्वपूर्ण पहलू हैं, जो घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त दिला सकते हैं। परंतु, भारत में अभी भी डेयरी क्षेत्र का एक बड़ा हिस्सा असंगठित क्षेत्र द्वारा संचालित किया जाता है, जिससे दूध आपूर्ति की गुणवत्ता बनाए रखना बड़ी चुनौती है।

भारत की वैश्विक डेयरी व्यापार में हिस्सेदारी 1% से भी कम है, जबकि भारत दुनिया का सबसे बड़ा दूध उत्पादक है। यह स्थिति दर्शाती है कि हमें अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा, उत्पाद गुणवत्ता और प्रसंस्करण अवसंरचना में सुधार लाने की आवश्यकता है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों में डेयरी क्षेत्र का विकास एक समान नहीं रहा है, जिससे उत्पादन, उत्पादकता, अवसंरचना और ब्रांडिंग में क्षेत्रीय असंतुलन देखने को मिलता है। भारतीय डेयरी क्षेत्र अभी भी मूल्यवर्धित उत्पादों के उत्पादन और विपणन के मामले में आरंभिक अवस्था में है।

इसके साथ ही, पर्यावरणीय चुनौतियां भी अब इस क्षेत्र को प्रभावित करने लगी हैं। डेयरी फार्मिंग ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन और जल उपयोग को बढावा देती है, जिससे इस उद्योग की दीर्घकालिक पर्यावरणीय सस्टेनेबिलिटी को लेकर चिंताएं उत्पन्न हो रही है। जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों की पैदावार और चारे की गुणवत्ता पर असर पड़ रहा है। ऐसे में, यह आवश्यक हो गया है कि यह क्षेत्र सस्टेनेबल कृषि पद्धतियों को अपनाएं, जो कार्बन फुटप्रिंट और जल उपयोग को कम करे।

श्वेत क्रांति 2.0– सतत एवं समावेशी डेयरी विकास

पूर्ववर्ती डेयरी विकास योजनाओं के उल्लेखनीय प्रभाव के बावजूद, सहकारी क्षेत्र के विस्तार और अधिक किसान उत्पादकों को समावेशी रूप से जोड़ने की व्यापक संभावनाएं अभी भी मौजूद हैं। एक ओर जहां दूध और दूध उत्पादों का बाजार लगातार बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर देश में डेयरी क्षेत्र के विस्तार की पर्याप्त संभावनाएं भी विद्यमान हैं। ऐसे में दूध उत्पादन ग्रामीण परिवारों की आजीविका को और अधिक सशक्त बनाने का एक बड़ा अवसर प्रदान करता है। सहकारिता मंत्रालय ने मत्स्यपालन, पशुपालन एवं डेयरी मंत्रालय के साथ मिलकर श्वेत क्रांति 2.0 की शुरुआत की है, जिसका उद्देश्य डेयरी क्षेत्र की मौजूदा चुनौतियों का समाधान करना और सहकारी नेतृत्व वाले ऐसे मॉडल का निर्माण करना है, जो अधिक सशक्त, न्यायसंगत और सतत दुग्ध भविष्य सुनिश्चित करे। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एनडीडीबी संबंधित राज्य सरकारों और राज्य दुग्ध महासंघों के साथ मिलकर कार्य कर रहा है। जहां प्रथम श्वेत क्रांति ने भारत को दूध की कमी वाले देश से विश्व के सबसे बड़े दूध उत्पादक देश में बदल दिया, वही इस नए चरण में सस्टेनेबिलिटी, समावेशिता और किसानों की आय बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- **दूध उत्पादन और संकलन में वृद्धि:** इसका मुख्य लक्ष्य अगले पाँच वर्षों में डेयरी सहकारी समितियों द्वारा दूध संकलन को 50% बढ़ाकर 2028–29 तक 660 लाख किलोग्राम/दिन से 1,007 लाख किलोग्राम/दिन करना है। इसका उद्देश्य देश में दूध की बढ़ती माँग को पूरा करना और खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना है।
- **महिला किसानों का सशक्तिकरण:** यह कार्यक्रम डेयरी फार्मिंग में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को मान्यता देता है और उन्हें प्रशिक्षण, वित्तीय समावेशन और क्रय–विक्रय का बाजार उपलब्ध कराकर सशक्त बनाने का लक्ष्य रखता है।
- **डेयरी आधारभूत संरचना को सुदृढ़ बनाना:** यह पहल संपूर्ण डेयरी मूल्य श्रृंखला में सुधार पर केंद्रित है, जिसमें नई सहकारी समितियों का निर्माण, निर्मित समितियों को मजबूत करना और दूध संकलन, प्रसंस्करण और कोल्ड स्टोरेज के लिए अवसंरचना को बढ़ावा देना है।
- **तकनीकी एकीकरण:** श्वेत क्रांति 2.0 उत्पादकता और दक्षता बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीकों को अपनाने पर भी ज़ोर देती है। इसमें सेक्स सॉर्टेड सीमेन, भ्रूण प्रत्यारोपण और जीनोमिक चयन जैसी आनुवंशिक सुधार तकनीकें शामिल हैं। इसमें आपूर्ति शृंखला में गुणवत्ता नियंत्रण और पता लगाने की क्षमता में सुधार के लिए IoT–आधारित ट्रैकिंग और AI जैसी डिजिटल तकनीकों को भी शामिल किया गया है।

सरकार ने अगले पांच वर्षों में डेयरी सहकारिताओं के द्वारा दूध संकलन को 50% बढ़ाकर 2028–29 तक 660 लाख किलोग्राम प्रतिदिन से 1,007 लाख किलोग्राम प्रतिदिन करने का लक्ष्य रखा है।

इसे द्वि–आयामी रणनीति के माध्यम से प्राप्त किया जाना है:

1. सहकारी क्षेत्र का विस्तार:

इस योजना के अंतर्गत 75,000 नई डेयरी सहकारी समितियों की स्थापना की जाएगी, विशेषकर उन गाँवों और पंचायतों में जहां अब तक कोई सहकारी समिति नहीं है। साथ ही, पहले से मौजूद 46,422 सहकारी समितियों का सुदृढ़ीकरण किया जाएगा। यह विस्तार दूरदराज़ के क्षेत्रों के किसानों को बाज़ार की सीधी पहुंच प्रदान करेगा, जिससे वे अपने उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त कर सकेंगे और अनौपचारिक बिचौलियों पर निर्भरता घटेगी।

2. सहकारिता की पहुंच को अधिक सुदृढ़ और व्यापक बनाना:

इस पहल का उद्देश्य सहकारी नेटवर्क में क्षेत्रीय असंतुलन दूर करना है, जो वर्तमान में गुजरात जैसे राज्यों में सुदृढ़ हैं लेकिन पश्चिम बंगाल और ओडिशा जैसे अन्य राज्यों में यह अपेक्षाकृत कमजोर हैं। श्वेत क्रांति 2.0 देश भर में, इन वंचित क्षेत्रों को रणनीतिक रूप से लक्षित करके अधिक समतापूर्ण विकास सुनिश्चित करना चाहती है।

इसके अतिरिक्त, श्वेत क्रांति 2.0 का विशेष बल सस्टेनेबिलिटी और सर्कुलैरिटी पर है। यह पहल अपशिष्ट से ऊर्जा उत्पादन और बायोगैस उत्पादन जैसी पर्यावरण–अनुकूल गतिविधियों को प्रोत्साहित करती है, जिससे डेयरी क्षेत्र को अधिक सस्टेनेबल बनाया जा सके। यह कार्यक्रम महिला सशक्तिकरण पर भी विशेष ध्यान देता है, यह मानते हुए कि डेयरी क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे इस क्षेत्र के कार्यबल का एक बड़ा हिस्सा हैं। अतः, अधिक से अधिक महिला डेयरी किसानों को संगठित सहकारी क्षेत्र में शामिल कर, उन्हें बेहतर आर्थिक सुरक्षा और अधिक अवसर प्रदान करना इसका लक्ष्य है।

नई बहु–राज्यीय सहकारी समितियों का गठन: सहकारी क्षेत्र के विस्तार और आधुनिकीकरण को सुगम बनाने के लिए, "सहकार से समृद्धि" विजन का एक महत्वपूर्ण घटक बहु–राज्यीय सहकारी समितियों (एमएससीएस) को मजबूत करना है। बहु–राज्यीय सहकारी समितियां (संशोधन) अधिनियम, 2023 इस संबंध में एक ऐतिहासिक सुधार है। इस कानून का उद्देश्य इन समितियों के भीतर शासन को बेहतर बनाना, पारदर्शिता बढ़ाना और जवाबदेही में सुधार करना है।

इन कानूनी सुधारों के अलावा, सहकारी पारिस्थिति को बेहतर बनाने के लिए तीन नई राष्ट्रीय स्तर की बहु–राज्यीय सहकारी समितियां स्थापित की गई हैं। ये समितियां निम्नलिखित हैं:–

- **राष्ट्रीय सहकारी ऑर्गेनिक्स लिमिटेड (एनसीओएल)** – एनसीओएल (National Cooperative Organics Limited) की स्थापना देश की प्रमुख सहकारी संस्थाओं के संयुक्त प्रयास से हुई है। इसके प्रमोटरों में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (NDDB) जो मुख्य प्रोमोटर है, गुजरात को–ऑपरेटिव मिल्क मार्केटिंग फेडरेशन (GCMMF-अमूल), नेशनल एग्रीकल्चर को–ऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन ऑफ इंडिया (NAFED), नेशनल कंज्यूमर को–ऑपरेटिव फेडरेशन (NCCF) और नेशनल को–ऑपरेटिव डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन (NCDC) शामिल हैं। इन संस्थाओं ने मिलकर जैविक कृषि उत्पादों के

उत्पादन और विपणन को बढ़ावा देने के लिए एनसीओएल को एक अम्ब्रेला संगठन के रूप में स्थापित किया है, ताकि सहकारिता के माध्यम से किसानों को सशक्त बनाया जा सके और "सहकार से समृद्धि" के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। एनसीओएल का मुख्य फोकस जैविक उत्पादों की व्यावसायिक व्यवहार्यता को बढ़ाने पर है। इसके लिए यह किसानों को प्रत्यक्ष बाज़ार पहुंच प्रदान करता है, सभी उत्पादों को एकीकृत ब्रांड के तहत प्रस्तुत करता है और घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय दोनों ही बाज़ारों में इनकी उपलब्धता बढ़ाता है।

- **भारतीय बीज सहकारी संघ लिमिटेड (BBSSL)** – यह देश का पहला राष्ट्रीय स्तर का सहकारी संगठन है, जो पारंपरिक बीजों के संरक्षण, भंडारण और उत्पादन पर ध्यान केंद्रित करता है। बीबीएसएसएल (BBSSL) के प्रमोटरों में कृषक भारती कोऑपरेटिव लिमिटेड (कृभको) मुख्य प्रमोटर के रूप में अग्रणी है, जबकि अन्य प्रमोटरों में इंडियन फार्मर्स फर्टिलाइज़र कोऑपरेटिव लिमिटेड (इफ्को), नेशनल एग्रीकल्चरल कोऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन ऑफ इंडिया, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड और राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम शामिल हैं। बीबीएसएसएल का उद्देश्य सहकारी नेटवर्क के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले बीजों का उत्पादन बढ़ाना, आयात पर निर्भरता कम करना, कृषि उत्पादकता बढ़ाना, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त करना, "मेक इन इंडिया" को प्रोत्साहन देना और "आत्मनिर्भर भारत" में योगदान करना है। बीबीएसएसएल ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, इंटरनेशनल क्रॉप्स रिसर्च इंस्टीट्यूट फॉर द सेमी–एरिड ट्रॉपिक्स (ICRISAT) और राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड जैसी संस्थाओं के साथ रणनीतिक साझेदारियाँ की हैं। पारंपरिक और सब्जी बीज क्षेत्र के लिए एक समर्पित इकाई शुरू की गई है जिससे किस्मों की विविधता को बढ़ावा मिलेगा।

- **नेशनल कोऑपरेटिव एक्सपोर्ट्स लिमिटेड (NCEL)**: यह देश की पहली राष्ट्रीय स्तर की बहु–राज्यीय सहकारी संस्था है, जिसका उद्देश्य सहकारी समितियों और सहकारी उत्पादकों के लिए एक ऐसा मंच प्रदान करना है, जो उनके उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा दे और उन्हें वैश्विक बाज़ार तक पहुंचाए। एनसीईएल के प्रमोटरों में गुजरात को–ऑपरेटिव मिल्क मार्केटिंग फेडरेशन (GCMMF–अमूल), कृभको, इफ्को, नेफेड और नेशनल कोऑपरेटिव डेवलपमेंट कॉरपोरेशन शामिल हैं। एनसीईएल सहकारी क्षेत्र के उत्पादों की गुणवत्ता सुधारने, मूल्य संवर्धन करने, अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप प्रमाणन दिलाने, ब्रांडिंग, पैकेजिंग, लेबलिंग, लॉजिस्टिक्स प्रबंधन और वैश्विक बाज़ार अनुसंधान में सहकारी संस्थाओं की मदद करता है।

आने वाले समय में, सहकारिता आधारित विकास दृष्टिकोण न केवल किसानों और दुग्ध उत्पादकों की आय बढ़ाने में सहायक होगा, बल्कि आधुनिक तकनीक, मूल्य संवर्धन और विपणन के बेहतर साधनों तक उनकी पहुंच सुनिश्चित करेगा। महिला एवं युवा सहभागिता के साथ, यह मॉडल रोजगार के नए अवसर उत्पन्न करेगा और एक समृद्ध और आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में केंद्रीय भूमिका निभाएगा।

ग्रामीण सहकारी क्षेत्र में नाबार्ड का योगदान

– शाजी के. वी.
अध्यक्ष, राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक

"भारत के गाँवों और भारतीय ग्रामीण जीवन का उन्नयन ही भारत का उन्नयन है."
(हैरोल्ड एच. मान और डैनियल थॉर्नर, 'द सोशल फ्रेमवर्क ऑफ़ एग्रीकल्चर')

कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के परीक्षण के लिए 1926 में गठित रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर ने प्रतिपादित किया था कि एक सुव्यवस्थित और सुदृढ़ सहकारी क्षेत्र का विकास कर्ज के बोझ तले दबे ग्रामीण समुदायों के लिए आशा की सबसे उज्ज्वल किरण है। आयोग का मानना था कि राज्य को चाहिए कि वह 1904 में को–ऑपरेटिव सोसायटी ऐक्ट के अस्तित्व में आने के बाद गठित सहकारी समितियों को प्राथमिकता और संरक्षण दे जिनकी यात्रा अभी शुरू ही हुई थी। नाबार्ड अपनी स्थापना के समय से ही इस प्रयास में लगा हुआ है। सहकारिता और सहकारी संस्थाएं स्वतंत्रता से पहले और उसके बाद भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती रहीं, लेकिन 1982 में नाबार्ड की स्थापना के बाद सहकारी क्षेत्र को अभूतपूर्व बल मिला।

वैश्विक संदर्भ में भारत की सहकारी संस्थाएं

भारत का सहकारिता आंदोलन विश्व के सबसे बड़े सहकारिता आंदोलनों में से एक है। विश्व की समग्र सहकारी संस्थाओं में भारत का योगदान लगभग 27% है। अनुमान है कि भारत की 20% से अधिक आबादी सहकारिता का हिस्सा है, जबकि वैश्विक औसत 12% है। भारत में सहकारी समितियां ऋण और बैंकिंग, उर्वरक, चीनी, डेयरी, विपणन, उपभोक्ता वस्तुएं, हथकरघा, हस्तशिल्प, मत्स्यपालन, आवास आदि सहित कई प्रकार की गतिविधियों के क्षेत्र में काम करती हैं। देश की सभी सहकारी समितियों में आवास (24%), डेयरी (17.7%), और पैक्स–एफएसएस–लैम्प्स (13%) का हिस्सा 54% से अधिक है।

नाबार्ड के अधिदेश के माध्यम से ग्रामीण सहकारी संस्थाओं का समर्थन

ग्रामीण संस्थाओं का विकास नाबार्ड के प्रमुख अधिदेशों में से एक है और यह इसके कॉर्पोरेट मिशन वक्तव्य का भी हिस्सा है। सहकारी क्षेत्र के संस्थागत विकास में नाबार्ड की भूमिका को मोटे तौर पर पुनर्वित्त सहायता, विकासात्मक सहयोग, नीतिगत समर्थन और पर्यवेक्षण के अंतर्गत रखा जा सकता है।

	पुनर्वित्त सहायता ग्रामीण सहकारी बैंकों के संसाधनों में वृद्धि और कृषि क्षेत्र में पूँजी निर्माण को बल **विकासात्मक सहयोग** प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, आधारभूत संरचना सहयोग **नीतिगत समर्थन** केंद्रीय और संघीय स्तर पर **ग्रामीण सहकारी बैंकों का पर्यवेक्षण** सांविधिक निरीक्षण वैधानिक और विनियामकीय प्रावधानों का अनुपालन सुनिश्चित कराना

I. पुनर्वित्त सहायताः

नाबार्ड ग्रामीण सहकारी बैंकों (आरसीबी) को कृषि, अनुषंगी गतिविधियों और ग्रामीण कृषितर क्षेत्र के लिए अल्पावधि और दीर्घावधि ऋण प्रदान करने हेतु उनके संसाधनों के पूरक के रूप में पुनर्वित्त प्रदान करता है। ग्रामीण ऋण सहकारी समितियों द्वारा संवितरित कुल आधार स्तरीय ऋण में, नाबार्ड से जुटाए गए संसाधनों का हिस्सा 55% से अधिक है। पुनर्वित्त से आधार स्तरीय उत्पादन ऋण में वृद्धि होने तथा कृषि क्षेत्र में पूँजी निर्माण को बढ़ावा मिलने की उम्मीद है।

दीर्घावधि पुनर्वित्तः नाबार्ड का दीर्घावधि पुनर्वित्त निवेश ऋण पर ज़ोर देता है जिससे कृषि क्षेत्र में पूँजी निर्माण को बढ़ावा मिलता है, जो कृषि उत्पादन और उत्पादकता के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसके अलावा, अनुषंगी गतिविधियों में पूँजी निर्माण से किसानों को आय का निरंतर स्रोत मिलता है, जिससे उनकी अनुकूलन क्षमता बढ़ती है।

कृषि में निवेश ऋण को बढ़ावा देने के लिए, भारत सरकार ने नाबार्ड के साथ मिलकर अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के प्राथमिकता क्षेत्र ऋणीकरण में कमी की राशि से 'दीर्घावधि ग्रामीण ऋण निधि' की स्थापना की है। यह निधि सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आरआरबी) को रियायती दरों पर दीर्घावधि पुनर्वित्त सहायता उपलब्ध कराती है। यह निधि लघु और सीमांत किसानों को दीर्घावधि ऋण उपलब्ध कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिनके पास कुल भूजोतों का 85% हिस्सा है।

वित्तीय वर्ष 2024–25 के दौरान, राज्य सहकारी बैंकों (एसटीसीबी) ने नाबार्ड से ₹12,281.54 करोड़ का दीर्घावधि पुनर्वित्त प्राप्त किया। इस राशि में दीर्घावधि ग्रामीण ऋण निधि के अंतर्गत संवितरित ₹4,170.68 करोड़ शामिल हैं। पिछले वित्तीय वर्ष (2023–24) की तुलना में पुनर्वित्त की कुल राशि में गिरावट आई है, जिसका मुख्य कारण प्राथमिकता क्षेत्र ऋणीकरण में अन्तराल के अंतर्गत आवंटन में आई कमी है। वर्ष 2025–26 के दौरान, एसटीसीबी ने 04 अगस्त 2025 की स्थिति में, ₹847.19 करोड़ का दीर्घावधि पुनर्वित्त प्राप्त किया है, जो आवंटन का 6.05% है, अर्थात् ₹14,004 करोड़।

अल्पावधि (मौसमी कृषि परिचालन) पुनर्वित्त

फसलों के उत्पादन और विपणन के लिए 7% प्रति वर्ष की दर पर प्रति किसान प्रदत्त ₹3 लाख तक के ऋणों के समक्ष नाबार्ड सहकारी बैंकों को रियायती दर अर्थात् 4.5% पर अल्पावधि (मौसमी कृषि परिचालन) पुनर्वित्त प्रदान करता है। वर्ष 2023–24 के दौरान, एसटीसीबी ने ₹50,517.76 करोड़ का अल्पावधि पुनर्वित्त लिया था, जबकि वर्ष 2024–25 के दौरान, उन्होंने प्राथमिकता क्षेत्र ऋणीकरण के अंतर्गत ₹32,079.11 करोड़ का पुनर्वित्त लिया है।

अतिरिक्त अल्पावधि (मौसमी कृषि परिचालन)

ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं को वर्ष भर नकदी की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए, उनके फसल ऋण हेतु एक विशेष ऋण व्यवस्था, अर्थात् अतिरिक्त ऋण सुविधा (मौसमी कृषि परिचालन) वर्ष 2016–17 के दौरान शुरू की गई थी। इस उत्पाद के अंतर्गत एसटीसीबी द्वारा 2024–25 के दौरान ₹72,865.56 करोड़ की राशि आहरित गई, जबकि 2023–24 के दौरान ₹57,659.06 करोड़ की राशि ली गई थी। 2025–26 के दौरान, एसटीसीबी ने इस ऋण व्यवस्था के अंतर्गत 04 अगस्त 2025 की स्थिति के अनुसार, ₹9,716.31 करोड़ की ऋण सुविधा का लाभ उठाया है।

अल्पावधि – अन्य और बुनकर

इसके अंतर्गत वर्ष 2023–24 के दौरान एसटीसीबी को कुल ₹26,108.87 करोड़ का पुनर्वित्त संवितरित किया गया. वर्ष 2024–25 के दौरान एसटीसीबी को इस मद में ₹31,124.43 करोड़ और 2025–26 के दौरान 04 अगस्त 2025 की स्थिति के अनुसार ₹6,157.20 करोड़ का पुनर्वित्त संवितरित किया गया है।

मध्यावधि परिवर्तन

प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसल क्षति से संकटग्रस्त किसानों को राहत प्रदान करने के लिए, नाबार्ड एसटीसीबी को मध्यावधि परिवर्तन सहयोग प्रदान करता है।

II. विकासात्मक सहयोग

नाबार्ड सहकारिता विकास निधि, वित्तीय समावेशन निधि आदि जैसी सुविधाओं के माध्यम से सहकारी संस्थाओं को विकासात्मक सहयोग उपलब्ध कराता है।

- क. सहकारिता विकास निधि (सीडीएफ)
- ख. वित्तीय समावेशन निधि (एफआईएफ)
- ग. अन्य पहलें

क. सहकारिता विकास निधि (सीडीएफ) अंतर्गत कार्यान्वित परियोजनाएं

नाबार्ड द्वारा 1993 में (सीडीएफ) की स्थापना ₹10 करोड़ की प्रारंभिक समूह निधि से की गई थी, जिसे बाद में नाबार्ड के लाभ से अंतरित अंशदानों के माध्यम से बढ़ाया गया है। 31 मार्च 2025 की स्थिति के अनुसार, सीडीएफ की स्थापना के बाद से अब तक कुल ₹381.5 करोड़ की राशि संवितरित की जा चुकी है। पुनःपूर्ति और विनियोजन के बाद, 1 अप्रैल 2025 की स्थिति के अनुसार, निधि का शेष ₹200 करोड़ है। 31 मार्च 2025 की स्थिति में सीडीएफ के अंतर्गत प्रमुख

परिणाम संकेतकों में निम्नलिखित शामिल हैं:

i. सीडीएफ सहायता का एक बड़ा हिस्सा सहकारी बैंक कार्मिकों के प्रशिक्षण हेतु वित्तीय सहायता योजना (सॉफ्टकॉब) के अंतर्गत प्रशिक्षण संबंधी गतिविधियों के लिए दिया जाता है। पिछले तीन वर्षों में, सहकारी प्रशिक्षण संस्थानों ने 4,000 से अधिक कार्यक्रम आयोजित किए हैं, जिनमें सहकारी संरचना के विभिन्न स्तरों के एक लाख से अधिक प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया है। नाबार्ड ने वित्तीय वर्ष 2024–25 में सॉफ्टकॉब दिशानिर्देशों को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए उनमें व्यापक संशोधन किया है।

ii. सीडीएफ के अंतर्गत, नाबार्ड ने बैंकर ग्रामीण विकास संस्थान (बर्ड), लखनऊ में, सहकारिता–व्यावसायिक उत्कृष्टता केंद्र (सी–पीईसी) की स्थापना की है। सी–पीईसी का उद्देश्य प्रशिक्षण प्रणालियों की गुणवत्ता में सुधार लाना और अल्पावधि सहकारी ऋण संरचना के भीतर व्यावसायिकता एवं कुशल मानव संसाधन का संवर्धन करने हेतु नीतियां विकसित करना है।

iii. 2020 में नाबार्ड ने (सीडीएफ) के भीतर व्यवसाय विविधीकरण और उत्पाद नवोन्मेष कक्ष (बीडीपीआईसी) स्थापित करने के लिए सीडीएफ–समर्थित योजना शुरू की। 31 मार्च 2025 की स्थिति के अनुसार, ऐसे 20 कक्ष कार्यरत हैं, जिन्हें कुल ₹15.5 करोड़ की वित्तीय सहायता दी जा चुकी है।

iv. पैक्स को बहु–सेवा केंद्रों (एमएससी) में रूपांतरित के लिए भी सीडीएफ सहायता उपलब्ध है। इस योजना के तहत, पैक्स को परियोजना तैयारी, एक्सपोज़र दौरों, कर्मियों के क्षमता निर्माण, दस्तावेज़ीकरण और प्रौद्योगिकी अंगीकरण जैसी गतिविधियों के लिए अनुदान सहायता दी जाती है। वित्तीय वर्ष 2024–2025 के दौरान, इस पहल के तहत ₹366.12 लाख संवितरित किए गए।

v. प्रशिक्षण, मार्गदर्शन, एक्सपोज़र दौरों और अन्य प्रासंगिक सहयोगों के माध्यम से पैक्स के क्षमता निर्माण और संस्थागत सुदृढ़ीकरण में सहायता के लिए एसटीसीबी और जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंकों (डीसीसीबी) में पैक्स विकास कक्ष (पीडीसी) स्थापित किए गए हैं। 31 मार्च 2025 की स्थिति में, 20 राज्यों में 2,556 पैक्स को शामिल करते हुए 95 बैंकों को पीडीसी स्थापित करने में सहायता प्रदान की गई है।

vi. सीडीएफ के अंतर्गत एक व्यापक सहायता योजना को भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र (सिक्किम सहित), अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह और जम्मू–कश्मीर के राज्यों तक विस्तारित किया गया है, जिससे क्षमता निर्माण और आधारभूत संरचनागत सहायता प्रदान की जा रही है। 31 मार्च 2025 की स्थिति में, इन राज्यों के (सीडीएफ) को कुल ₹1,009 लाख की राशि मंजूर की जा चुकी है।

ख. वित्तीय समावेशन निधि (एफआईएफ) के अंतर्गत कार्यान्वित परियोजनाएं

ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने और ऐसी गतिविधियों में संलग्न विभिन्न संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से नाबार्ड में एफआईएफ की स्थापना की गई थी। एफआईएफ के अंतर्गत, आरसीबी को 90% की बढ़ी हुई दर पर अनुदान सहायता दी जाती है।

एफआईएफ के माध्यम से नाबार्ड समावेशी विकास को बढ़ावा देने और किसानों एवं ग्रामीण समुदायों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी समितियों की भूमिका में वृद्धि सुनिश्चित कर रहा है।

ग्रामीण सहकारी संस्थाओं को समर्थन देने के लिए एफआईएफ के तहत कुछ प्रमुख पहलें हैं – वित्तीय साक्षरता और जागरूकता, आरसीबी द्वारा प्रौद्योगिकी अंगीकरण और उन्हें सीबीएस पर ऑनबोर्ड कराना, क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण (सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के लिए), नेटवर्क कनेक्टिविटी (वीसैट, एचटीएस–वीसैट, डुअल एलटीई और एसडी–वैन प्रौद्योगिकियों और मोबाइल सिग्नल बूस्टर की तैनाती), मोबाइल वैन के माध्यम से बैंकिंग प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन, रुपे केसीसी के लिए एटीएम/ माइक्रो–एटीएम पर ग्रीन पिन सुविधा के लिए समर्थन, एयूए/केयूए की सदस्यता जैसी विनियामकीय आधारभूत संरचनाओं को अपनाने के लिए ग्रामीण सहकारी संस्थाओं को सहयोग, सीकेवाईसीआर और साथ ही चेक–आधारित लेनदेन के लिए भारत बिल भुगतान प्रणाली (बीबीपीएस) और पॉजिटिव पे सिस्टम जैसी भुगतान प्रणालियों पर ऑनबोर्डिंग ताकि ग्राहक सुरक्षा में वृद्धि हो।

एफआईएफ के माध्यम से नाबार्ड द्वारा समर्थित ग्रामीण सहकारी संस्थाएं स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) और संयुक्त देयता समूह (जेएलजी) की पहलों के सुदृढीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जो बचत जुटाने, बैंक सहबद्धता को सुगम बनाने और एसएचजी एवं जेएलजी को सामूहिक ऋण प्रदान करने में सहायक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी गहरी पहुंच का लाभ उठाकर, सहकारी संस्थाएं एसएचजी और जेएलजी की पहुंच को गहन और स्थिरता को सुदृढ़ बनाती हैं, जिससे ग्रामीण सशक्तीकरण और समावेशी विकास में योगदान मिलता है।

ग. अन्य पहलें: सहकारी क्षेत्र के लिए नाबार्ड की अन्य उल्लेखनीय विकासात्मक पहलें निम्नानुसार हैः

i. **आरसीबी में सीबीएस का उन्नयन**: नाबार्ड ने आरसीबी को कोर बैंकिंग समाधान (सीबीएस) प्लेटफॉर्म पर लाने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन और सहयोग दिया। इन बैंकों को बैंकिंग क्षेत्र की नवीनतम प्रौद्योगिकियों तक पहुंच उपलब्ध कराने के अपने प्रयास में, नाबार्ड विभिन्न पहलों जैसे कि सेंट्रलाइज्ड अकाउंट एग्रीगेटर प्लैटफॉर्म, साइबर इंश्योरेंस, कॉमन एमआईएस सर्वर, सेंट्रलाइज्ड पेमेंट सिस्टम आदि के लिए साझा प्लैटफॉर्म की सुविधा प्रदान करने के लिए काम कर रहा है।

ii. **पैक्स कम्प्यूटरीकरण**: नाबार्ड पाँच वर्षों की अवधि में 67,000 से अधिक पैक्स और 1,422 कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों (एआरडीबी) के कम्प्यूटरीकरण हेतु केंद्र प्रायोजित परियोजना कार्यान्वित कर रहा है। कम्प्यूटरीकरण से पैक्स की वास्तविक क्षमता का अनुभव होगा, उनके कार्यों में पारदर्शिता आएगी और ग्राहकों का प्रणाली में भरोसा बढ़ेगा। इससे पैक्स के एसटीसीबी और डीसीसीबी के सीबीएस के साथ निर्बाध एकीकरण का मार्ग भी प्रशस्त होगा। ई–पैक्स सॉफ्टवेयर को व्यापक पहुंच के लिए डिज़ाइन किया गया है और यह 13 भाषाओं में उपलब्ध होगा। पैक्स तथा एआरडीबी का कम्प्यूटरीकरण भारत की ग्रामीण सहकारी आधारभूत संरचना के आधुनिकीकरण में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है।

iii. **सहकर सारथी प्राइवेट लिमिटेड (शेयर्ड सर्विसेज़ एंटिटी):** 21 जुलाई 2025 को एक निजी लिमिटेड कंपनी के रूप में औपचारिक रूप से निगमित 'सहकार सारथी' एक रणनीतिक पहल है जिसका उद्देश्य भारत में ग्रामीण सहकारी संस्थाओं की परिचालन दक्षता और प्रौद्योगिकीय क्षमताओं को बढ़ाना है। संसाधनों और विशेषज्ञता को एक साथ लाकर यह संस्था ग्रामीण सहकारी संस्थाओं को प्रतिस्पर्धी सेवाएं प्रदान करने, बड़े पैमाने पर परिचालन के लाभ प्राप्त करने और नवीनतम एवं उभरती हुई प्रौद्योगिकियों को शीघ्रता से अपनाकर परिचालन दक्षता बढ़ाने में सक्षम बनाएगी।

iv. **ई–केसीसी पोर्टल:** ई–केसीसी पोर्टल एक डिजिटल प्लेटफॉर्म है जिसे आरसीबी के किसान सदस्यों की किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) ऋण यात्रा को सुव्यवस्थित करने के लिए विकसित किया गया है। इस पोर्टल में विभिन्न प्रकार की विशिष्ट सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं जिनमें आधार–आधारित ईकेवाईसी और अधिप्रमाणन, भू–स्वामित्व का डिजिटल सत्यापन, वित्तमान के आधार पर केसीसी ऋण सीमाओं की स्वाचालित परिगणना, तत्समय आवेदन ट्रैकिंग आदि शामिल हैं। अब तक 22 राज्यों और 03 संघ राज्य क्षेत्रों में 4 एसटीसीबी, 131 डीसीसीबी और 12,277 पैक्स सहित 150 से अधिक बैंकों को ईकेसीसी पोर्टल पर ऑन–बोर्ड किया जा चुका है।

v. **सहकारी संस्थाओं के बीच सहकार:** 'सहकारी संस्थाओं के बीच सहकार', सहकारिता आंदोलन का एक मूलभूत सिद्धांत है और इससे अलग–अलग प्रकार की सहकारी संस्थाओं को साथ लाकर आंदोलन को मजबूत बनाने और अर्थव्यवस्था में उनकी भागीदारी बढ़ाने के लिए सहक्रियात्मकता प्राप्त करने में मदद मिलती है।

vi. **ग्रामीण सहकारी संस्थाओं को एक सेवा के रूप में एकाउंट एग्रिगेटर:** एकाउंट एग्रिगेटर (एए) भारतीय रिज़र्व बैंक से लाइसेंस प्राप्त गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ होती हैं, जो लोगों के निजी अथवा कॉर्पोरेट वित्तीय डेटा को धारित करने वाले वित्तीय सूचनाप्रदाताओं (एफआईपी) से वित्तीय सेवाएं प्रदान करने वाले वित्तीय सूचना उपयोगकर्ताओं (एफआईयू) को डेटा उपलब्ध कराने में एक सेतु के रूप में कार्य करती हैं। नाबार्ड, इस एए फ्रेमवर्क के लिए केंद्रीय आधारभूत संरचना प्रदाता के रूप में कार्य करेगा। एक केंद्रीकृत एए प्लैटफॉर्म के नाबार्ड के प्रस्ताव को भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा फरवरी 2025 में सैद्धांतिक अनुमोदन दिया गया है।

vii. **ग्रामीण सहकारी बैंकों के लिए साझाकृत आधार डेटा वॉल्ट:** आधार डेटा वॉल्ट (एडीवी) सभी प्रामाणिक निकायों के आधार–आधारित ईकेवाईसी का एक केंद्रीकृत कूटबद्ध (एन्क्रिप्टेटड) भंडार अथवा अलग संग्राहक होता है। इस वॉल्ट में एक विशिष्ट आधार नंबर अथवा एक संदर्भ कुंजी होगी जो भारत में सामूहिक रूप से सभी निवासियों की एक पहचान संख्या के रूप में कार्य करेगी। इससे आरसीबी के लिए प्रारंभिक निवेश लागतों में कमी आएगी। भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण (यूआईडीएआई) ने 01 अगस्त 2025 को एक परिपत्र जारी

किया है जिसमें एसटीसीबी और डीसीसीबी को आधार प्रमाणीकरण पारिस्थिकी तंत्र पर ऑनबोर्ड करने के लिए फ्रेमवर्क दिया गया है।

viii. **आरसीबी के लिए साइबर बीमाः** सहकारी बैंकिंग के सेक्टर में साइबर सुरक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण पहलुओं के लिए आरसीबी हेतु के लिए एक व्यापक साइबर बीमा सुरक्षा आवश्यक है। नाबार्ड ने अपने बीमा परामर्शदाता, एओएन इंश्योरेंस ब्रोकर्स के परामर्श से आरसीबी के लिए व्यापक साइबर बीमा सुरक्षा सुविधा प्रदान की है। अब तक, कुल 255 बैंकों ने इस सुविधा के तहत साइबर बीमा सुरक्षा का लाभ उठाया है, जिनमें से 232 आरसीबी हैं।

ix. **एनआरएलएम पोर्टलः** नाबार्ड ने भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय की डीएवाई–एनआरएलएम योजना के अंतर्गत महिला स्वयं सहायता समूहों को वित्तपोषित करने वाले आरआरबी और आरसीबी के लिए एनआरएलएम ब्याज सहायता के दावों की प्रस्तुति और संसाधन के कार्य को स्वचालित करने हेतु एनआरएलएम ब्याज सहायता पोर्टल विकसित किया है। वित्तीय वर्ष 2023–24 से प्रारंभ हो चुके इस पोर्टल ने प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित किया है, प्रतिसाद अवधि (टीएटी) को कम किया है और मैन्युअल रूप से प्रस्तुत दावों को कम कर त्रुटियों को न्यूनतम किया है।

x. **नई बहु–उद्देशीय प्राथमिक सहकारी समितियों (एम–पैक्स) का गठन और सुदृढ़ीकरणः** 15 फरवरी 2023 को शुरू की गई इस पहल का उद्देश्य पाँच वर्ष की अवधि में 2 लाख नई एम–पैक्स के साथ–साथ डेयरी और मत्स्यपालन सहकारी समितियों का गठन कर सहकारी आंदोलन को पुनरुज्जीवित करना है। इसका लक्ष्य देश की सभी पंचायतों और गाँवों में प्राथमिक समितियों (एम–पैक्स, डेयरी, मत्स्यपालन) की व्याप्ति सुनिश्चित करना है। नाबार्ड और राज्य सरकारों के लिए संयुक्त लक्ष्य पाँच वर्ष की अवधि में 95,327 एम–पैक्स का गठन करना है। वित्तीय वर्ष 2024–25 के अंत तक, कुल 18,406 नई समितियां स्थापित की गईं, जिनमें 5,175 एम–पैक्स, 11,900 बहु–उद्देशीय डेयरी सहकारी समितियां और 1,331 बहुउद्देशीय मत्स्यपालन सहकारी समितियां शामिल हैं।

xi. **आरसीबी के लिए सहकारी अभिशासन सूचकांकः** आरसीबी की वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए सुदृढ़ अभिशासन प्रणाली और संस्कृति आवश्यक है। आरसीबी में अभिशासन प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए, नाबार्ड द्वारा एक वेब–आधारित सहकारी अभिशासन सूचकांक (सीजीआई) पोर्टल विकसित किया जा रहा है, जिसमें गुणात्मक और मात्रात्मक दोनो प्रकार के मानदंड शामिल होंगे।

xii. **पैक्स त्वरक प्रायोगिक परियोजनाः** नाबार्ड, पैक्स को अपनी ऋणेतर व्यावसायिक गतिविधियों में विविधता लाने में सहायता करने के लिए 'पैक्स त्वमरक कार्यक्रम' कार्यान्वित कर रहा है। प्रायोगिक चरण में, यह कार्यक्रम राजस्थान, उत्तर प्रदेश और तेलंगाणा राज्यों की 30 समितियों में लागू किया जा रहा है। नाबार्ड, चुनी गई व्यावसायिक गतिविधियों को सफलतापूर्वक शुरू करने में पैक्स को सहयोग

प्रदान कर रहा है। पैक्स कर्मियों के क्षमता निर्माण के लिए एक विस्तृत प्रशिक्षण योजना तैयार की गई है।

xiii. **नए एसटीसीबी/डीसीसीबी की स्थापना के प्रयासः** नाबार्ड ने सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में आरसीबी की पहुंच बढ़ाने के लिए एक दृष्टिकोण पत्र तैयार किया है। इसने सहकारी आंदोलन को बढ़ावा देने के लिए संघ राज्य क्षेत्र लद्दाख और लक्षद्वीप में दो नए राज्य सहकारी बैंकों की स्थापना और 240 नए डीसीसीबी की स्थापना की सिफारिश की है। इस रूपरेखा के अंतर्गत, नामक्काल ज़िले में सेलम डीसीसीबी को सेलम डीसीसीबी और नामक्काल डीसीसीबी के रूप में विभाजित कर एक नए डीसीसीबी के गठन के प्रस्ताव को भारतीय रिज़र्व बैंक ने मंजूरी दे दी है।

xiv. **आरसीबी द्वारा टर्नअराउंड योजना और विकास कार्य योजना तैयार करनाः** कमज़ोर आरसीबी को मज़बूत बनाने के उद्देश्य से, नाबार्ड ने ऐसे प्रत्येक बैंक द्वारा टर्नअराउंड योजना तैयार करवाने के प्रयास किए हैं। व्यापक ढाँचे के अंतर्गत, नाबार्ड ने, नाबार्ड की नवीनतम निरीक्षण रेटिंग के अनुसार सी और डी श्रेणी के अंतर्गत आने वाले कमज़ोर आरसीबी बैंकों और पर्यवेक्षी कार्रवाई ढाँचा–टर्नअराउंड के लिए स्व–पहल (एसएएफ–एसआईटीए) के अंतर्गत आने वाले बैंकों को एक बहुआयामी व्यापक टर्नअराउंड योजना (टीएपी) की योजना बनाने और उसे लागू करने के लिए सूचित किया है।

III. नीतिगत समर्थन और कार्यान्वयन में सहयोग

नाबार्ड, सहकारी संस्थाओं के विकास के लिए भारत सरकार और राज्य सरकारों को नीतिगत समर्थन और कार्यान्वयन में सहयोग देता है। इस आलेख में पैक्स के कम्प्यूटरीकरण हेतु केंद्र प्रायोजित योजना का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। ऐसी ही कुछ और पहलों का सारांश नीचे दिया गया है:

i. **राष्ट्रीय सहकारिता नीतिः** नाबार्ड ने नई राष्ट्रीय सहकारिता नीति के निर्माण के लिए आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराई, ताकि 'सहकार से समृद्धि' के ध्येय को साकार करने, देश में सहकारी आंदोलन को मजबूत करने और सहकारिता–आधारित आर्थिक विकास मॉडल को बढ़ावा देने के लिए एक सक्षम संरचना तैयार की जा सके।

ii. **साझा सेवा केंद्र (सीएससी) के रूप में पैक्सः** सहकारिता मंत्रालय, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, नाबार्ड और सीएससी ई–गवर्नेंस सर्विसेज़ इंडिया लिमिटेड के बीच एक सहमति ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए हैं, जिसके तहत पैक्स के माध्यम से बैंकिंग, बीमा, आधार नामांकन/ अद्यतनीकरण, स्वास्थ्य सेवाएँ, पैन कार्ड और रेल/ बस/ हवाई टिकट आदि जैसी 300 से अधिक ई–सेवाएं प्रदान की जाएँगी। 31 मार्च 2024 की स्थिति के अनुसार, 30,647 पैक्स ने ग्रामीण नागरिकों को सीएससी सेवाएं प्रदान करना शुरू कर दिया था, जिसके परिणामस्वरूप इन पैक्स की आय में वृद्धि होगी।

IV. पर्यवेक्षकीय भूमिका

बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 35(6) नाबार्ड को एसटीसीबी, डीसीसीबी और आरआरबी का निरीक्षण करने का अधिकार देती है। इसके अतिरिक्त, नाबार्ड स्वैच्छिक आधार पर राज्य स्तरीय सहकारी संस्थाओं, जैसे – राज्य सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों, शीर्ष बुनकर समितियों, विपणन महासंघों आदि का समय–समय पर निरीक्षण करता रहा है।

नाबार्ड के पर्यवेक्षकीय कार्यों के प्रमुख उद्देश्य निम्नानुसार हैं:

- पर्यवेक्षित संस्थाओं की वित्तीय सुदृढ़ता की जाँच करना;
- यह जाँच करना कि पर्यवेक्षित संस्थाओं के काम–काज का संचालन इस तरीके से किया जा रहा है या नहीं कि जमाकर्ताओं के हितों का संरक्षण हो;
- यह सुनिश्चित करना कि पर्यवेक्षित संस्थाओं के कारोबार में सभी संगत कानूनों का पालन किया जाए;
- यह जाँच करना कि पर्यवेक्षित संस्थाएं भारत सरकार/ भारतीय रिज़र्व बैंक/ नाबार्ड द्वारा जारी नियमों और दिशानिर्देशों का अनुसरण करती हैं या नहीं;
- लाइसेंस जारी रखने/ अनुसूचित बने रहने और विनियामकीय कार्रवाई के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक को अनुशंसात्मक नोट प्रस्तुत करना।

पर्यवेक्षण की प्रक्रिया को डिजिटल बनाने के लिए, नाबार्ड ने 2022 में अपने 41वें स्थापना दिवस पर 'सुपरसॉफ्ट' नामक एक ऑनलाइन एप्लिकेशन लॉन्च किया और तब से नाबार्ड के सभी निरीक्षण इसी डिजिटल प्लैटफॉर्म के माध्यम से किए जाते रहे हैं। 2024–25 के दौरान, नाबार्ड द्वारा किए गए सभी 307 सांविधिक निरीक्षण, जिनमें 43 आरआरबी, 34 एसटीसीबी और 230 डीसीसीबी शामिल हैं, इसी डिजिटल एप्लिकेशन का उपयोग करके किए गए।

निष्कर्ष

ग्रामीण और शहरी अर्थव्यवस्थाओं के बीच विकासगत असमानताएँ चिंता का विषय हैं और देश में आय असमानता को और बढ़ा सकती हैं। कृषि और उससे जुड़े क्षेत्र, जिनमें पशुधन, वानिकी और मत्स्यपालन शामिल हैं, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार हैं और सबसे बड़े ग्रामीण रोज़गार प्रदाताओं में हैं।

सहकारी संस्थाएं एक तीसरा विकल्प उपलब्ध कराती हैं, जिसके एक छोर पर मुक्त बाज़ार संगठन (बाज़ार में विनिमय के जरिये वस्तुएं और सेवाएं देने वाले) हैं और दूसरे छोर पर राज्य के स्वामित्व वाले संगठन (राज्य के नियंत्रण में वस्तुएं और सेवाएं देने वाले) हैं। सर्व–समावेशी सहकारी मॉडल अमृत काल में समतामूलक विकास के लिए एक सफल और संधारणीय आर्थिक विकल्प है। हमारे माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा है, "सहकारिता गाँवों की आत्मनिर्भरता का एक बड़ा माध्यम है; इसमें आत्मनिर्भर भारत की ऊर्जा है"। नाबार्ड ग्रामीण भारत के जीवन और अर्थव्यवस्था में रूपांतरण के अपने प्रयासों में इस विकल्प का उपयोग करने के लिए प्रतिबद्ध है।

सहकारिता : ग्रामीण विकास से राष्ट्र निर्माण तक

– डॉ. वरुण भारद्वाज
उप प्रबंधक (मानव संसाधन–राजभाषा)
केंद्रीय भंडारण निगम, नई दिल्ली

भारत ऐसा देश है जिसकी आत्मा उसके गाँवों में बसती है। महात्मा गांधी ने सही कहा था कि "भारत का भविष्य उसके गाँवों में निहित है।" जब हम ग्रामीण विकास की बात करते हैं, तो यह केवल आर्थिक उन्नति तक सीमित नहीं होता, बल्कि इसमें सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय स्थिरता और सामुदायिक सशक्तिकरण भी शामिल होता है। इस व्यापक लक्ष्य को प्राप्त करने में सहकारिता एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रभावी साधन है। सहकारिता का सिद्धांत "सबके लिए एक और एक के लिए सब" है, जो भारतीय समाज के प्राचीन मूल्यों, जैसे 'वसुधैव कुटुंबकम्' के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है।

आपसी सहयोग और एकजुटता सहकारिता का सबसे मूलभूत सिद्धांत है। भारत में गाँवों में सदियों से 'एक साथ मिलकर काम करने' (जैसे "श्रमदान" या सामुदायिक खेती) की परंपरा रही है। सहकारिता इसी भावना का औपचारिक रूप है। यह मान्यता है कि व्यक्तिगत प्रयास की सीमाएं होती हैं, जबकि सामूहिक प्रयास से बड़ी चुनौतियों का सामना किया जा सकता है।

भारत में सहकारिता का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

पारंपरिक रूप से, भारतीय गाँवों में आपसी सहयोग और सामूहिक कार्य की भावना हमेशा से रही है, चाहे वह खेती के कार्यों में हो या सामाजिक आयोजनों में। तथापि भारत में सहकारिता का इतिहास स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले का है तथा औपचारिक रूप से इसका उदय 20वीं सदी की शुरुआत में हुआ। भारत में सहकारिता का प्रारंभिक चरण वर्ष 1904 से 1947 तक रहा है। भारत में औपचारिक सहकारिता आंदोलन की शुरुआत ब्रिटिश शासन के दौरान कृषि ऋण की समस्या से निपटने के लिए हुई थी। 1904 का सहकारी साख समिति अधिनियम इसका पहला महत्वपूर्ण कदम था, जिसने कृषि ऋण समितियों की स्थापना को प्रोत्साहित किया। इसके बाद 1912 के सहकारी समितियां अधिनियम ने गैर–साख समितियों (जैसे उपभोक्ता, विपणन, और आवास सहकारिता) के गठन की अनुमति दी। इस अवधि में सहकारिता का मुख्य ध्यान किसानों को साहूकारों के शोषण से मुक्ति दिलाना और उन्हें संस्थागत ऋण उपलब्ध कराना था।

स्वतंत्रता के बाद से वर्तमान तक सहकारिता को राष्ट्र निर्माण के एक महत्वपूर्ण स्तंभ के रूप में देखा गया। पंचवर्षीय योजनाओं में इसे प्रमुखता दी गई। सहकारिता आंदोलन का विस्तार कृषि, डेयरी, मछली पालन, हथकरघा, आवास और उपभोक्ता वस्तुओं जैसे विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। श्वेत क्रांति में डेयरी सहकारिता, विशेषकर अमूल मॉडल ने भारत को दुनिया के सबसे बड़े दुग्ध उत्पादक देशों में से एक बना दिया। इसी तरह, इफको और कृभको जैसी उर्वरक सहकारिताओं ने कृषि उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ग्रामीण विकास में सहकारिता की भूमिका

सहकारिता ग्रामीण विकास के लगभग हर पहलू को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। जिनमें प्रमुख पहलू इस प्रकार हैं –

आर्थिक सशक्तिकरण

प्राथमिक कृषि ऋण समितियां (पैक्स) छोटे और सीमांत किसानों को सस्ती दरों पर ऋण उपलब्ध कराकर उन्हें साहूकारों के चंगुल से बचाती हैं। सहकारिताएं किसानों को बीज, उर्वरक, कीटनाशक और कृषि उपकरण जैसे कृषि इनपुटों को उचित मूल्य पर उपलब्ध कराती हैं, जिससे उनकी उत्पादन लागत कम होती है। साथ ही विपणन सहकारिताएं किसानों को बिचौलियों के शोषण से बचाती हैं और उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त करने में मदद करती हैं। यह विशेष रूप से फलों, सब्जियों और डेयरी उत्पादों के लिए महत्वपूर्ण है। कुछ समितियां किसानों के उत्पादों का प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन करती हैं, जिससे उन्हें बेहतर रिटर्न मिलता है (उदाहरण के लिए, दूध से पनीर या मक्खन बनाना)। ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी समितियां प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के अवसर पैदा करती हैं, विशेषकर प्रसंस्करण इकाइयों और विपणन नेटवर्क में।

सामाजिक सशक्तिकरण

सहकारिताएं अपने सदस्यों को लोकतांत्रिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल करती हैं, जिससे उनमें स्वामित्व और जिम्मेदारी की भावना विकसित होती है। यह जमीनी स्तर पर नेतृत्व क्षमता एवं लोकतांत्रिक भागीदारी का विकास करता है। महिला सहकारी समितियां, जैसे स्वयं सहायता समूह के रूप में काम करने वाली सहकारिताएं, ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाने और सामाजिक निर्णय लेने में उनकी भागीदारी बढ़ाने में मदद करती हैं। जिससे लैंगिक समानता को बल मिलता है। सहकारिताएं समुदाय के भीतर विश्वास, सहयोग और एकजुटता की भावना को बढ़ावा देती हैं, जिसे सामाजिक पूंजी कहा जाता है। आय और रोजगार के अवसर पैदा करके, सहकारिताएं ग्रामीण गरीबी को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सहकारिताएं किसानों को नई कृषि तकनीकों, उन्नत किस्मों और बेहतर कृषि पद्धतियों के बारे में शिक्षित करने में मदद करती हैं। वे सदस्यों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करती हैं, जिससे उनकी दक्षता और उत्पादकता बढ़ती है।

आधारभूत संरचना का विकास

सहकारी आवास समितियां ग्रामीण क्षेत्रों में किफायती आवास उपलब्ध कराने में मदद करती हैं। सिंचाई सहकारिताएं कृषि क्षेत्र में जल संसाधनों के कुशल उपयोग को सुनिश्चित करती हैं और सिंचाई सुविधाओं का विकास करती हैं। कुछ स्थानों पर, सहकारिताएं ग्रामीण सड़कों, भंडारण सुविधाओं और अन्य आवश्यक बुनियादी ढाँचे के विकास में भी योगदान देती हैं।

राष्ट्र निर्माण में सहकारिता की भूमिका

सहकारिता ग्रामीण विकास को बढ़ावा देकर अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र निर्माण में कई तरीकों से योगदान करती है। कृषि सहकारिताएं किसानों को बेहतर इनपुट, ऋण और विपणन सुविधाएं प्रदान करती हैं जिससे देश की खाद्य उत्पादन क्षमता बढ़ती है। डेयरी सहकारिताएं (जैसे अमूल) ने दूध उत्पादन

में भारत को आत्म–निर्भर बनाया है, जिससे पोषण स्तर में सुधार हुआ है। सहकारिताएं विकास के लाभों को समाज के सबसे वंचित वर्गों, विशेषकर छोटे किसानों, भूमिहीन मजदूरों, महिलाओं और जनजातीय समुदायों तक पहुंचाती हैं। सहकारिता से आय असमानता कम होती है और एक अधिक समावेशी समाज का निर्माण होता है। सहकारिता यह सुनिश्चित करती है कि आर्थिक विकास केवल कुछ शहरों या वर्गों तक सीमित न रहे, बल्कि पूरे देश में फैले। सहकारी समितियां लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर काम करती हैं और अपने सदस्यों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल करती हैं। यह जमीनी स्तर पर लोगों को सशक्त बनाता है और उन्हें स्थानीय शासन में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित करता है। यह पंचायती राज संस्थाओं के पूरक के रूप में कार्य करती हैं और स्थानीय स्तर पर सुशासन को बढ़ावा देती हैं।

सहकारिताएं छोटे व्यवसायों और किसानों को मिलकर काम करने का अवसर देती हैं, जिससे वे बाजार की अस्थिरता का बेहतर ढंग से सामना कर पाते हैं। वे संकट के समय में सदस्यों को सहायता प्रदान करती हैं, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक लचीली बनती है। सहकारिताएं विभिन्न जाति, धर्म और आर्थिक पृष्ठभूमि के लोगों को एक साझा उद्देश्य के लिए एकजुट करती हैं। यह सामाजिक विभाजन को कम करता है और समुदाय के भीतर सद्भाव और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देता है। यह ग्रामीण–शहरी विभाजन को पाटने में भी मदद करती हैं, क्योंकि ग्रामीण सहकारिताएं शहरी उपभोक्ताओं से जुड़ती हैं। कुछ सहकारी समूह अपने उत्पादों का निर्यात करते हैं, जिससे देश को विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है और अंतरराष्ट्रीय व्यापार में भारत की हिस्सेदारी बढ़ती है। उदाहरण के लिए, कुछ मसाला सहकारिताएं या हस्तशिल्प सहकारिताएं। राष्ट्र निर्माण में सहकारिता के क्षेत्र में विभिन्न ऐतिहासिक एवं नए कदम भी उठाए गए हैं। विवरण इस प्रकार है –

सहकारिता के माध्यम से विश्व की सबसे बड़ी भंडारण योजना की शुरुआत

वर्ष 2021 में स्थापित हुए केंद्रीय सहकारिता मंत्रालय के अंतर्गत भारत सरकार ने "सहकारी क्षेत्र में विश्व की सबसे बड़ी अनाज भंडारण योजना" को मंजूरी दी है। यह एक महत्वाकांक्षी पहल है जिसका उद्देश्य ग्रामीण कृषि–बुनियादी ढांचे में क्रांति लाना और देश भर में पैक्स को सशक्त बनाना है। इस योजना का मूल विचार देश में खाद्यान्न भंडारण क्षमता की कमी को दूर करना है, जिससे कटाई के बाद होने वाले नुकसान को कम किया जा सके और किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य मिल सके। इस योजना के माध्यम से, सरकार का लक्ष्य विकेंद्रीकृत भंडारण सुविधाएं स्थापित करके भंडारण क्षमता की कमी का समाधान करना है। इस योजना का मुख्य ध्यान पैक्स के स्तर पर विभिन्न कृषि बुनियादी ढांचे का निर्माण करना है। इसमें शामिल हैं– गांवों में विकेंद्रीकृत भंडारण सुविधाएं स्थापित करना ताकि किसान अपनी उपज को सीधे अपने गाँव के पास स्टोर कर सकें।

इस योजना को पहले एक पायलट प्रोजेक्ट के रूप में शुरू किया गया है। प्रारंभिक चरण में, 11 राज्यों की 11 पैक्स में गोदामों का निर्माण पूरा हो चुका है, जिससे कुल 9,750 मीट्रिक टन की विकेंद्रीकृत भंडारण क्षमता विकसित हुई है। सरकार का लक्ष्य अगले पांच वर्षों में देश की सभी पंचायतों और गांवों को कवर करने के लिए 2 लाख नई बहुउद्देशीय पैक्स, डेयरी और मत्स्य सहकारी समितियों की स्थापना और सुदृढीकरण करना है। 30 जून, 2025 तक कुल 22,933 नई बहुउद्देशीय पैक्स, डेयरी और मत्स्य सहकारी समितियां पंजीकृत की जा चुकी हैं। यह योजना

भारत में सहकारिता आंदोलन के माध्यम से ग्रामीण बुनियादी ढांचे और किसानों की आजीविका को बदलने के लिए एक गेम–चेंजर साबित हो सकती है, जिससे भारत की खाद्य भंडारण क्षमता में भारी वृद्धि होगी।

राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2025

भारत सरकार ने राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2025 तैयार की है। जिसका उद्देश्य भारत में सहकारिता आंदोलन को सशक्त बनाना, इसे आधुनिक बनाना और ग्रामीण विकास के साथ–साथ देश की समृद्धि में योगदान देना है। यह नीति सहकारिता क्षेत्र को एक नई दिशा देने के लिए बनाई गई है ताकि यह समाज के हर वर्ग, विशेषकर गरीब और कमजोर वर्ग के लोगों को लाभ पहुंचा सके। राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2025 का मुख्य उद्देश्य सहकारी संगठनों की समृद्धि, प्रभावशीलता और कार्यक्षमता को बढ़ाना है, ताकि इन संगठनों को समाज में अपने योगदान को और बेहतर तरीके से निभाने का अवसर मिल सके। इसके तहत सरकार ने सहकारी संस्थाओं को मजबूत करने और उन्हें व्यापक रूप से प्रभावी बनाने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाने की योजना बनाई है। राष्ट्रीय सहकारिता नीति का मुख्य उद्देश्य है कि सहकारिता को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के केंद्रीय तत्व के रूप में स्थापित किया जाए। इससे सहकारी संस्थाएं देश की आर्थिक वृद्धि में सक्रिय रूप से योगदान कर सकेंगी। नीति के तहत सहकारी संस्थाओं के प्रबंधन और प्रशासन को पारदर्शी, जवाबदेह और आधुनिक बनाने की दिशा में कदम उठाए गए हैं। इससे सहकारी संस्थाओं में वित्तीय अनुशासन और सुशासन को बढ़ावा मिलेगा। नीति में सहकारी संगठनों के डिजिटलीकरण और तकनीकी विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसे ध्यान में रखते हुए सहकारी बैंकों, समितियों और अन्य संगठनों के लिए उन्नत डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म और एप्लिकेशंस विकसित करने का प्रावधान है।

इस नीति में ग्रामीण क्षेत्र, कृषि, कृषि उत्पादों, और पशुपालन से संबंधित सहकारी संगठनों के लिए विशेष योजनाएं बनाई गई हैं। इन क्षेत्रों में सहकारी समितियां अधिक सक्रिय रूप से काम करेंगी और किसानों को उनके उत्पादों के बेहतर विपणन, भंडारण और मूल्य निर्धारण में मदद करेंगी। विशेष रूप से दुग्ध सहकारी समितियों और कृषि सहकारी समितियों को बढ़ावा दिया जाएगा। सहकारी बैंकों को वित्तीय समावेशन की दिशा में सक्रिय रूप से काम करने के लिए सक्षम किया जाएगा। इसके तहत गांवों और दूर–दराज के क्षेत्रों में लोगों को सरल और सस्ती वित्तीय सेवाओं का लाभ मिलेगा। साथ ही, यह बैंकों को अधिक पारदर्शी और प्रौद्योगिकियों से जोड़ने का प्रयास किया जाएगा। नीति के तहत सहकारी संस्थाओं में महिला और युवा नेतृत्व को बढ़ावा देने पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। इसके लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों और नीतियों का विकास किया जाएगा, ताकि वे इस क्षेत्र में नेतृत्व की भूमिका निभा सकें।

भारत में सहकारिता ने ग्रामीण विकास के साथ–साथ राष्ट्र निर्माण में भी एक अविस्मरणीय भूमिका निभाई है। इसने लाखों लोगों के जीवन को बदला है, उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त किया है, सामाजिक न्याय को बढ़ावा दिया है और एक मजबूत, समावेशी राष्ट्र के निर्माण में योगदान दिया है। चुनौतियों के बावजूद, सहकारिता आंदोलन में भारत को एक आत्मनिर्भर और समृद्ध राष्ट्र बनाने की क्षमता है। एक मजबूत और जीवंत सहकारी क्षेत्र ही ग्रामीण भारत की आत्मा को जीवंत रख सकता है और उसे 21वीं सदी की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बना सकता है। ग्रामीण विकास के साथ राष्ट्र निर्माण में सहकारिता ही वास्तव में 'सहयोग से समृद्धि' के सूत्र को साकार कर सकती है।

सहकार से समृद्धि : भविष्य निर्माण की नई दिशा

– डॉ. अरुणा त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर
इंद्रप्रस्थ कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू का कथन है कि "मनुष्य स्वभावतः एक सामाजिक प्राणी है।" अर्थात उसकी प्रगति, उसका सुख और उसका अस्तित्व – ये सभी समाज के सहयोग और सामूहिक प्रयासों पर निर्भर करते हैं। वह शून्य में समावेशन की उम्मीद नहीं लगा सकता, समाज की उपस्थिति और उससे जुड़ा साहचर्य उसके विकास की प्रथम आवश्यक शर्त है। समाज से संबद्ध इसी विकास की मूर्त अभिव्यक्ति है – 'सहकारिता'।

सहकारिता उस सिद्धांत पर आधारित है कि जब व्यक्ति अपने संकीर्ण स्वार्थों से ऊपर उठकर सामूहिक हित के लिए कार्य करता है, तब न केवल समाज का कल्याण होता है, बल्कि व्यक्ति का भी नैतिक और मानसिक उत्थान होता है। सहकारिता गांधीजी के 'ग्राम स्वराज' के विचारों से भी जुड़ी हुई है, जहां स्वावलंबन और सामूहिक उत्तरदायित्व समाज के निर्माण के आधार बनते हैं। यह केवल संसाधनों का बंटवारा नहीं, बल्कि जिम्मेदारियों और अधिकारों का समान वितरण भी है। इस प्रकार, सहकारिता एक ऐसा दर्शन है जो हमें यह सिखाता है कि विकास की दौड़ में प्रतिस्पर्धा से अधिक महत्त्वपूर्ण है सहयोग, और जब लोग साथ मिलकर चलते हैं, तो हर राह आसान हो जाती है। कई बार 'प्रतिस्पर्धा' आयामों को संकुचित करती है और 'सहकारिता' आयामों का विस्तार करती है।

भारत की समादृत दर्शन परंपरा में भी 'सहकार से समृद्धि' की अनुगूंज सुनाई पड़ती है "एकं बहुस्याम"– अर्थात "मैं एक हूँ, अनेक हो जाऊँ", यह ऋग्वेद की वह ऋचा है जो सृष्टि की उत्पत्ति की भावना को व्यक्त करती है। यही भाव आगे चलकर सहकारिता की आत्मा बनता है। भारतीय दर्शन में व्यक्ति कभी अकेले नहीं जीता, वह समाज का अभिन्न अंग है, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का विचार इसी का प्रमाण है।

हिंदू पौराणिक कथाओं में भी सहकारिता का रूप बार–बार उभरता है। समुद्र मंथन इसका सबसे बड़ा प्रतीक है– जहां देवों और असुरों ने मिलकर अमृत की प्राप्ति के लिए मंथन किया। यह दर्शाता है कि विरोधी विचारधाराएं भी जब सहयोग करती हैं, तो समाज के लिए कल्याणकारी फल प्राप्त होते हैं। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं – "सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः" अर्थात सहयोग और परस्पर यज्ञ (सहकार्य) के बिना जीवन असंभव है। यहाँ 'यज्ञ', केवल अग्नि में आहुति नहीं, बल्कि परस्पर सेवा, योगदान और उत्तरदायित्व का प्रतीक है, यही सहकारिता का आदर्श है। भारतीय समाज की आत्मा में सहकारिता सदियों से जीवित रही है, चाहे वह ग्रामसभा की सामूहिक निर्णय प्रणाली हो, या अन्नदान व आपत्ति काल में एक–दूसरे का साथ देना। चोल काल का

उत्तरमरूर अभिलेख इसका स्पष्ट प्रमाण है। इसलिए, सहकारिता केवल एक आर्थिक संगठन नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का जीवंत दर्शन है, जहां आत्मनिर्भरता, सामूहिकता और न्यायपूर्ण वितरण एक साथ चलते हैं। जब हम सहकारिता को अपनाते हैं, तो हम न केवल आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ते हैं, बल्कि अपने सांस्कृतिक मूल्यों को भी पुनः जागृत करते हैं।

सहकारिता को महत्व देते हुए सर्वप्रथम हमारे भारतीय संविधान में 97वें संशोधन 2011 के माध्यम से सहकारिता को मौलिक अधिकार का दर्जा प्रदान किया गया जो यह दर्शाता है कि सहकार व्यक्ति के विकास की मूलभूत आवश्यक शर्त है। वर्तमान समय में सहकारिता की असीम उपादेयता को देखते हुए भारत सरकार द्वारा 6 जुलाई 2021 को एक पृथक 'सहकारिता मंत्रालय' की स्थापना की गई। भारत सरकार इस तथ्य से भी भलीभांति अवगत है कि बिना सहकार के '2047 तक विकसित भारत' के लक्ष्य को साधना एक असंभव कार्य है। अपने इसी उद्देश्य को साकार करने के क्रम में राष्ट्रीय सहकारी नीति 2025 प्रस्तावित की गई और एक नव प्रवर्तनकारी मार्ग अपनाते हुए भारत के पहले राष्ट्रीय सहकारी विश्वविद्यालय– 'त्रिभुवन' सहकारिता विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। साथ ही साथ सहकारिता को वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला से संबंध करने हेतु 'राष्ट्रीय सहकारिता निर्यात लिमिटेड' की भी स्थापना करने का प्रस्ताव दिया गया है और युवा शक्ति के दोहन हेतु 'सहकार प्रज्ञा योजना (Sahakar Pragya Initiative)' के तहत 45 प्रशिक्षण मॉड्यूल एवं 18 क्षेत्रीय केंद्रों के माध्यम से सहकारी समितियों को कौशल एवं क्षमता विकास प्रदान किया जा रहा है। 'युवा सहकार योजना' और 'सहकार मित्र' जैसे इंटर्नशिप–उन्मुख कार्यक्रम युवाओं को सहकारी सेक्टर में रोजगार एवं उद्यमिता का अवसर देते हैं।

सहकारिता संस्थाओं की डिजिटल संरचना को सुदृढ़ करने के लिए पैक्स, AGB और रजिस्ट्रार कार्यालयों का कम्प्यूटरीकरण किया गया और देशभर की 8 लाख से अधिक सहकारी समितियों का राष्ट्रीय सहकारी डेटाबेस तैयार किया गया है। बहु–राज्य सहकारी समितियां (संशोधन) अधिनियम, 2023 में संशोधन करके पारदर्शिता, जवाबदेही और सदस्य भागीदारी को और अधिक कानूनी बल प्रदान किया गया। सहकारी क्षेत्र में नवाचार और विस्तार के लिए सरकार ने इफ्को, कृभको, और राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम को पूंजीगत सहायता दी है, साथ ही तीन नई बहु–राज्य सहकारी समितियां (NCOL, BBSSL, NCEL) स्थापित की गई हैं जो बीज, जैविक उत्पाद और निर्यात को बढ़ावा देंगी। 'सहकार प्रज्ञा', 'युवा सहकार' और 'सहकार मित्र' जैसी योजनाओं के माध्यम से युवाओं को सहकारिता में नेतृत्व और उद्यमिता के अवसर दिए जा रहे हैं। साथ ही, महिला स्वयं सहायता समूहों, FPOs, और ग्रामीण सहकारी बैंकों को वित्तीय समावेशन के दायरे में लाकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त करने का प्रयास हो रहा है। इन सभी पहलों का समेकित उद्देश्य है – 'सहकार से समृद्धि', जिससे ग्रामीण भारत आत्मनिर्भर बन सके और आर्थिक विकास को लोकतांत्रिक स्वरूप में दिशा मिल सके।

स्थानीय स्तर पर यदि सफल सहकारिता की चर्चा की जाए और गुजरात का जिक्र न हो तो यह चर्चा अधूरी ही मानी जाएगी। गुजरात, भारत के सहकारिता आंदोलन का अग्रदूत रहा है। यहाँ से कई प्रेरणादायक, प्रभावशाली और सफल सहकारी संस्थाओं की शुरुआत हुई, जो आज भी पूरे देश के लिए आदर्श मॉडल मानी जाती हैं। यदि हम कुछ प्रमुख सफल सहकारी संघों की बात करें तो सबसे पहला नाम अमूल डेयरी का आता है। आणंद, गुजरात में स्थापित यह सहकारी आंदोलन भारत में श्वेत क्रांति की जननी है, इसने जहां एक ओर गांवों में किसानों को आत्मनिर्भर बनाया है तो वहीं

दूसरी ओर भारत के कुपोषण की समस्या को भी साधा है। इसके अतिरिक्त महिला सशक्तिकरण की मिसाल 'लिज्जत पापड़' सहकारी मॉडल को आखिर कौन भुला सकता है। इस प्रकार ऐसे तमाम उदाहरण हैं जहां पर सहकारिता ने समावेशिता को बढ़ावा दिया है।

इन विशेषताओं और लाभों का वितरण न्यायसंगत न हो तो सहकारिता अपने मूल उद्देश्य को खो देगी, ऐसी ही चिंताओं पर नीति आयोग ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। नीति आयोग की रिपोर्ट 'सहकारिताओं में महिला एवं युवा सहभागिता' दर्शाती है कि भारत में सहकारी संस्थाओं में महिलाएं तथा युवा अभी भी लघु हिस्सेदार हैं, लेकिन इनमें अवसर वृद्धि की तीव्र ज़रूरत है। आयोग ने सहकारी समितियों के डिजिटलीकरण, नेतृत्व प्रशिक्षण और SHGs तथा FPOs के माध्यम से युवाओं और महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्रिय और उत्तरदायी बनाने की रणनीति अपनाई है, जिसे 'सहकारी संघवाद' और 'लोकल से ग्लोबल' दृष्टिकोण से प्रमाणित किया गया है। इन पहलों का उद्देश्य सहकारिता को लोकतांत्रिक, समावेशी और ज़मीन से जुड़े विकास के साधन के रूप में स्थापित करना है।

हितोपदेश का एक कथन है, 'अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका' अर्थात अनेक छोटी–छोटी नगण्य वस्तुओं को सही ढंग से एक साथ लाने से बड़े काम भी हो सकते हैं, सहकारिता ऐसे ही कंपाउंड इफेक्ट को प्रदर्शित करती है जहां पर वर्तमान में किए गए छोटे–छोटे प्रयास भी भविष्य में एक बड़ी सफलता की कहानी रचते हैं। देखा जाए तो सहकारिता एक वैश्विक आंदोलन बन चुकी है, जो आज विश्व भर में एक अरब से अधिक लोगों को प्रभावित करती है और 10% से अधिक वैश्विक रोज़गार उपलब्ध कराती है। न्यूज़ीलैंड की फोंटेरा (Fonterra) विश्व की सबसे बड़ी दुग्ध सहकारी संस्था है, जबकि स्पेन की मोंड्रैगन कार्पोरेशन दुनिया का सबसे बड़ा श्रमिक–स्वामित्व वाला सहकारी मॉडल है, जो औद्योगिक, शिक्षा व वित्त जैसे कई क्षेत्रों में कार्यरत है। मोंड्रैगन को अक्सर 'सहकारिता की राजधानी' कहा जाता है। अमेरिका की हेल्थ पार्टनर्स (Health Partners) स्वास्थ्य सेवा की अग्रणी सहकारी संस्था है, और नीदरलैंड की रोबोबैंक (Rabobank) कृषि वित्त में एक वैश्विक नाम है। इसी प्रकार, स्विट्ज़रलैंड की को–ओप समूह (Coop Group) खुदरा क्षेत्र में, और कनाडा का डेसजार्डिन्स समूह (Desjardins Group) बैंकिंग व बीमा क्षेत्र में अग्रणी सहकारिता मॉडल हैं। इन सफलताओं के पीछे लोकतांत्रिक प्रबंधन, सामूहिक स्वामित्व और पारदर्शिता जैसे मूल्य हैं, जिन्हें अंतरराष्ट्रीय सहकारिता अलायंस (ICA) जैसी वैश्विक संस्थाएं समर्थन देती हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित अंतरराष्ट्रीय सहकारिता दिवस (हर वर्ष जुलाई के पहले शनिवार) भी इस आंदोलन के वैश्विक महत्व को रेखांकित करता है।

आज के वैश्वीकृत, बाजार–आधारित और प्रतिस्पर्धात्मक युग में जहां लाभ की होड़ और व्यक्तिगत स्वार्थ हावी होते जा रहे हैं, वहीं सहकारिता एक ऐसा वैकल्पिक मार्ग प्रस्तुत करती है, जो समावेशिता, सामाजिक न्याय और आत्मनिर्भरता को केंद्र में रखता है। कोविड–19 महामारी के दौर ने यह स्पष्ट कर दिया कि जब पारंपरिक आर्थिक ढांचे चरमरा जाते हैं, तब स्थानीय स्तर पर संगठित सहकारी संस्थाएं ही असली राहत बनकर उभरती हैं, चाहे वह दुग्ध वितरण हो, कृषि विपणन हो या स्वास्थ्य सेवाएं। आत्मनिर्भर भारत अभियान, डिजिटल इंडिया और महिला स्वयं सहायता समूहों की सफलताएं इस बात की पुष्टि करती हैं कि जब लोग मिलकर कार्य करते हैं, तो स्थानीय संसाधनों से वैश्विक स्तर पर बदलाव लाया जा सकता है। आज सहकारिता महज़ ग्रामीण भारत की आवश्यकता नहीं, बल्कि शहरी क्षेत्रों, स्टार्टअप्स, गिग–इकोनॉमी और हर क्षेत्र

में सामूहिक नेतृत्व और साझा उत्तरदायित्व की जरूरत बन चुकी है। यह पूंजी और श्रम के बीच संतुलन बनाकर टिकाऊ विकास का मार्ग प्रशस्त करती है।

"संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्" – "साथ चलो, साथ बोलो, और एक मन होकर कार्य करो" – यह ऋग्वेद की ऋचा सहकारिता की भावना को शाश्वत रूप में अभिव्यक्त करती है। जब व्यक्ति स्वयं से ऊपर उठकर समाज की भलाई के लिए कार्य करता है, तो वह न केवल आर्थिक रूप से सशक्त होता है, बल्कि धर्म, करुणा और समता जैसे मूल्यों को भी आत्मसात करता है। सहकारिता हमें यह स्मरण कराती है कि एकता में शक्ति है, और सहयोग ही सृजन का आधार है। अतः सहकारिता न केवल भारतीय संस्कृति की धरोहर है, बल्कि आधुनिक भारत की सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों का उत्तर भी है – एक ऐसा मॉडल जो लाभ से पहले लोक–मंगल को रखता है, और जो विकास को संवेदनशीलता के साथ आगे बढ़ाता है।

संदर्भः

1. शर्मा, डॉ गंगा सहाय, 'ऋग्वेद', संस्कृत साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1979
2. Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education Vol- 15, Issue No- 12, December-2018, ISSN 2230-7540 By Dr Amit Kumar
3. https://www.indiabudget.gov.in/indexhindi.php
4. 11 Years of Government- https://www.pib.gov.in/EventDetail.aspx\ID)1210
5. https://www.cooperation.gov.in/hi/ministry-cooperation
6. Celebrating the International Year of Cooperatives. https://2025-coop/
7. Chapter 3, Verse 10, 'Bhagavad Gita', The Song of God

सहकारः भारतीय चिंतन की आत्मा

– भावना सक्सैना
सहायक निदेशक, राजभाषा विभाग

भारत की सांस्कृतिक चेतना में यदि कोई विचार सबसे गहराई तक रचा–बसा है, तो वह है– "वसुधैव कुटुम्बकम्"। उपनिषदों से निकला यह महान सूत्र बताता है कि पृथ्वी केवल भौगोलिक क्षेत्र नहीं, बल्कि एक जीवंत परिवार है। जैसे परिवार में सहयोग, सहभागिता और साझा जिम्मेदारी होती है, वैसे ही समाज और राष्ट्र भी तभी सशक्त हो सकते हैं जब वे आपसी सहकार की भावना से प्रेरित हों। यही वह भावभूमि है, जिसमें सहकारिता की अवधारणा अंकुरित हुई–एक ऐसा सामाजिक दर्शन जो न केवल आर्थिक जीवन का ढाँचा बदलता है, बल्कि मनुष्य को आत्मबल और सामूहिक चेतना से जोड़ता है। भारत का सहकारी आंदोलन इसी सांस्कृतिक माटी से जन्मा है, इसलिए इसकी पहचान वैश्विक संदर्भों में भी विशिष्ट है। यह वास्तव में विवशता से विश्वास तक की यात्रा का सशक्त उदाहरण है–एक ऐसा पथ जहां व्यक्ति की सीमाएं सामूहिक शक्ति में रूपांतरित हो जाती हैं।

"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्" –महाउपनिषद् की यह उद्घोषणा केवल एक वैदिक विचार नहीं, बल्कि भारतीय चिंतन का मूलस्वर है। यह हमें यह सिखाती है कि जो मनुष्य केवल अपनी सीमित दृष्टि से 'यह मेरा है, यह तेरा है' की गणना करता है, वह संकुचित चेतना का धनी होता है। उसकी सोच स्वार्थपरता और विभाजन से ग्रस्त होती है। परंतु जिनके आचरण उदार हैं, जिनका हृदय समस्त सृष्टि के प्रति स्नेह और संवेदना से भरा है, उनके लिए यह पूरी पृथ्वी ही परिवार के समान है। वहाँ न कोई पराया होता है, न कोई विरोधी–केवल संबंध होते हैं, सहभागिता होती है, सहकार होता है।

यह श्लोक केवल वैचारिक उदात्तता नहीं सिखाता, बल्कि यह एक व्यावहारिक नीति है, एक सामाजिक दृष्टिकोण है, जो वर्तमान युग की विकट चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करता है। इस मंत्र में जो 'उदारचरितानां' शब्द है, वह केवल दानशील या करुणाशील व्यक्ति की बात नहीं कर रहा–वह उस चेतना की बात कर रहा है जो सीमाओं से परे सोचती है, जो व्यक्ति और समाज, राष्ट्र और विश्व, अपने और पराए के बीच कृत्रिम दीवारें नहीं खड़ी करती। ऐसी चेतना ही सहकारिता की वास्तविक भूमि है।

सहकारिता का आधार कोई व्यवसायिक समझौता नहीं, बल्कि ऐसा ही उदार दृष्टिकोण है, जहां संबंधों की नींव आर्थिक लाभ पर नहीं, बल्कि पारस्परिक विश्वास, न्यायसंगत व्यवहार और साझी जिम्मेदारी पर रखी जाती है। जब हम किसी समुदाय, संस्था या राष्ट्र को केवल अपने हितों के चश्मे से नहीं देखते, बल्कि साझा विकास और सामूहिक हितों की दृष्टि से देखते हैं, तब सहकार की भावना अपने आप विकसित होती है।

भारत में सहकारिता इसीलिए केवल एक आर्थिक संरचना नहीं रही, बल्कि एक जीवन दृष्टि बनी है। यह दृष्टि व्यापार से अधिक संबंधों को महत्त्व देती है, लाभ से अधिक लोक को और प्रतिस्पर्धा से अधिक समरसता को। यही कारण है कि भारत में सहकारी आंदोलन केवल उत्पादन या विपणन का माध्यम नहीं बना, बल्कि सामाजिक समरसता, आर्थिक न्याय और सांस्कृतिक एकता का स्तंभ बन गया। यह दृष्टिकोण इस बात को साकार करता है कि जब पृथ्वी परिवार बन जाती है, तो सहकारिता उसका स्वाभाविक धर्म बन जाती है—वह आचरण जो जीवन को संतुलन, सहयोग और सह–अस्तित्व की ओर ले जाता है।

यदि हम प्राचीन भारत की ओर लौटें, तो सहकारिता केवल वैचारिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक स्तर पर समाज की रगों में प्रवाहित होती थी। गाँवों में जल प्रबंधन सामूहिक श्रम से होता—कुएँ, बावड़ियाँ, नहरें पूरे समुदाय की साझी धरोहर होतीं। दक्षिण भारत के 'एरी' और राजस्थान के 'जोहर' जैसे उदाहरण इसी की मिसाल हैं। कृषि कार्यों में भी यही सहकार भाव दिखता—बुवाई, कटाई के समय पूरा गाँव एक–दूसरे की सहायता करता। धार्मिक उत्सव, विवाह, अनुष्ठान—हर सामाजिक प्रसंग पूरे समुदाय के सहयोग से ही सम्पन्न होता। यह सहकारिता का जीवंत, जैविक रूप था, जहां सहयोग जीवन की स्वाभाविक प्रक्रिया थी।

फिर जब औपनिवेशिक शासन ने भारतीय समाज को अपने निर्मम आर्थिक तंत्र में जकड़ लिया, किसानों को लगान की बेड़ियों में बाँधा और कारीगरों को औद्योगिक पूँजीवाद की चक्की में पीस डाला, तब सहकारिता ने एक नई आशा का संचार किया। यह वह समय था जब भारत की पारंपरिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था टूट रही थी, सामुदायिक जीवन बिखर रहा था, और व्यक्तियों को संगठित होकर अपने अधिकारों और आवश्यकताओं की रक्षा करने की तीव्र आवश्यकता थी। ऐसे कठिन समय में, सहकारी सिद्धांत केवल एक संगठनात्मक ढाँचा नहीं, बल्कि एक सामाजिक औषधि बनकर उभरा—एक ऐसा उपाय जो शोषण की व्यवस्था में विश्वास की खिड़की खोलता था।

1904 में पारित सहकारी ऋण समिति अधिनियम और उसके बाद 1912 में लाया गया सहकारी समिति अधिनियम, भारत में सहकारी आंदोलन की औपचारिक शुरुआत के मील स्तंभ बने। इन कानूनों ने न केवल किसानों को साहूकारों की दासता से मुक्ति दिलाने का मार्ग प्रशस्त किया, बल्कि ग्रामीण समाज में आर्थिक लोकतंत्र की कल्पना को भी मूर्त रूप देना शुरू किया। इन व्यवस्थाओं के ज़रिए गाँवों में छोटे–छोटे समूह बनाकर लोगों को सामूहिक बचत, कर्ज़ वितरण और उत्पादन की साझा व्यवस्थाओं से जोड़ा गया। यह भरोसे, आत्मनिर्भरता और स्थानीय नेतृत्व के विकास का प्रथम मंच बना।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान सहकारिता ने केवल आर्थिक उपकरण के रूप में ही नहीं, बल्कि एक राजनीतिक और नैतिक मूल्यों से जुड़ी चेतना के रूप में कार्य किया। महात्मा गांधी ने 'ग्राम स्वराज' की जो परिकल्पना की थी, उसका मूल यही था कि जब गाँव अपने संसाधनों, जरूरतों और निर्णयों के लिए स्वयं पर निर्भर होंगे, तभी राष्ट्र सच्चे अर्थों में स्वतंत्र और समृद्ध बन सकेगा। उनके लिए स्वराज का अर्थ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि आत्मनिर्भरता, नैतिकता और पारस्परिक सहयोग से संपन्न जीवन था—और सहकारिता इसी लक्ष्य की सिद्धि का मार्ग बनती है।

सरदार वल्लभभाई पटेल ने इस विचार को धरातल पर उतारते हुए गुजरात के खेड़ा जिले में एक

ऐतिहासिक सहकारी प्रयोग किया। उन्होंने वहाँ के किसानों को संगठित कर न केवल अंग्रेज़ों के शोषणकारी कर–नीति का विरोध किया, बल्कि एक प्रेरणास्पद सहकारी आंदोलन खड़ा किया, जिसने यह दिखा दिया कि यदि लोग एकजुट हों, तो वे अन्यायपूर्ण शासन के विरुद्ध खड़े हो सकते हैं और अपने अधिकारों की रक्षा कर सकते हैं। उनका यह कार्य केवल एक आंदोलन नहीं था, बल्कि यह सहकारिता की शक्ति का जीवंत उदाहरण था, जिसमें सामूहिकता ही शक्ति बनी।

इस प्रकार, भारत में सहकारिता का उद्भव किसी बाहर से थोपे गए ढांचे के रूप में नहीं हुआ, बल्कि यह उस स्वदेशी चेतना की उपज थी, जो आत्मनिर्भरता, समानता और सामाजिक न्याय को अपना मूलधर्म मानती है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सहकारिता ने औपनिवेशिक युग में भारत की सामूहिक चेतना को पुनः जाग्रत किया और स्वतंत्रता की राह को न केवल राजनीतिक, बल्कि सामाजिक और आर्थिक स्तर पर भी मजबूत किया।

इस भावना का सर्वाधिक प्रभावशाली रूप हमें अमूल में दिखता है। 1946 में आणंद (गुजरात) के किसानों ने मिलकर दूध उत्पादकों का सहकारी संगठन बनाया और बिचौलियों के शोषण से मुक्ति पाई। यही अमूल आगे चलकर भारत में 'श्वेत क्रांति' का सूत्रधार बना। यह केवल एक संस्था नहीं, बल्कि यह बताता है कि जब व्यक्ति परिवार की तरह मिलकर कार्य करते हैं, तो परिणाम राष्ट्र और विश्व की तस्वीर बदल सकते हैं। अमूल ने किसानों को उचित मूल्य, महिलाओं को सम्मान और देश को वैश्विक नेतृत्व दिया।

स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने सहकारिता को योजनाबद्ध रूप से अपनाया। पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारी समितियां गाँव–गाँव में फैल गईं। इफ्को और कृभको जैसी संस्थाओं ने खाद्य सुरक्षा और कृषि उत्पादन में क्रांति लाई, जबकि पैक्स ने वित्तीय समावेशन को घर–घर पहुंचाया। आज भारत में लगभग 8.5 लाख सहकारी संस्थाएं हैं जिनसे 30 करोड़ से अधिक लोग जुड़े हैं–यह आँकड़ा स्वयं में इस आंदोलन की व्यापकता और गहराई को दर्शाता है।

जुलाई 2021 में सहकारिता मंत्रालय की स्थापना इसी दिशा में एक ऐतिहासिक पहल थी। उद्देश्य स्पष्ट था–सहकारिता को तकनीक से जोड़ना, छोटे किसानों और श्रमिकों को सशक्त बनाना, और भारतीय सहकारी संस्थाओं को वैश्विक प्रतिस्पर्धा के अनुकूल बनाना। "सहकार से समृद्धि" केवल एक नारा नहीं, बल्कि एक विजन है, जिसके अंतर्गत पैक्स का डिजिटलीकरण, सहकारी विश्वविद्यालय की स्थापना और नई नीतियों की पहल की गई है।

इस दिशा में एक महत्वपूर्ण वैश्विक पड़ाव 2025 का वर्ष है, जिसे संयुक्त राष्ट्र ने "अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष" घोषित किया है। "सहकारिता बेहतर विश्व का निर्माण करती है" इस वर्ष की थीम है। नवंबर 2024 में दिल्ली में आयोजित अंतरराष्ट्रीय सहकारी सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत की सहकारी परंपरा को "way of life" कहा–दुनिया के लिए यह भले ही एक मॉडल हो, भारत के लिए यह जीवन का मूल्य है। भारत द्वारा प्रस्तुत New Delhi Action Agenda में सहकारी पहचान, नीति–संरचना, नेतृत्व विकास और सतत विकास के साथ समन्वय जैसे चार स्तंभ तय किए गए हैं, जो सहकारिता को वैश्विक परिवर्तन का आधार बना सकते हैं।

सहकारिता का सबसे उज्ज्वल पक्ष यह है कि इसने महिलाओं को आत्मनिर्भरता की राह दी है। स्वयं सहायता समूहों और महिला डेयरी सहकारिताओं ने लाखों ग्रामीण महिलाओं को न केवल

आर्थिक रूप से, बल्कि सामाजिक रूप से भी सशक्त किया है। अमूल जैसी संस्थाओं से जुड़ी लाखों महिलाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि सहकारिता केवल विकास की प्रक्रिया नहीं, बल्कि सम्मान और समानता की संस्कृति भी है।

आज जब विश्व जलवायु संकट, आर्थिक विषमता और बेरोज़गारी जैसी जटिल चुनौतियों से जूझ रहा है, सहकारिता सतत विकास का सबसे व्यावहारिक और मानवीय मॉडल प्रस्तुत करती है। यह स्थानीय स्तर पर अवसरों का निर्माण करती है, संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण सुनिश्चित करती है और पर्यावरण–संवेदी जीवनशैली को बढ़ावा देती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यही है कि लाभ नहीं, बल्कि लोग इसके केंद्र में होते हैं।

सहकार केवल सामाजिक व्यवहार का एक तत्त्व नहीं, बल्कि एक जीवनदृष्टि है, जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा को जीवंत करती है। जब हम समस्त विश्व को एक परिवार मानते हैं, तो उसके संचालन का आधार सहकार ही हो सकता है। परिवार में जहां भावनाएं होती हैं, वहीं जिम्मेदारियां भी होती हैं। इसी प्रकार वैश्विक परिवार के सदस्यों–विभिन्न देशों, संस्कृतियों और समुदायों–के बीच परस्पर सहयोग, समर्पण और सामूहिक उत्तरदायित्व का भाव अत्यंत आवश्यक है। आज जब मानवता जलवायु परिवर्तन, असमानता, युद्ध, महामारी और संसाधनों के संकट जैसी चुनौतियों से जूझ रही है, तब किसी एक देश का प्रयास पर्याप्त नहीं। सहयोग ही वह शक्ति है, जो विभिन्न क्षमताओं, संसाधनों और विचारों को जोड़कर समाधान की दिशा में अग्रसर कर सकता है।

सहकार विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आदान–प्रदान में हो, अथवा शिक्षा, स्वास्थ्य और संस्कृति के क्षेत्रों में–उसका उद्देश्य केवल विकास नहीं, बल्कि संतुलित और समावेशी उन्नति होना चाहिए। सहकार का भाव प्रतिस्पर्धा की भावना को निरस्त नहीं करता, बल्कि उसे स्वस्थ दिशा देता है। जब राष्ट्र, संगठन और व्यक्ति एक–दूसरे के पूरक बनते हैं, तब संपूर्ण विश्व एक जीवन्त, न्यायसंगत और समरस समाज के रूप में विकसित होता है। अतः यह कहना युक्तिसंगत है कि सहकार – वैश्विक परिवार का आधार है; एक ऐसा आधार, जो विविधताओं के बीच एकता, मतभेदों के बीच संवाद और संकटों के बीच समाधान का सेतु बनता है। यदि मानवता को टिकाऊ भविष्य की ओर बढ़ना है, तो उसे सहकार की भाषा बोलनी होगी–एक ऐसी भाषा, जो सीमाओं से परे जाकर विश्वास, संवेदनशीलता और समता की भावना को पोषित करे। यही भाव हमें न केवल एक वैश्विक नागरिक बनाता है, बल्कि एक सच्चे मानव के रूप में परिपक्व करता है।

विवशता से विश्वास तक का यह मार्ग वास्तव में मानवीय गरिमा की यात्रा है। जब कोई अकेला पड़ जाता है, संसाधनों से वंचित हो जाता है, तब सहकार का भाव उसे शक्ति देता है, उसके आत्मविश्वास को पुनर्जीवित करता है। भारत ने बार–बार यह दिखाया है कि विवशता कभी स्थायी नहीं होती–यदि लोग मिलकर, विश्वास के साथ, साझा उद्देश्य के लिए खड़े हो जाएं।

अंततः, वसुधैव कुटुम्बकम् और सहकारिता एक–दूसरे के पूरक हैं। एक विचार है, दूसरा उसका क्रियात्मक रूप। भारत ने इन्हें समरस कर एक ऐसी जीवन व्यवस्था निर्मित की है जो न केवल अपने समाज को सशक्त करती है, बल्कि वैश्विक मानवता को भी दिशा देती है। जब पूरी पृथ्वी को परिवार मान लिया जाए, तब सहकारिता केवल संस्था नहीं रह जाती–वह मानवता का स्वभाव बन जाती है।

लोकतांत्रिक भागीदारी का सशक्त माध्यमः सहकारिता

– सतीश चन्द्र डबराल
संपादक हिंदी, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, भारत सरकार

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। कोई भी व्यक्ति अकेला नहीं रह सकता, क्योंकि अकेला रहना एक बहुत बड़ी साधना है। जो लोग समाज या परिवार में रहते हैं वे इसलिए रहते हैं कि उन्हें एक दूसरे की सहायता की आवश्यकता होती है। जब समाज में व्यक्ति मिलकर किसी कार्य को करने के लिए एकजुट होते हैं तो सहकारिता का जन्म होता है। सहकारिता एक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है, जिसमें लोग स्वेच्छा से एक साथ आकर समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए कार्य करते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ से अधिक सामूहिक कल्याण होता है। इसमें प्रत्येक सदस्य का योगदान होता है और निर्णय प्रक्रिया में समान भागीदारी होती है।

सहकारिता का अर्थ है–"साथ मिलकर कार्य करना"। यह एक ऐसी प्रणाली है जिसमें लोग आपसी सहयोग से एक संस्था बनाते हैं, जिसमें:

- सदस्य बराबरी के होते हैं अर्थात एक सदस्य, एक वोट
- लाभ और ज़िम्मेदारी सभी में साझा होती है
- मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना नहीं, बल्कि सदस्यों का भला करना होता है

सहकारिता के प्रकार

सहकारिता संस्थाएं विभिन्न उद्देश्यों के आधार पर कई प्रकार की होती हैं। मुख्य प्रकार नीचे दिए गए हैं:

1. **उपभोक्ता सहकारी समितियां**

   ये समितियां उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर वस्तुएं और सेवाएं प्रदान करने के लिए बनती हैं। उदाहरण के लिए किराना दुकान, सस्ती दवाओं की दुकान।

2. **उत्पादक सहकारी समितियां**

   ये समितियां छोटे उत्पादकों (जैसे कारीगर, कुम्हार, बुनकर आदि) को एक साथ लाकर बाज़ार, कच्चा माल और तकनीकी सहायता देती हैं। इनका उद्देश्य है उत्पादन की लागत कम करना और लाभ बढ़ाना

3. **कृषि सहकारी समितियां**

   ये समितियां बीज, खाद, उपकरण, ऋण और विपणन में मदद करने के लिए किसानों की

सहायता हेतु बनाई जाती हैं। प्राथमिक कृषि ऋण समितियां, कृषि विपणन समितियां, डेयरी सहकारी समितियां (जैसे अमूल) इनके उप प्रकार हैं।

4. ऋण सहकारी समितियां

ये समितियां अपने सदस्यों को कम ब्याज पर ऋण देती हैं। ये दो प्रकार की होती हैं: ग्रामीण (पैक्स), शहरी (शहरी सहकारी समिति बैंक)

5. आवास सहकारी समितियां

ये समितियां अपने सदस्यों को सस्ती और सुरक्षित आवास उपलब्ध कराती हैं। ज़मीन खरीद, मकान निर्माण, फ्लैट आवंटन आदि में सहायक होती हैं।

6. कर्मचारी सहकारी समितियां

ये ऐसे उद्यम होते हैं जिनका स्वामित्व और संचालन कर्मचारी स्वयं करते हैं। इनका उद्देश्य, कर्मचारियों के लिए रोजगार और लाभ सुनिश्चित करना है।

7. मल्टी–पर्पज़ सहकारी समितियां

ये समितियां एक से अधिक उद्देश्य के लिए होती हैं: जैसे ऋण देना, उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध कराना, उत्पादन करना आदि।

स्वतंत्रता पूर्व घटनाक्रम

वर्ष 1946 में सरदार वल्लभ भाई पटेल से प्रेरित होकर और श्री मोरारजी देसाई एवं श्री त्रिभुवनदास पटेल के नेतृत्व में गुजरात के खेड़ा जिले के दुग्ध उत्पादक 15 दिन की हड़ताल पर चले गए। उनकी ओर से दुग्ध आपूर्ति न किए जाने के कारण बाम्बे सरकार को अपने उस आदेश को वापस लेने के लिए विवश होना पड़ा जिसमें एक प्राइवेट डेयरी पॉलसन को एकाधिकार अधिप्राप्ति अधिकार दिए गए थे। उस समय एक इतिहास रचा गया जब दो प्राथमिक ग्राम दुग्ध उत्पादक समितियां अक्टूबर, 1946 में पंजीकृत हुई। इसके तुरंत बाद 14 दिसम्बर, 1946 को खेड़ा जिला सहकारी दुग्ध उत्पादक मिल्क यूनियन पंजीकृत हुई जिसे अमूल के नाम से जाना गया।

स्वतंत्रता पश्चात् के घटनाक्रम

वर्ष 1947 में भारत की आजादी के पश्चात् सहकारिता विकास को गति प्राप्त हुई जिसमें योजना आयोग द्वारा तैयार की गई विभिन्न योजनाओं में सहकारी समितियों को एक महत्वपूर्ण भूमिका दी गई।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56) में भारत में सहकारिता आंदोलन के विजन के बारे में विस्तार से बताया गया और आर्थिक एवं राजनीतिक विकास के लिए अधिमान्य संगठनों के रूप में सहकारिता समितियों और पंचायतों पर बल दिए जाने का औचित्य बताया गया। इस योजना में सामुदायिक विकास के सभी पहलुओं को शामिल करने के लिए संगठन की सहकारी पद्धति को अपनाने पर बल दिया गया। इसमें शहरी सहकारी बैंकों, कामगारों की औद्योगिक सहकारिता समितियों, उपभोक्ता सहकारिता समितियों, आवासन सहकारिता समितियों, सहकारी प्रशिक्षण एवं शिक्षा के माध्यम से जानकारी के प्रसार का प्रावधान किया गया तथा यह संस्तुति की गई कि प्रत्येक सहकारी विभाग सहकारिता समितियों की स्थापना की नीति का पालन करें। इसके बाद

सरकार द्वारा समय–समय सहकारी समितियों को मजबूती प्रदान करने हेतु विभिन्न अधिनियम एवं कानून बनाए गए।

केन्द्र सरकार ने जुलाई, 2021 में एक स्वतंत्र मंत्रालय के रूप में सहकारिता मंत्रालय स्थापित किया। देश के स्वतंत्र होने के बाद से और नया मंत्रालय के बनने से पहले, सहकारिता से संबंधित विषय **कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय** के अंतर्गत आते थे।

सहकारिता मंत्रालय बनने से पहले इसकी स्थिति इस प्रकार थी–

- सहकारिता विषय कृषि मंत्रालय के अंतर्गत आता था।
- इसमें "सहकारिता" एक विभागीय कार्य था, न कि स्वतंत्र मंत्रालय।

इस विभाग के प्रमुख कार्य थे:

1. सहकारी समितियों का पंजीकरण और विनियमन (हालांकि यह विषय संविधान के अनुसार राज्य सूची में आता है, लेकिन केंद्र मार्गदर्शन देता था)।
2. राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम जैसे संस्थानों के माध्यम से वित्तीय सहायता देना।
3. सहकारी बैंकों और क्रेडिट सोसाइटीज़ की निगरानी और नीति निर्माण में सहयोग।
4. बहु–राज्यीय सहकारी समितियों से संबंधित नीतियों का निर्धारण।
5. कृषि विपणन, भंडारण, और वितरण में सहकारी संस्थाओं की भूमिका को प्रोत्साहन देना।

सहकारिता मंत्रालय की स्थापना देश में सहकारी आंदोलन को मजबूत करने के लिए एक अलग प्रशासनिक, कानूनी और नीतिगत ढांचा प्रदान करने के लिए जिम्मेदार है। इसका उद्देश्य सहकारी समितियों को एक सच्चे जन–आधारित आंदोलन के रूप में जमीनी स्तर तक पहुंचाना और सहकारी आधारित आर्थिक मॉडल विकसित करना है जहां प्रत्येक सदस्य जिम्मेदारी की भावना के साथ काम करता है। मंत्रालय की प्रमुख गतिविधियों में सहकारी समितियों के लिए 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' के लिए प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करना और बहु–राज्य सहकारी समितियों के विकास को सक्षम करना शामिल है। यह मजबूत करने, पारदर्शिता लाने, आधुनिकीकरण, कंप्यूटरीकरण, प्रतिस्पर्धी सहकारी समितियों का निर्माण करने, ग्रामीण क्षेत्रों में हर वंचित के लिए विकास की पहुंच की चुनौती को पूरा करने के लिए लगातार काम करने और हर गांव को सहकारिता से जोड़ने, हर गांव को "सहकार से समृद्धि" के मंत्र से समृद्ध बनाने पर जोर देता है और इसके माध्यम से देश को समृद्ध बनाना। इस मंत्रालय का मुख्य दायित्व 'सहकारिता से समृद्धि' के विजन को प्राप्त करना, देश में सहकारिता आंदोलन को सुदृढ़ करना और निचले स्तर तक इसकी पहुंच को बढ़ाना, सहकारिता–आधारित आर्थिक विकास मॉडल को बढ़ावा देना और सहकारिता को उसकी क्षमता अर्जित करने में सहायता देने के लिए उपयुक्त नीतिगत, कानूनी और संस्थागत ढांचे का सृजन करना है।

नया सहकारिता मंत्रालय बनने के बाद उद्देश्यः

1. "सहकार से समृद्धि" के लक्ष्य को आगे बढ़ाना।
2. सहकारी आंदोलन को सशक्त, पारदर्शी और आधुनिक बनाना।
3. बहु–राज्यीय सहकारी समितियों के नियमन को केंद्रीकृत और मजबूत करना।
4. ग्रामीण और कृषि विकास में सहकारी संस्थाओं की भागीदारी को बढ़ाना।

दिनांक 6 जुलाई, 2021 में सहकारिता मंत्रालय के बनने के बाद से मंत्रालय द्वारा अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु महत्वपूर्ण निर्णय लिए जिनके दूरगामी परिमाम प्राप्त हो रहे हैं, यह निर्णय हैः–

1. बहु–राज्य सहकारी समिति अधिनियम (संशोधन), 2022

- **उद्देश्यः** बहु–राज्य सहकारी समितियों को पारदर्शी, उत्तरदायी और डिजिटल बनाना।
- **प्रमुख बिंदुः**
  - ○ डिजिटल पंजीकरण की सुविधा
  - ○ शिकायत निवारण प्रणाली
  - ○ चुनाव प्रक्रिया को पारदर्शी बनाना
  - ○ अनुपालन के लिए निगरानी तंत्र

2. "सहकार से समृद्धि" पोर्टल की शुरुआत

- लॉन्च वर्षः 2023
- **उद्देश्यः** देश भर की सहकारी समितियों का डिजिटल डेटाबेस बनाना।
- **लाभः** पारदर्शिता, नीति निर्माण में सुविधा, योजनाओं का बेहतर लक्ष्य निर्धारण।

3. राष्ट्रीय सहकारी नीति का प्रारूप तैयार करना

- **विवरणः** पहली बार एक समर्पित राष्ट्रीय सहकारी नीति बनाई जा रही है।
- **फोकस क्षेत्रः**
  - ○ समावेशिता
  - ○ तकनीकी उन्नयन
  - ○ शिक्षा और प्रशिक्षण
  - ○ सहकारी समितियों का विविधीकरण

4. 3 लाख नई सहकारी समितियों का गठन अभियान

- **लक्ष्यः** 2025 तक 3 लाख नई सहकारी समितियां बनाना
- **प्राथमिकता क्षेत्रों में गठनः**
  - ○ दुग्ध, मत्स्य, कृषि प्रसंस्करण

- महिला और युवा समितियां
- जनजातीय क्षेत्र

5. राष्ट्रीय सहकारी निर्यात समाज का गठन

- **उद्देश्य:** सहकारी क्षेत्र को निर्यात में भागीदार बनाना।
- किसानों, दस्तकारों और सहकारी संस्थाओं को वैश्विक बाज़ार में पहुंच देना।

6. राष्ट्रीय सहकारी डेटाबेस निर्माण

- **विवरण:** देश की सभी 8 लाख+ सहकारी समितियों का डेटा डिजिटल रूप से एकत्र करना।
- **लाभ:** योजना वितरण, अनुदान ट्रैकिंग, निगरानी में सुविधा

7. सहकारी समितियों को जेम (GeM) पोर्टल से जोड़ा गया

- अब सहकारी समितियां सरकारी ई–मार्केटप्लेस पर खरीदारी व विक्रय कर सकती हैं।
- पारदर्शी लेन–देन को बढ़ावा मिला।

8. सहकारी बैंकों को CRCS पोर्टल से जोड़ना

- CRCS / Central Registrar of Cooperative Societies
- बहु–राज्य समितियों की निगरानी और पारदर्शिता सुनिश्चित करना।

9. महिला और युवा समितियों को प्राथमिकता

- महिला स्वयं सहायता समूहों को सहकारी समितियों में परिवर्तित करने की पहल।
- युवा सहकारी समितियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम व स्टार्टअप सहयोग।

मुख्य उद्देश्य सहकारी संस्थाओं और समितियों को सशक्त करना है, जिससे समाज के हर वर्ग को वित्तीय, सामाजिक और विकासात्मक फायदे मिल सकें। निम्नलिखित कुछ मुख्य लाभ हैं जो इस मंत्रालय के गठन के बाद आम जनता को हो रहे हैं:

1. आर्थिक समृद्धि का सृजन

सहकारी संस्थाओं को सशक्त बनाने से आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है। किसानों, छोटे व्यापारियों, और अन्य सामाजिक समूहों को आसान ऋण, बेहतर विपणन नेटवर्क और सामूहिक क्रय–क्षमता का लाभ मिलता है। किसान अपनी फसल को एकत्रित करके सहकारी समितियों के माध्यम से बेहतर कीमत पर बेच सकते हैं। यह उन्हें मूल्य में अस्थिरता से बचने में मदद करता है।

2. स्व–निर्भरता और सामाजिक समावेशिता

सहकारिता मंत्रालय ने सहकारी आंदोलन को मजबूत करने का कार्य किया है, जिससे आर्थिक समावेशिता बढ़ी है। खासकर ग्रामीण इलाकों और कमज़ोर वर्गों के लोगों को रोजगार और वित्तीय सहायता मिल रही है। महिलाओं और अनुसूचित जाति/जनजाति समुदायों को सहकारी

संस्थाओं के जरिए आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

3. बेहतर शिक्षा और प्रशिक्षण के अवसर

मंत्रालय के प्रयासों से अब सहकारी संस्थाओं और समूहों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों और शिक्षा के अवसरों का विस्तार हुआ है। इससे लोगों को सामूहिक रूप से काम करने और व्यापार चलाने की क्षमता मिल रही है।

4. रोजगार के नए अवसर

सहकारी संस्थाएं रोजगार के नई संभावनाएं सृजित करती हैं। व्यापार और उद्योग से जुड़े कई क्षेत्रों में अब नई सहकारी समितियां बन रही हैं, जो ग्रामीण युवाओं और बेरोजगार लोगों के लिए काम के अवसर उत्पन्न कर रही हैं।

5. स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार

सहकारी समितियां स्वास्थ्य योजनाओं और समाज कल्याण परियोजनाओं के संचालन में मदद करती हैं, जो गरीब और हाशिए पर रहने वाले लोगों के लिए फायदेमंद होती हैं। उदाहरण के लिए, सहकारी समितियों के माध्यम से लोगों को सस्ती दवाइयाँ, स्वास्थ्य सेवाएँ, और बीमा योजनाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं।

6. सहकारी बैंकिंग और वित्तीय सेवाएं

सहकारी बैंकों द्वारा सस्ते ऋण उपलब्ध कराए जा रहे हैं, जिससे छोटे किसानों और व्यापारियों को सस्ता और सुलभ वित्तीय सहायता मिल रही है। इससे उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है और वे वित्तीय संकट से बाहर निकलते हैं। सहकारी बैंक किसानों और ग्रामीण समुदायों के लिए एक विश्वसनीय विकल्प बन चुके हैं।

7. बेहतर उत्पादन और विपणन नेटवर्क

सहकारी समितियां सामूहिक रूप से कृषि उत्पादों की खरीद और बिक्री करती हैं, जिससे मूल्य निर्धारण में पारदर्शिता आती है और किसानों को उनकी फसलों का बेहतर मूल्य मिलता है। इससे उत्पादकता में वृद्धि होती है।

8. स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाना

सहकारिता मंत्रालय की नीतियां स्थानीय सामुदायिक संगठनों को सशक्त बना रही हैं। इससे लोग अपने समाज के विकास में सक्रिय रूप से भागीदार बन सकते हैं।

9. नवाचार और डिजिटलीकरण में सहायता

मंत्रालय अब सहकारी समितियों को डिजिटलीकरण में मदद कर रहा है, ताकि कार्यप्रणाली में पारदर्शिता और दक्षता लाई जा सके। इसके तहत सहकारी संस्थाओं के लिए ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और मॉबाइल एप्स विकसित किए जा रहे हैं।

10. आसान और पारदर्शी संचालन

सहकारिता मंत्रालय ने नियमों और प्रक्रियाओं को सरल और पारदर्शी बनाया है, जिससे सहकारी संस्थाओं को संचालन में मदद मिलती है। इसका परिणाम यह होता है कि आम जनता को बेहतर सेवा मिलती है।

निष्कर्षः

सहकारिता मंत्रालय का गठन न केवल आर्थिक समृद्धि बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों के लिए समान अवसर सृजित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। इससे समाज के सभी तबकों को लाभ हो रहा है, खासकर किसानों, महिलाओं, और ग्रामीण समुदायों को। सहकारी आंदोलन के द्वारा स्थानीय विकास, स्व–निर्भरता, और सामाजिक समावेशिता को बढ़ावा मिल रहा है, जो अंततः पूरे देश की आर्थिक मजबूती में योगदान दे रहा है। इसका प्रभाव कृषि, ग्रामीण विकास, और वित्तीय क्षेत्र में सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। यह मंत्रालय विशेष रूप से उन समुदायों को सशक्त बना रहा है, जो पहले आर्थिक संसाधनों की कमी के कारण पिछड़े हुए थे। सहकारिता मंत्रालय के द्वारा किए गए सुधारों से किसान, महिलाएं, गरीब वर्ग और स्थानीय व्यापार को सीधे तौर पर लाभ हो रहा है, जिससे आर्थिक समृद्धि और सामाजिक समावेशिता में सुधार हो रहा है।

संदर्भ–

1. https://www.cooperation.gov.in/hi/history-cooperatives-movement
2. https://www.cooperation.gov.in/sites/default/files/2022-10/Sahakarita-Quotes-PDF.pdf
3. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage-aspx\PRID/2152796
4. https://www.cooperation.gov.in/hi/ministry-cooperation

   https://www.newsonair.gov.in/union-minister-of-cooperation-amit-shah-says-national-cooperative-policy-provides-comprehensive-roadmap-for-sustainable-cooperative-development/

भारत में सहकारी विपणन समितियांः कार्य, प्रगति, बाधाएं और संभावनाएं

— ब्रह्म प्रकाश
मुख्य तकनीकी अधिकारी (सेवानिवृत्त)
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

अर्थव्यवस्था के सुचारू संचालन के लिए एक उचित विपणन प्रणाली मूलभूत आवश्यकता है। कृषकों को अपने उत्पादों को बेहतर ढंग से बेचने में सहायता करने के उद्देश्य से बनाया गया संगठन ही सहकारी विपणन समिति है जो बिचौलियों को हटाकर कृषकों को सीधे उपभोक्ताओं से जोड़कर उन्हें बेहतर कीमतें और अधिक लाभ दिलाने में सहायक होती हैं।

सहकारी विपणन समितियों की भूमिका

(क) उत्पादक को अधिक लाभ

सहकारी विपणन किसानों को अधिक लाभ पहुंचाने में सहायक होता है। सहकारी समितियों के माध्यम से अपनी उपज बेचकर किसानों की सौदेबाजी की शक्ति बढ़ती है। सहकारी समितियां अंतिम खरीदारों से सीधे लेन–देन करके बिचौलियों को समाप्त करती हैं, जिससे कृषकों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। सहकारी समितियों द्वारा उपज का थोक प्रबंधन किसानों को बड़े पैमाने पर बिक्री की लागत–घटाने वाले लाभ उठाने में सक्षम बनाता है।

(ख) बाजार अवसंरचना निर्माण में सहायक

सहकारी समितियां अपने सदस्यों को गोदाम, परिवहन वाहन और ग्रेडर जैसी अवसंरचनात्मक सुविधाएं प्रदान करती हैं क्योंकि वे कम लागत पर कृषि उपज के विपणन के लिए आवश्यक अवसंरचना का निर्माण आसानी से कर सकती हैं। सहकारी समितियां कीमतों, माँग और उत्पादन आदि के बारे में अद्यतन जानकारी की नियमित आपूर्ति की व्यवस्था भी करती हैं।

(ग) कृषि के अन्य पहलुओं से संबद्ध

विपणन सहकारी समितियां कृषि के अन्य पहलुओं जैसे ऋण, प्रसंस्करण और भंडारण आदि को भी सम्मिलित करती हैं। सहकारी विपणन, ऋण संस्थाओं को सहकारी समितियों को सौंपी गई उपज की बिक्री के लिए किसानों को ऋण प्रदान करने में सक्षम बनाता है। चूंकि प्रसंस्कृत उत्पादों की कीमतें अधिक होती हैं, इसलिए सहकारी समितियां तिलहन, कपास तथा जूट का प्रसंस्करण भी करती हैं।

(घ) इनपुट और उपभोक्ता वस्तुएं उपलब्ध कराना

सहकारी समितियां बीज, उर्वरक, कीटनाशक, उपकरण आदि जैसे इनपुट और किसानों के लिए

आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं जैसे कपड़ा, माचिस, मिट्टी का तेल आदि की सस्ती आपूर्ति का भी कार्य करती हैं। छोटे कृषकों के सामने आने वाली एक बड़ी समस्या, जैसे गुणवत्तापूर्ण बीज, कीटनाशक, उर्वरक आदि की अनुपलब्धता का समाधान होने के साथ समान वितरण सुनिश्चित करती हैं।

सहकारी विपणन संरचना

सहकारी विपणन लंबे समय से अस्तित्व में है। स्वतंत्रता से पूर्व भी कुछ छिटपुट प्रयास किए गए थे। लेकिन 1951 तक स्थिति संतोषजनक नहीं थी। लगभग 1 प्रतिशत कृषि उपज का विपणन इन सहकारी समितियों द्वारा किया जाता था। लेकिन ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति (1951) की संस्तुतियों के पश्चात समितियों की संख्या और उनके द्वारा की जाने वाली बिक्री में तीव्रता आई। भारत में मंडी स्तर पर हजारों प्राथमिक सहकारी विपणन समितियां तथा विशिष्ट प्राथमिक विपणन समितियों के साथ, ऐतिहासिक कारणों से कुछ राज्यों में 157 जिला/केंद्रीय समितियां भी मौजूद हैं। सभी राज्यों और अंडमान निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली, लक्षद्वीप तथा पुडुचेरी जैसे चार केंद्र शासित प्रदेशों में सामान्य प्रयोजन के शीर्ष–स्तरीय विपणन संघों की कुल संख्या 29 है, इसके अलावा राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (नेफेड) सहित 22 राज्य–स्तरीय विशेष वस्तु विपणन संघ हैं। जनजातीय जनसंख्या बाहुल्य 10 राज्यों में, लघु वनोपज का विपणन प्राथमिक स्तर पर बड़े आकार की बहुउद्देश्यीय समितियों द्वारा और राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय जनजातीय विकास सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (ट्राइफेड) द्वारा जनजातीय सहकारी समितियों को सहायता प्रदान करके किया जाता है। विपणन सहकारी समितियों का संगठन और संरचनात्मक कार्य लगभग पूर्ण हो चुका है और अब उनकी गतिविधियों को समेकित और सुव्यवस्थित करने पर जोर दिया जा रहा है।

विपणन कार्य

सहकारी विपणन समितियों द्वारा विपणन की जाने वाली कृषि वस्तुओं का मूल्य 1960–61 में 179 करोड़ रुपये से बढ़कर 1992–93 में 6800 करोड़ रुपये तथा अब कई गुना बढ़ चुका है। इन समितियों द्वारा विपणन की जाने वाली प्रमुख कृषि वस्तुएं खाद्यान्न, गन्ना, कपास, तिलहन, फल, सब्जियाँ और बागवानी फसलें हैं। सहकारी समितियों द्वारा विपणन की जाने वाली कृषि उपज का अंश गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश इन आठ राज्यों में उत्पादित होता है। निर्यात के लिए राष्ट्रीय स्तर की बहु–राज्य सहकारी समिति, राष्ट्रीय सहकारी निर्यात लिमिटेड (एनसीईएल) ने 18 दिसंबर, 2024 तक विभिन्न देशों को 3934 करोड़ रुपये मूल्य की 31 कृषि वस्तुओं का निर्यात किया है। भारत सरकार की मूल्य समर्थन योजना के अंतर्गत भारतीय जूट निगम की ओर से किसानों से कच्चे जूट की खरीद में सहकारी विपणन समितियां महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। सहकारी समितियों ने लगभग सभी जूट उत्पादक राज्यों में ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों की आसान पहुंच के भीतर जूट क्रय केंद्रों का एक संजाल स्थापित किया है।

सहकारी विपणन समितियां भारत सरकार की मूल्य समर्थन योजना के अंतर्गत भारतीय खाद्य निगम के एजेंट के रूप में गेहूँ व धान की खरीद में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। खरीफ विपणन सत्र 2023–24 के दौरान, धान की कुल खरीद 782.25 लाख मीट्रिक टन थी। रबी विपणन सत्र 2024–25 के दौरान, गेहूँ की कुल खरीद 266.05 लाख मीट्रिक टन थी।

राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ

भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (नेफेड), जो देश में सहकारी विपणन संरचना का राष्ट्रीय स्तर का संघ है, ने विदेशी व्यापार को सुगम बनाने के लिए राज्य स्तरीय और निचले स्तर के विपणन संघों और समितियों को व्यावसायिक सहायता प्रदान करना जारी रखा है। इसके अतिरिक्त, नेफेड विशिष्ट वस्तुओं में मूल्य समर्थन और बाजार हस्तक्षेप कार्य भी कर रहा है। भारत सरकार ने नेफेड को मूंगफली, सोयाबीन, सरसों, तोरिया, सूरजमुखी के बीज, कुसुम के बीज, खोपरा, उड़द, मूंग, अरहर और चना जैसी महत्वपूर्ण वस्तुओं के संबंध में मूल्य समर्थन योजना चलाने के लिए केंद्रीय नोडल एजेंसी के रूप में नामित किया है। नेफेड को आलू, प्याज, अदरक, अंगूर, खट्टे फल, इसबगोल, लहसुन, अनानास, चिकोरी आदि जैसे जल्दी खराब होने वाले फलों के लिए बाजार हस्तक्षेप योजना के लिए एक केंद्रीय नोडल एजेंसी के रूप में भी नामित किया गया है। नेफेड प्याज के निर्यात और ताजे फलों के आयात के लिए एक एजेंसी के रूप में कार्य करता रहा है। दालों की आपूर्ति और मांग के बीच के अंतर को पाटने के लिए, नेफेड को दालों के आयात की निगरानी एजेंसी के रूप में भी नियुक्त किया गया है। नेफेड नाइजर के बीज, तिल, बागवानी उत्पाद, हल्दी, लाल मिर्च जैसे मसाले और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों जैसी वस्तुओं का निर्यात कर रहा है। ताजे फलों और सब्जियों के विपणन कार्यों में सहकारी समितियां महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। केरल में रबर, तमिलनाडु के नीलगिरी जिले में चाय और कर्नाटक में सुपारी और कोको के उत्पादकों की मदद करने में विशेष वस्तु सहकारी समितियों की भूमिका काफी उत्साहजनक रही है। सहकारी समितियों ने किसानों को उचित समय पर प्राथमिक ऋण, उर्वरक और अन्य आदान प्रदान करके कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इफ़्को और कृभको के पास यूरिया, डीएपी और अन्य मिश्रित उर्वरकों की उल्लेखनीय उत्पादन क्षमता है। इफ़्को की संयुक्त यूरिया उत्पादन क्षमता 42.42 लाख टन है, जबकि मिश्रित उर्वरक उत्पादन क्षमता 43.80 लाख टन है। कृभको यूरिया और एनपीके सहित कई प्रकार के उर्वरकों का भी उत्पादन करती है।

सहकारी विपणन समितियों की धीमी प्रगति के कारण

(क) क्षेत्रीय असमानताएँ

हालांकि सहकारी विपणन में समग्र प्रगति हुई है, फिर भी यह विभिन्न राज्यों में समान रूप से वितरित नहीं हुई है। जहां एक ओर पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र जैसे राज्य हैं जहां प्रभावशाली प्रगति दर्ज की गई है, वहीं दूसरी ओर आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्य भी हैं जहां कुछ वर्षों के दौरान सहकारी विपणन के मौजूदा स्तर में गिरावट आई है। विभिन्न राज्यों में सहकारी समितियों द्वारा संभाले गए कृषि उत्पादों के मूल्य के संदर्भ में असमानताएं अभी भी अधिक हैं, और बहुत कम राज्यों में कुल उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा है। इसके अलावा, विपणन सहकारी समितियों के प्रदर्शन में भी काफी असमानता हैं। कई सहकारी समितियां कागज़ों पर मौजूद हैं और विपणन नहीं करती हैं।

(ख) केवल कुछ कृषि उत्पादों तक सीमित

अधिकांश समितियां स्वयं को गेहूं, गन्ना और जूट जैसे कुछ कृषि उत्पादों के विपणन तक ही सीमित रखती हैं और मोटे अनाज और दालों आदि के संबंध में बहुत कम काम करती हैं।

(ग) स्थानीय व्यापारियों के प्रति किसानों का ऋणग्रस्त होना

छोटे किसानों के लिए ऋण की कमी विशेष रूप से अधिक है। वे स्थानीय व्यापारियों के ऋणी होते हैं और फसल बेचने के लिए उनसे अग्रिम संपर्क करते हैं।

(घ) व्यक्तिगत दायित्वों की पूर्ति

व्यक्तिगत दायित्वों की पूर्ति के लिए, किसानों को फसल कटाई के तुरंत बाद नकदी की आवश्यकता होती है। इसलिए, वे स्थानीय व्यापारियों को उपज बेचते हैं क्योंकि सहकारी समितियों द्वारा उपज को बाज़ारों तक पहुंचाने के लिए आवश्यक समय का इंतज़ार करना उनके लिए दुष्कर होता है।

(ङ) वित्तीय संसाधनों का अभाव

समितियों के पास पर्याप्त धन नहीं होता है। धन के अभाव में, समितियां न तो बिक्री के लिए लाई गई उपज को गिरवी रखकर किसानों की ऋण संबंधी ज़रूरतों को पूरा करती हैं और न ही अपने माध्यम से खरीदी या बेची गई उपज के मूल्य का अग्रिम भुगतान करती हैं।

(च) भंडारण सुविधाओं का अभाव

हालांकि समितियों ने कुछ भंडारण सुविधाएं विकसित की हैं, लेकिन अधिकांश समितियों में पर्याप्त भंडारण सुविधाओं का अभाव है। इससे समितियों को फसल कटाई के तुरंत बाद उपज का निपटान करना पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप किसानों को कम कीमत मिलती है।

(छ) अकुशल प्रबंधन

कर्मचारियों में पर्याप्त व्यावसायिक विशेषज्ञता के अभाव के कारण, सहकारी विपणन समितियां व्यापारियों और कमीशन एजेंटों के साथ प्रतिस्पर्धा में अपना व्यवसाय चलाने में सक्षम नहीं हैं। इन समितियों का प्रबंधन आमतौर पर अकुशल होता है। प्रबंधक सुशिक्षित और अप्रशिक्षित नहीं होते हैं। इन सामूहिक कारणों से, सभी सहकारी विपणन समितियां लाभोन्मुखी नहीं होती हैं।

(ज) निहित स्वार्थों का प्रभुत्व

प्रायः विपणन सहकारी समितियों में कुछ पक्षकार कारक होते हैं जो प्रबंधन को पक्षपात करने के लिए बाध्य करते हैं। कभी–कभी कृषक सदस्यों के बीच प्रतिद्वंदिता के कारण अनिर्णय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। विभिन्न हितधारक जनहित और सहयोग के सिद्धांतों का पालन नहीं करते हैं। वे सहकारी समितियों में अपने रिश्तेदारों को नौकरी देते हैं। वे नए सदस्यों का नामांकन नहीं करते हैं। प्रबंधकों का स्थानीय व्यापारियों के साथ जुड़ाव भी देखा गया है।

(झ) सदस्यों में निष्ठा का अभाव

अशिक्षा और सहकारिता की भावना के अभाव के कारण, विपणन सहकारी समितियों के प्रति सदस्यों में निष्ठा का अभाव है।

(ट) ऋण समितियों का प्रभुत्व

भारत में, सहकारी ऋण समितियों की संख्या विपणन समितियों की संख्या से अधिक है, लेकिन केवल ऋण से उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता।

(ठ) अप्रमाणिक समितियों की स्थापना

सरकारी दबाव या कानूनी पचड़ों से बचने के लिए स्थापित की गईं सहकारी विपणन समितियां प्रायः निष्क्रिय या अप्रमाणिक बनी रहती हैं। इस प्रकार, सरकारी लक्ष्य तो प्राप्त हो जाता है, परंतु ये समितियां बिल्कुल भी काम नहीं करतीं। लगभग 25 प्रतिशत ऐसी निष्क्रिय समितियां हैं।

(ड) निजी क्षेत्र का विरोध

सहकारी विपणन समितियों की विफलता का एक कारण निजी क्षेत्र का संगठित विरोध है।

(ढ़) अन्य बाधाएं

विपणन समितियां सदस्यों के लिए बैंकिंग संस्थान के रूप में कार्य नहीं करतीं। समितियों के प्रबंधक सदस्यों को व्यावसायिक सलाह नहीं देते। समितियां उपज बेचने के लिए बाज़ार जाते समय किसान सदस्यों को आश्रय और भोजन की सुविधा प्रदान नहीं करतीं।

सहकारी विपणन समितियों की सफलता के लिए सुझाव

भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी विपणन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। लेकिन अब तक की प्रगति, हालांकि शुद्ध लाभप्रद होने के उपरांत भी पूर्णतया संतोषजनक नहीं है। सहकारी समितियों को अभी भी कृषि उपज के एक बड़े हिस्से को कवर करना बाकी है। अतः इन सहकारी समितियों को तेज़ गति से और सही दिशा में विकसित करने की आवश्यकता है जिससे सहकारी समितियां उन्हें सौंपी गई भूमिका को भली–भांति निभा सकें। इस संबंध में मुख्य सुझाव निम्नवत हैं:

(क) मौजूदा समितियों का सुदृढ़ीकरण

समितियों का संचालन क्षेत्र इतना बड़ा होना चाहिए कि उनका पर्याप्त व्यवसाय हो और वे व्यवहार्य बन सकें। वर्तमान में अधिकांश समितियां अपने व्यवसाय के छोटे आकार के कारण व्यवहार्य नहीं हैं। इसके लिए, समितियों को अधिक वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराए जाने चाहिए और खाद्यान्न आदि की खरीद से संबंधित अधिक सरकारी कार्य इन सहकारी समितियों को सौंपे जाने चाहिए।

(ख) गतिविधियों में विविधता लाना

सहकारी विपणन व्यवस्था को अपनी गतिविधियों में विविधता लानी चाहिए। कृषि उपज और उर्वरकों, बीजों आदि जैसे आदानों की बिक्री की व्यवस्था करने के अलावा, इन समितियों को

मंडियों के साथ–साथ गाँवों में भी अपनी भंडारण क्षमता का निर्माण करना चाहिए। सदस्यों की उपज को गाँवों से मंडी तक समय पर और कम लागत पर लाने के लिए अपना परिवहन वहाँ उपलब्ध कराना चाहिए, प्रसंस्करण की व्यवस्था करनी चाहिए, अपने माल का वर्गीकरण करना चाहिए, निर्यात की व्यवस्था करनी चाहिए आदि।

(ग) बहुउद्देशीय समितियों का विकास

विपणन समितियों को कृषि, वित्त आदि से संबंधित अन्य समितियों के साथ अधिक निकटता से जुड़ने की आवश्यकता है। इसके लिए बहुउद्देशीय समितियों की स्थापना करना सर्वोत्तम है जो कृषि के सभी पहलुओं की देखभाल कर सकें। इस प्रकार, अलग–अलग समितियों के संयोजन या बहुउद्देशीय समितियों की स्थापना से किसान संस्था का सर्वोत्तम उपयोग कर सकते हैं।

(घ) सदस्यता पर प्रतिबंध

केवल उन्हीं व्यक्तियों को विपणन समितियों के सदस्य के रूप में नामांकित किया जाना चाहिए जिन्हें वास्तव में सहायता की आवश्यकता है। इसलिए, व्यापारियों को विपणन समितियों का सदस्य बनने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। प्रत्येक जिले में एक शिकायत निवारण समिति होनी चाहिए जो सदस्यता संबंधी शिकायतों को सुन सके और उनका समाधान कर सके।

(ङ) न्यूनतम सरकारी हस्तक्षेप

सरकार को समितियों के कामकाज में कम से कम हस्तक्षेप करना चाहिए ताकि समितियां आत्मनिर्भर बन सकें। लेकिन समितियों को सरकारी सहायता इसी प्रकार जारी रहनी चाहिए।

(च) सहकारिता की भावना का समावेश

सदस्यों में सहकारिता की भावना का विकास सेमिनारों के आयोजन और साहित्य वितरण द्वारा उचित शिक्षा के माध्यम से किया जाना चाहिए। सहकारी शिक्षा का प्रसार किया जाना चाहिए ताकि प्रबंधकों, अधिकारियों और कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जा सके। इसके लिए केंद्र और राज्य सरकारों के पूर्ण सहयोग से एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए।

(छ) लघु एवं सीमांत किसानों का प्रतिनिधित्व

विपणन समितियों को अपने संगठनात्मक ढांचे में लघु एवं सीमांत किसानों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देना चाहिए।

(ज) योग्य एवं प्रशिक्षित कर्मियों का चयन

सहकारी विपणन समितियों के पदाधिकारियों के चयन में व्यावसायिक अनुभव और योग्यता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। चयन के बाद पदाधिकारियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

(झ) मंडियों में बुनियादी सुविधाओं का प्रावधान

निजी व्यापारियों की तरह, विपणन समितियों को भी अपने सदस्यों के मंडियों में आने पर उनके लिए आवास और पेयजल की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए।

(ट) अन्य सुझाव

खरीद और सार्वजनिक वितरण कार्यक्रम को सहकारी विपणन समितियों के माध्यम से क्रियान्वित किया जाना चाहिए ताकि उनका व्यावसायिक कारोबार बढ़े।

संदर्भ

1. एनोनाइमस (2024) एनुअल रिपोर्ट (2023–24)। मिनिस्ट्री ऑफ कोओपरेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।

2. एनोनाइमस (2024) एनुअल रिपोर्ट (2023–24)। नेशनल कोओपरेटिव डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली। वैबसाइट www.ncdc.in

3. एनोनाइमस (2024) कोओपरेटिव सोसाइटीज़। https://mospi.gov.in>sites>defaullt>files

4. ब्रह्म प्रकाश (1998) परफ़ोर्मेंस, कोंसट्रेंट्स एंड प्रोस्पेक्ट्स ऑफ कोओपरेटिव मार्केटिंग सोसाइटीज़ इन इंडिया। इनः इंडियाज़ रुरल कोओपरेटिव्स (एडिटेड बाई गुरुशरण सिंह कैंथ), रीजेन्सी पब्लिकेशन्स, न्यू दिल्ली। पेज 41–53।

   ब्रह्म प्रकाश (2010) एग्रीकल्चरल क्रेडिट इन इंडियाः प्रॉब्लेम्स एंड प्रोस्पेक्ट्स। इनः मेनेजिंग रुरल फाइनेंसेस इन इंडिया (एडिटेड बाई गुरुशरण सिंह कैंथ), कंसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी प्राइवेट लिमिटेड, न्यू दिल्ली। पेज 57–72।

   पिचाई, सी. (2007) एनुअल्स ऑफ कोओपरेटिव मूवमेंट इन इंडिया, इंस्टीट्यूट ऑफ कोओपरेटिव मूवमेंट, मदुरै, पेज 77–81।

   शाह, दीपक (2020) कोओपरेटिव मार्केटिंग सोसाइटीज़ इन इंडियाः प्रोग्रेस एंड फ़ङ्क्श्नल डाइमेनशन्स (अप्रैल 22, 2020) https://ssrn.com/abstract=3582585 or http://dx.doi.org/10-2139/ssrn.3582585, दीपक (2020) वर्किंग ऑफ कोओपरेटिव मार्केटिंग सोसाइटीज़ इन इंडियाः सं एमर्जीङ्ग इशूज। मार्केटिंग कोओपरेटिव 49 (2–3): 214–219.

   सिंह, हेमंत (2016) कोओपरेटिव मार्केटिंग इन इंडियाः एड्वाटेज एंड प्रोग्रेस। जागरण जोश। www.jagranjosh.com

भारत की परंपरा, विश्व की आवश्यकताः सहकारिता और वसुधैव कुटुंबकम

– डॉ. संध्या सिलावट
उपायुक्त, राज्य कर
इंदौर, मध्य प्रदेश

परंपरा से अभिप्राय है विचारों, कार्यों, व्यवहारों, प्रथाओं, रूढ़ियों, आदतों, विश्वासों, रीति–रिवाजों, धर्मों, कानूनों आदि की सामाजिक विरासत का वह पक्ष जो हमारे व्यवहार के स्वीकृत तरीकों को दर्शाता है तथा जिसकी निरंतरता पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण की प्रक्रिया द्वारा बनाए रखी जाती है।

भारत प्राचीन काल से कृषि प्रधान देश है परन्तु आवश्यकता व जनसंख्या के विकास के कारण बहुत से उद्योगों का विकास हुआ। लोगों का मत था कि व्यक्तिगत प्रयास से धन का अर्जन सम्भव नहीं है बल्कि सहकारी संस्थाएं ही उनके उदेश्यों को पूर्ण कर सकती हैं। इससे स्पष्ट है प्राचीन भारतीय अपनी उन्नति के लिए निश्वित नियमों वाले, श्रेणी, संघ या निगम के संघटन के महत्व को पूर्णतः समझते थे। (बृहदारण्यक उपनिषद्)

प्राचीन भारत में चार स्तरों कुल, ग्राम, श्रेणी और जाति द्वारा सामाजिक–आर्थिक गतिविधियां सहकारिता के आधार पर संचालित की जाती थीं। कुल में रिश्ते–नातेदार और मित्र आदि थे। ग्राम स्तर पर ग्रामसभा ग्रामीणों, किसानों तथा हस्तशिल्पियों के हित हेतु सहकारिता के आधार पर कार्य करती थी। इन ग्राम समुदायों द्वारा गाँव के तालाब या जंगल जिन्हें देव स्थान के नाम से जाना जाता था, को बनाने के लिए सामूहिक प्रयास किए जाते थे, जिससे स्थायी संपत्तियाँ भी बनती थीं। जो स्थानीय अस्तित्व और समृद्धि के लिए अति महत्वपूर्ण थे। श्रेणी से अभिप्राय है कि व्यापारियों, हस्तशिल्पियों और महाजनों ने स्वयं की सुरक्षा एवं उन्नति हेतु जो संगठन बनाए थे। व्यवसायों व शिल्प–समुदायों की कुछ सहकारिताएं जाति के आधार पर भी होती थीं। जाति के आधार पर सहयोग प्रायः सामाजिक कार्यों जैसे शिक्षा और धार्मिक कार्यों के लिए किया जाता था।

अतएव प्राचीन काल में शिल्पकारों और व्यापारियों ने स्वयं की सुरक्षा एवं उन्नति हेतु अनेकों संगठन बनाए। ये संगठित समूह श्रेणी, निगम या निकाय कहलाते थे। इन संस्थाओं के द्वारा स्वयं के नियम बनाए जाते थे, इन्हें पालन करना भी आवश्यक था। राजा इन संस्थाओं के नियमों का आदर करते थे। इनके प्रतिनिधियों को राज्य की प्रशासनिक समिति के सदस्य मनोनीत करते थे।

आर.सी. मजूमदार के अनुसार उत्तरवैदिक काल में व्यापार तथा उद्योग धंधों का स्थानीकरण श्रेणियों के उद्भव का एक महत्वपूर्ण कारण बना। श्रेणियों के जन्म के कारणों में व्यापार व वाणिज्य में होने वाली वृद्धि, बढ़ते उत्पादन के वितरण की समुचित व्यवस्था एवं इस हेतु पूँजी

निवेश की आवश्यकता थीं। सुरक्षा कारणों जैसे आपदाओं से व्यवसाय की सुरक्षा, चोर–डाकुओं से रक्षा और अधिक सामूहिक लाभ का मन भी श्रेणियों के उदय का कारण बनें।

श्रेणी संगठन बहुत सम्पन्न होते थे, अतएव ये समाज और देश दोनों के हित में जनकल्याणकारी, धार्मिक, आर्थिक, वैधानिक एवं सैनिक आदि विभिन्न कार्य करते थे। संकटकाल में राज्य भी इन श्रेणियों से ऋण ले सकता था।

श्रेणियां आधुनिक बैंकों की भॉंति कार्य करती थीं। ऋण देती थीं और ब्याज वसूल करती थीं। अर्थशास्त्र में ऋण देने का प्रथम उल्लेख है, वर्णन है कि यदि राजा गंभीर आर्थिक संकट में हो तो वह ऐसे गुप्तचर का उपयोग करे जो अपनी साख बनाने के उपरान्त इन संस्थाओं से सोने की मुहरें तथा मुद्राएं उधार ले और उसी रात चोरी हो जाने का ढिंढोरा पीटकर सारा धन हड़प लें।

भारत में सहकारिता आंदोलन के इतिहास के दो चरण हैं, पहला, स्वतंत्रता–पूर्व युग का सहकारिता आंदोलन और दूसरा स्वतंत्रता–पश्चात युग का सहकारिता आंदोलन।

स्वतंत्रता–पूर्व युग का सहकारिता आंदोलन 1904–1950

भारत में सहकारी समितियां 1904 में 'सहकारी ऋण समिति कानून' लागू होने के साथ ही एक कानूनी इकाई बन गईं, जिसमें सहकारी समितियों के गठन, सदस्यता, पंजीकरण, सदस्यों की देनदारियों, मुनाफे के निपटान, नियम बनाने की शक्ति और विघटन के मानदंडों को रेखांकित किया गया था। कानून में शहरी समितियों के गठन का प्रावधान था, लेकिन सहकारिता आंदोलन के पहले चरण के दौरान जो सहकारी समितियां गठित की गईं उनमें से अधिकतर ग्रामीण ऋण सहकारिताएं थीं।

गैर–ऋण सहकारी समितियों के क्षेत्र में विस्तार करने के लिए 1912 के सहकारी समिति कानून ने 1904 के कानून की कमियों को दूर किया, तथा विपणन समितियों, हथकरघा बुनकरों और अन्य कारीगर समितियों को शामिल करने के लिए इसके दायरे का विस्तार किया।

1914 में, सर ई.डी. मैकलैंगन की अध्यक्षता में गठित सहकारिता संबंधी समिति (1915) ने सहकारिता शिक्षा, लेखा परीक्षा और पर्यवेक्षण में सहयोग की आवश्यकता पर जोर दिया। क्रेडिट सोसाइटियों के लिए सुधारों की सिफारिश की, जिसमें केन्द्र, प्रांत और जिला स्तर पर तीन–स्तरीय सहकारी बैंकिंग प्रणाली का प्रस्ताव रखा गया।

1919 के भारत सरकार सुधार अधिनियम ने एक मंत्री के अंतर्गत प्रांतों को सहकारी समितियों के लिए कानून बनाने का अधिकार दिया, जिसके परिणामस्वरूप 1925 का बॉम्बे सहकारी समिति कानून पारित हुआ, जो किसी प्रांतीय सरकार द्वारा पारित पहला सहकारी कानून था। 1930 के दशक की महामंदी ने सहकारिता आंदोलन को बहुत हानि पहुंचाई। देनदारियॉं बढ़ने से समितियां बर्बाद हो गईं। 1935 में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना व इसके अंतर्गत कृषि ऋण विभाग का गठन सहकारिता आंदोलन के इतिहास में महत्वपूर्ण घटना है। नतीजतन द्वितीय विश्व युद्ध के समय सहकारिता आंदोलन को बल मिला। लड़ाई में सम्मिलित देशों में ऐसी संस्थाएं सतत कार्य कर रही थीं। इस दौरान गैर–ऋण समितियों की ओर भी रुझान बढ़ा।

1942 में, भारत सरकार ने कई प्रांतों की सदस्यता वाली सहकारी समितियों को विनियमित करने के लिए बहु–इकाई सहकारी समिति कानून लागू किया और व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए केन्द्रीय सहकारी रजिस्ट्रार की शक्ति राज्य रजिस्ट्रार को सौंप दी। देश स्वतंत्र हुआ एवं राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में भी सहकारिता की भावना को समाहित किया गया जिससे देश में सहकारिता आंदोलन को प्रोत्साहन मिला।

स्वतंत्रता के बाद आधुनिक भारत में सहकारिता आंदोलन

स्वतंत्रता पश्चात् भारत के लोगों की सरकार बनी, जिसका उद्देश्य आर्थिक शक्ति का विकेंद्रीकरण करना और सामाजिक न्याय पर ध्यान केन्द्रित करते हुए आर्थिक विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने और उनके क्रियान्वन हेतु आम जन की भागीदारी को बढ़ावा देना है। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारी समितियां एक अभिन्न अंग बन गईं, जिसका क्रियान्वन प्रथम पंचवर्षीय योजना से हुआ, इसमें ग्राम पंचायतों के साथ उनके समन्वय पर बल दिया गया। सामुदायिक विकास परियोजनाएं, राष्ट्रीय विस्तार सेवा और पंचवर्षीय योजनाओं ने आधुनिक भारत में सहकारिता आंदोलन के लिए नए रास्ते खोले।

ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति की सिफारिशें 1954 में लागू की गईं, इससे राज्य की नीति के अंग के रूप में सहकारिता को बढ़ावा देने से सहकारिता के विकास की नई नीति की नींव पड़ी। सहकारिताओं की अंश पूंजी में सहकारी कानून समिति (1956–57), राष्ट्रीय विकास परिषद के प्रस्ताव (1958), सहकारिता के बारे में समिति (1964), सहकारिता कानून व सहकारिता सिद्धांत (1973) और राष्ट्रीय सहकारिता नीति प्रस्ताव में राज्य की भागीदारी की नीति का समर्थन किया गया जिससे सहकारी संस्थाओं पर सरकार का नियंत्रण और मजबूत हुआ। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एनसीडीसी) की 1963 में तथा राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की 1982 में स्थापना का ग्रामीण ऋण व सहकारी विकास को समर्थन देने में महत्वपूर्ण स्थान था।

भारतीय संसद एवं राज्य विधानसभाओं ने राज्यों में सहकारी समितियों को नियंत्रित करने वाले कानूनों को सुव्यवस्थित करने के लिए बहुराज्यीय सहकारी समिति अधिनियम 1984 पारित किया। सहकारिताओं में प्रबंधन के लोकतंत्रीकरण और व्यवसायीकरण हेतु सहकारी कानून समिति का गठन 1987 में किया गया जिसने सहकारिता व्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु अनेक सुझाव दिए।

कई सहकारिताएं महत्वपूर्ण सहकारी उपक्रमों के रूप में उभर कर सामने आईं परंतु इनमें से कई बहु–राज्य सरकारी समिति अधिनियम के तहत पंजीकृत नहीं हैं। इन्हें बाजार में निजी उपक्रमों के साथ प्रतिस्पर्धा हेतु एक समान अवसर दिये जाने भी आवश्यक है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने प्रो. वाई. के. अलघ की अध्यक्षता वाली समिति (सहकारी कारोबार को कंपनी में परिवर्तित करने के लिए उच्च स्तरीय समिति, 2000) की सिफारिश पर कंपनी कानून के तहत उत्पादक कंपनी संबंधी एक वैकल्पिक कानून बनाया है। अन्य व्यावसायिक उपक्रमों की तरह उत्पादन कंपनी अधिनियम सहकारिताओं को एक केंद्रीय कानून के तहत लाता है। बशर्ते कि सहकारी समिति की आम सभा दो तिहाई बहुमत से उत्पादक कंपनी में परिवर्तित करने के

प्रस्ताव को स्वीकृति प्रदान कर दे। यह तर्क दिया जाता है कि नया कानून सहकारी ढांचे की संस्थागत तथा सैद्धांतिक शक्ति को कंपनी कानून के लचीलेपन, स्वायत्तता और अनुशासन के साथ समन्वित करने के लिए बनाया गया है। इस दौरान सहकारी ऋण संबंधी विशेषज्ञ समिति (कपूर समिति, 2000) ने ऋण क्षेत्र से जुड़े विशिष्ट मुद्दों पर विचार किया।

बहु–राज्य सहकारी समिति अधिनियम 2002, बहु–राज्य सहकारी समितियों के गठन एवं उसकी कार्यप्रणाली हेतु प्रावधान करता है। 2002 में सहकारी समितियों पर राष्ट्रीय नीति की शुरुआत के साथ आगे समेकन हुआ, जिसका उद्देश्य कानूनी ढांचे में सामंजस्य स्थापित करना था। 97वें संविधान संशोधन अधिनियम 2011 द्वारा सहकारी समितियों के गठन के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया गया (अनुच्छेद 19)। अनुच्छेद 43–B से सहकारी समितियों पर राज्य की नीति का एक नया निदेशक सिद्धांत प्रस्तुत किया गया अनुच्छेद 243–ZH से 243–ZT द्वारा संविधान में 'सहकारी समितियां' शीर्षक से एक नया भाग IX-B जोड़ा गया।

सहकारिता दो शब्दों सह+कारिता से मिलकर बना है जिसका अर्थ है मिलजुल कर कार्य करना। अनेक व्यक्तियों या संस्थाओं द्वारा किसी समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिये मिलकर प्रयास करना सहकार कहलाता है। समान उदेश्य की पूर्ति के लिये अनेक व्यक्तियों या संस्थाओ की सम्मिलित संस्था को सहकारी संस्था कहते है।

इंटरनेशनल कॉपरेटिव एलांयस (आईसीए) ने सहकारी को संयुक्त स्वामित्व वाले और लोकतांत्रिक रूप से नियंत्रित उद्यम के माध्यम से अपनी सामान्य आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए स्वेच्छा से एकजुट व्यक्तियों का एक स्वायत्त संघ के रूप में परिभाषित किया है।

सहकारी समिति की व्याख्या है–यह जन–केंद्रित उद्यम हैं, जिनका स्वामित्व, नियंत्रण और संचालन उनके सदस्यों द्वारा किया जाता है तथा वे अपनी साझा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करते हैं।

बुनकरों द्वारा इसी व्याख्यानुसार रोशडेल सहकारी समिति बनाई गई थी। इसके अनुकरण में अनगिनत समितियां इंग्लैंड और कई अन्य देशों में बनीं। 1844 के अंत में रोशडेल इक्विटेबल पायनियर्स की स्थापना से ही आधुनिक सहकारिता आंदोलन का आरंभ माना जाता है। इस समिति के उद्देश्य अनेक थे और दूरगामी महत्व रखते थे। इनमें कपड़े और सामान की बिक्री हेतु भंडार बनाने से लेकर सदस्यों हेतु आवासों का निर्माण, कार्यशालाएं खोलना, रोजगार देने हेतु खेती के फार्म खरीदना और आत्म निर्भर आवासीय कालोनियां बनाना आदि था। इनमें राजनीतिक और धार्मिक निष्पक्षता होती थी। सदस्यों को सहकारिता की शिक्षा देना सहकारिता के सिद्धांतों का मूल है।

सहकारी समितियां मात्र लाभ से नहीं, अपितु मूल्यों से प्रेरित व्यवसायों के रूप में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत सिद्धांतों को साझा कर रही हैं, सहकार के माध्यम से एक बेहतर दुनिया बनाने हेतु सम्मिलित प्रयास करती हैं। पूरे संसार की सहकारी समितियां निष्पक्षता, समानता और सामाजिक न्याय को उद्यम के केंद्र में रखती हैं, व लोगों को दीर्घकालिक रोजगार और समृद्धि उत्पन्न करने वाले स्थायी उद्यम बनाने के लिए मिलकर काम करने का अवसर दे रही हैं।

पूरे विश्व के लिए सहकारी आंदोलन का अत्यधिक महत्व है। पूरे विश्व में 30 लाख सहकारी समितियों में विश्व की जनसंख्या का लगभग 12% किसी एक का सहकारी है। सहकारी समितियों द्वारा हाशिये पर पड़े लोगों का भी जीवन अच्छा बनाने का प्रयास किया जाता है। इसलिए वर्ष 2024 की थीम 'कोऑपरेटिव बिल्डिंग ए बेटर फ्यूचर फोर ऑल' है। यह थीम संयुक्त राष्ट्र के आगामी समिट ऑफ द फ्यूचर के उद्देश्यों के साथ अच्छी तरह से मेल खाती है जिसकी थीम 'मल्टीलेटरल सॉल्यूशंस फोर ए बेटर टुमॉरो' है। सामाजिक विकास में सहकारिता पर वर्ष 2023 की संयुक्त राष्ट्र महासचिव की रिपोर्ट के अनुसार सहकारिता हमेशा से हाशियाई समूहों सहित सभी व्यक्तियों के आर्थिक और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने का कार्य करती रही है। अंतरराष्ट्रीय सहकारिता दिवस प्रत्येक वर्ष 6 जुलाई को मनाया जाता है। यह दिवस वर्ष 2025 के अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष का मार्ग प्रशस्त करेगा।

भारत में कृषि, ऋण, डेयरी, आवास और मत्स्य पालन आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में 840,000 से अधिक सहकारी समितियां हैं जिनके 320 मिलियन से अधिक सदस्यों के साथ भारत का सहकारिता नेटवर्क विश्व के सबसे बड़े नेटवर्कों में से एक है। कृषि ऋण के वितरण में 20%, फर्टिलाइजर्स के वितरण में 35%, चीनी उत्पादन में 31%, गेहूँ की खरीदी में 13% और धान की खरीदी में 20% का योगदान सहकारिता क्षेत्र दे रहा है।

भारत में सहयोग एक जीवंत और समुदाय संचालित प्रणाली है जो उपभोग से लेकर निर्माण तक और ग्रामीण सशक्तिकरण से लेकर डिजिटल समावेशन तक हर क्षेत्र को आपसी सहयोग और लोकतांत्रिक भागीदारी के माध्यम से रोजगार प्रदान करती है। नेफेड ने पिछले वर्ष किसानों से सीधे 4.2 मिलियन टन खाद्यान्न खरीदा और बटन के एक क्लिक से इलेक्ट्रॉनिक रूप से उनके खाते में लगभग 7 बिलियन रुपये हस्तांतरित हुए। 56 मिलियन डॉलर का लाभ कमाया, जिसमें से 15% लाभांश लगभग 800 राज्य स्तरीय सहकारी समितियों को दिया गया, जो संगठन की सदस्य हैं।

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

उपरोक्त पंक्तियों का अर्थ है कि 'यह (व्यक्ति) मेरा है और यह मेरा नहीं है' का भेद केवल संकीर्ण सोच वाले या अज्ञानी लोग ही करते हैं। जो उत्तम आचरण वाले हैं (या जो परम सत्य को जानते हैं) उनके लिए सारा विश्व एक परिवार (एक इकाई) है।

वसुधैव कुटुबंकम तीन संस्कृत शब्दों से मिलकर बना है— वसुधा (पृथ्वी/विश्व), एवं (जैसा) और कुटुबंकम (बड़ा/विस्तारित परिवार)। इस श्लोक का उल्लेख महाउपनिषद (VI.72) में मिलता है, और आगे हितोपदेश तथा भारत के अन्य साहित्यिक ग्रंथों में भी इसका वर्णन है। इस श्लोक का संदर्भ एक ऐसे व्यक्ति के गुणों का वर्णन करना है जिसने आध्यात्मिक प्रगति के उच्चतम स्तर को प्राप्त कर लिया है और जो भौतिक सम्पत्ति के प्रति किसी भी प्रकार की आसक्ति के बिना अपने सांसारिक कर्तव्यों को पूरा करने में सक्षम है। यह श्लोक अनादि काल से भारतीय परिवार व्यवस्था के लिए मार्गदर्शक रहा है। वसुधैव कुटुबंकम का संक्षिप्त और सटीक अर्थ एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य है।

वसुधैव कुटुबंकम जैसी विचारधारा से ही भारत ने सदियों से विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों, और जातियों को आत्मसात किया है, इस सहिष्णुता और स्वीकार्यता की भावना ने भारत की विविधता में एकता की स्थापना की है जिससे भारतीय समाज एक समावेशी और सहिष्णु समाज बना है। वैश्वीकरण के युग में 'वसुधैव कुटुबंकम' की प्रासंगिकता अत्यधिक बढ़ गई है। व्यापार, संचार, और तकनीकी प्रगति के कारण विभिन्न देश, संस्कृतियां और जातियां घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। एक देश या समाज की घटनाएं दूसरे देशों पर भी प्रभाव डाल रही हैं। अब हम सभी को एक–दूसरे के साथ सह–अस्तित्व में रहने की आवश्यकता है, क्योंकि अब हमें वैश्विक नागरिक के रूप में अपनी भूमिका निभानी होगी।

वसुधैव कुटुबंकम जैसी विचारधारा सभी राष्ट्रों के परस्पर जुड़ाव और जलवायु परिवर्तन, आर्थिक असमानताओं और वैश्विक स्वास्थ्य संकट जैसी साझा चुनौतियों से निपटने के लिए मिलकर काम करने की आवश्यकता पर बल देती है। यह विचारधारा एक अधिक समावेशी और सामंजस्यपूर्ण विश्व के दृष्टिकोण को बढ़ावा देती है, जहां राष्ट्र मानवता की सामूहिक भलाई के लिए सहयोग करते हैं। यह इस विश्वास को बढ़ावा देती है कि राष्ट्रीयता, जातीयता या धर्म में हमारी भिन्नताओं के बावजूद, हम सभी एक वैश्विक परिवार का हिस्सा हैं। यह अवधारणा सभी मनुष्यों के प्रति सहानुभूति और करुणा को प्रोत्साहित करती है। यह व्यक्तियों, समुदायों और राष्ट्रों को संघर्षों को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने और एक अधिक शांतिपूर्ण विश्व के निर्माण के लिए मिलकर काम करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

सहकारिता द्वारा सतत विकास की गति बनाए रखने के लिए और नए तरीके खोजने होंगे, विश्व के देश परस्पर चर्चा से दूसरे देश के सहकारी प्रारूप से बहुत कुछ सीख सकते हैं। जैसे कोलंबिया ने स्कूलों और विश्वविद्यालयों में सहकारी सिद्धांतों को लाने के लिए एक राष्ट्रीय पहल की है। मंगोलिया का 'न्यू कोऑपरेटिव–वेल्थी हर्डर' कार्यक्रम ग्रामीण आजीविका को सहारा देने के लिए बनाया गया है। ग्वाटेमाला बहु–हितधारक परामर्श के माध्यम से सतत विकास मॉडलों को बढ़ावा दे रहा है। जापान ने उपभोक्ता सहकारी समितियों द्वारा संचालित सामुदायिक स्वास्थ्य निगरानी प्रणालियों, नगर पालिकाओं के साथ साझेदारी और सहकारी विकास के लिए मजबूत कानूनी समर्थन जैसी पहलों आदि का व्यापक दृष्टिकोण वाला सर्वोत्तम मॉडल लागू किया है, जिसे अन्य देश भी अपनी आवश्यकतानुसार अपना सकते हैं।

सभी देशों को सहकारिता द्वारा सतत विकास करने हेतु बेहतर डेटा, सुदृढ़ कानूनी ढाँचे, डिजिटल पहुंच में सुधार और अधिक पेशेवर प्रशिक्षण हेतु काम करना आवश्यक है। वैश्विक साझेदारियां इन कमियों को पाटने में मदद कर सकती हैं। ज्ञान का आदान–प्रदान, सहकारी समितियों के बीच संबंध बनाना और नवाचार में निवेश सहकारी आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए अति आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. आर. सी. मजूमदार, कॉर्पोरेट लाइफ इन एंशिएंट इंडिया, पूना, 1922
2. सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार की वेबसाइट
3. अंतरराष्ट्रीय सहकारी गठबंधन की वेबसाइट
4. कुरुक्षेत्र पत्रिका, अक्टूबर 2004

भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी समितियों की भूमिका

– डॉ. देवेन्द्र तिवारी
वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा), एनएचपीसी लिमिटेड, फरीदाबाद

सहकारी समितियों भारत के सामाजिक आर्थिक परिदृश्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही है, जो सामूहिक जिम्मेदारी, भागीदारीपूर्ण निर्णय लेने और समावेशी विकास के मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये संगठन रोजगार के अवसर प्रदान करके और आर्थिक आत्मनिर्भरता का समर्थन करके समुदाय, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में उत्थान के केन्द्र रहे हैं।

हाल ही में भारत द्वारा पहली बार अंतरराष्ट्रीय सहकारी गठबंधन महासभा की मेजबानी करने के साथ, सम्पूर्ण विश्व का आकर्षण अब देश के सहकारी आंदोलन पर केन्द्रित हो गया है। इसके अतिरिक्त, वर्ष 2025 को सहकारिता के दूसरे अंतरराष्ट्रीय वर्ष के रूप में नामित करना समावेशी विकास के प्रमुख चालकों के रूप में सहकारी समितियों की बढ़ती मान्यता को उजागर करता है। यह अवसर प्रदर्शित करता है कि कैसे सहकारी समितियां गरीबी, असमानता और जलवायु परिवर्तन जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को प्रभावी ढंग से संबोधित कर सकती हैं और सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन के लिए शक्तिशाली उपकरण के रूप में काम कर सकती हैं, जिससे अधिक टिकाऊ और न्यायसंगत भविष्य में योगदान मिलता है।

ऐतिहासिक संदर्भ और महत्व

वर्ष 1904 में, ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार ने भारतीय सहकारी समिति अधिनियम लागू किया, जिसने भारत में सहकारी समितियों की स्थापना की नींव रखी। इसका उद्देश्य किसानों की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करना था। समय के साथ, सहकारी समितियों ने डेयरी, मत्स्य पालन, आवास और उपभोक्ता वस्तुओं जैसे क्षेत्रों में विविधता ला दी।

भारत में सहकारी आंदोलन का इतिहास

स्वतंत्रता–पूर्वः

गरीब किसानों की पीड़ा, विशेषकर साहूकारों द्वारा उत्पीड़न को कम करने के लिए, ब्रिटिश भारत ने भारत में राइफिसेन शैली के सहकारी आंदोलन का अनुकरण किया। जब पुणे और अहमदनगर के किसानों ने साहूकारों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया, तो "सहकारी समितियां" शब्द गढ़ा गया। बैंकिंग क्षेत्र में पहली ऋण सहकारी समिति का गठन वर्ष 1903 में बंगाल सरकार के सहयोग से किया गया था।

भारतीय सहकारी ऋण समिति अधिनियम, 1904 में अधिनियमित किया गया था। 1912 में, पहले के कानून की कुछ कमियों को दूर करने के लिए एक और सहकारी समिति अधिनियम पारित किया गया। 1919 में सहकारिता राज्य का विषय बन गया। भूमि बंधक सहकारी बैंकों की

स्थापना 1938 में ऋण राहत और भूमि सुधार के लिए ऋण प्रदान करने के लिए की गई थी। भारतीय रिजर्व बैंक ने 1939 में मौसमी कृषि कार्यों के लिए सहकारी समितियों को पुनर्वित्त प्रदान करना शुरू किया। बहु–इकाई सहकारी समिति अधिनियम 1942 में ब्रिटिश भारत सरकार द्वारा एक से अधिक प्रांतों के सदस्यों वाली सहकारी समितियों के लिए पारित किया गया था।

स्वतंत्रता के बादः

स्वतंत्रता के बाद, सहकारिताएं पंचवर्षीय योजनाओं का अभिन्न अंग बन गईं। कृषि की तरह, सहकारिता भी समवर्ती सूची में है। राष्ट्रीय विकास परिषद (एनडीसी) ने 1958 में एक राष्ट्रीय सहकारी रणनीति के साथ–साथ स्टाफ प्रशिक्षण और सहकारी विपणन समितियों के निर्माण का सुझाव दिया। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एनसीडीसी), एक सांविधिक निगम, की स्थापना राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम अधिनियम, 1962 के अंतर्गत की गई थी। बहु–राज्य सहकारी संगठन अधिनियम 1984 में भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया था। यह एक ही प्रकार के समाजों को नियंत्रित करने वाले अनेक कानूनों को एकीकृत करने का एक प्रयास है। भारत सरकार ने 2002 में राष्ट्रीय सहकारिता नीति की घोषणा की। सहकारी समितियों में शामिल होना वित्तीय जोखिम को कम करने का एक बेहतरीन तरीका है। सहकारी समितियों पर संविधान (सत्तानवेवां संशोधन) अधिनियम, 2011 का उद्देश्य सहकारी आर्थिक गतिविधि को बढ़ावा देना है, जो बदले में ग्रामीण भारत की उन्नति में सहायक है। संविधान के भाग III में "या यूनियनों" शब्दों के बाद "सहकारी समितियां" शब्द जोड़ा गया। भाग IV में जोड़े गए नए अनुच्छेद 43 ख के अनुसार, राज्य सहकारी समितियों के स्वैच्छिक गठन, स्वायत्त कार्यप्रणाली, लोकतांत्रिक नियंत्रण और पेशेवर प्रबंधन को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा। संविधान के भाग IX क के बाद, राज्य बनाम केंद्र की भूमिकाओं को समायोजित करने के लिए भाग IX ख को शामिल किया गया। एनसीडीसी की युवा–अनुकूल "युवा सहकार–सहकारी उद्यम सहायता और नवाचार योजना" केंद्रीय कृषि मंत्रालय द्वारा युवाओं को सहकारी व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए शुरू की गई थी। एनसीडीसी ने हाल ही में मिशन सहकार 22 शुरू किया है, जिसका उद्देश्य 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करना है।

सहकारी समितियों की विशेषताएं

सहकारी समितियों में लोकतांत्रिक समानता को बरकरार रखा जाता है। सबसे पहले, इनका उद्देश्य पारस्परिक सहायता है। आर्थिक रूप से संघर्षरत व्यक्ति इन सहकारी समितियों में शामिल होकर एक साझा उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मिलकर काम कर सकते हैं।

भारत में सहकारी समितियों की कुछ विशेषताएं नीचे दी गई हैं।

- **स्वैच्छिक गठन और भागीदारीः** सहकारी समिति में शामिल होना बहुत आसान और निःशुल्क होता है। सहकारी समिति एक स्वैच्छिक समिति होती है, जिसमें शामिल होना और छोड़ना दोनों ही संभव है।
- **व्यावसायिक प्रबंधनः** सभी सहकारी समितियों का संचालन कुशलतापूर्वक किया जाना चाहिए। समय–समय पर लेखा–परीक्षण किया जाना चाहिए। एक केंद्रीय रजिस्ट्रार विनियमन का प्रभारी होता है।

- ❖ नकद और प्रत्यक्ष लेनदेन सहकारी समितियों के संचालन के मूलभूत तरीके हैं। बैंकिंग सहकारी समितियों के अलावा, कोई भी अन्य संस्था ऋण प्रदान नहीं करती है।

उद्देश्य: सहकारी समितियों का मुख्य लक्ष्य व्यक्तियों को कठिन वित्तीय परिस्थितियों से निपटने में सहायता प्रदान करना और उनके स्थानीय समुदायों की सहायता और समर्थन प्राप्त करना है। इससे समुदाय के भीतर संबंधों में सुधार होता है।

स्वतंत्र निकाय: भारत सरकार पंजीकृत सहकारी समिति को एक अलग कानूनी निकाय के रूप में मान्यता देती है। उसे अपने घटकों के लिए सर्वोत्तम विकल्प चुनने का अधिकार है।

लाभ का वितरण: सहकारी क्षेत्र में, अतिरिक्त माल या आय उत्पन्न होती है और सदस्यों के बीच उनके संबंधित हिस्सों में समान रूप से वितरित की जाती है।

प्रति सदस्य एक वोट: जैसा कि हमने कहा, सहकारी समितियां लोकतंत्र के सिद्धांतों पर चलती हैं। प्रत्येक सहकारी समिति की एक प्रमुख प्रबंध समिति होती है, जिसके सदस्य आम सदस्यों द्वारा चुने जाते हैं।

पारस्परिक लाभ: मध्यम और निम्न आय वर्ग के लोग सहकारी समितियों से हमेशा लाभान्वित हो सकते हैं। वे आपसी विश्वास की भावना विकसित करते हैं और एक–दूसरे को अपनी सामान्य आय से अधिक लाभ कमाने में मदद करते हैं।

वर्ष 2002 में, सहकारिता को और अधिक बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय सहकारी नीति शुरू की गई थी। इस नीति में सहकारी समितियों के आधुनिकीकरण, उनके लोकतान्त्रिक कामकाज को सुनिश्चित करने और तेजी से वैश्विक होती अर्थव्यवस्था में उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने पर जोर दिया गया। परिणामस्वरूप, सहकारी समितियां भारत की ग्रामीण और कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है, इनके स्थानीय, क्षेत्रीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर नेटवर्क हैं, जिन्होंने कृषि, डेयरी, मत्स्य पालन और आवास जैसे क्षेत्रों में सहायता की है।

सबसे सफल सहकारी उपक्रमों में से एक अमूल है, जिसने भारत में डेयरी उद्योग में क्रांति ला दी है 'आणंद पैटर्न' के तहत काम करते हुए, अमूल ने भारत को दुनिया का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक बना दिया है। सहकारी ढाँचे में छोटे किसानों को शामिल करके, अमूल यह सुनिश्चित करता है कि लाभ निष्पक्ष रूप से वितरित किया जाए और बिक्री मूल्य का एक बड़ा हिस्सा किसानों को वापस मिले।

सहकारी समितियां भारत के चीनी उद्योग में भी प्रमुख भूमिका निभाती है, यहाँ कई चीनी मिलों का स्वामित्व स्थानीय सहकारी समितियों के पास है। खासकर महाराष्ट्र जैसे राज्यों में इन्होंने स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं के विकास में योगदान दिया है लेकिन सब्सिडी और राजनीतिक प्रभाव के परिणामस्वरूप होने वाली अक्षमताओं को लेकर कुछ चिंताएं हैं, जो चीनी सहकारी समितियों की दीर्घकालिक स्थिरता को प्रभावित करती है।

कृषि के अलावा, सहकारी समितियों ने भारत में बैंकिंग में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में। सहकारी बैंक उन समुदायों को आवश्यक वित्तीय सेवाएं प्रदान करते हैं, जिनकी बैंकिंग सुविधाओं तक पहुंच सीमित होती है। वे किसानों और छोटे व्यवसायों को ऋण और वित्तीय सेवाएं प्रदान करके ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सहारा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

खादी उत्पादन के क्षेत्र में, सहकारी समितियां पारम्परिक उद्योगों को संरक्षित करने और ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग चांदी के उत्पादन में शामिल हजारों सहकारी समितियों का समर्थन करता है, जिससे ग्रामीण समुदायों को आर्थिक और सामाजिक दोनों तरह के लाभ मिलते हैं।

कानूनी और संवैधानिक प्रावधान

97वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2011 ने सहकारी समितियों को लोकतांत्रिक और स्वायत्त तरीके से संचालित करने हेतु एक संवैधानिक ढाँचा प्रदान करने के लिए भाग–। (ख) की शुरुआत की। यह संशोधन राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों में उल्लिखित सामाजिक आर्थिक न्याय के सिद्धांतों के साथ अपने उद्देश्य को संरेखित करते हुए स्वतंत्र संस्थानों के रूप में सहकारी समितियों की भूमिका को बढ़ाने का प्रयास करता है, यह सहकारी संगठनों के भीतर जवाबदेही को बढ़ावा देने के लिए सदस्य भागीदारी और पारदर्शिता पर जोर देता है। इसके अतिरिक्त, चूंकि सहकारी समितियां भारतीय सविधान में राज्य सूची के तहत् सूचीबद्ध हैं, इसलिए राज्य सरकारों को उनके कामकाज को विनियमित और प्रबंधित करने की जिम्मेदारी दी गई है। यह व्यवस्था सहकारी समितियों के लिए परिचालन स्वतंत्रता, उनकी दक्षता एवं लोक कल्याण लक्ष्यों के संरेखण के साथ–साथ उसकी निगरानी सुनिश्चित करती है।

सामाजिक सशक्तिकरण

महिलाओं की भागीदारी विभिन्न स्वयं सहायता समूहों जैसी सहकारी संस्थाओं ने महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक सशक्तिकरण प्राप्त करने में सक्षम बनाया है, जिससे लैंगिक असमानता कम हुई है। असमानताओं को पाटना–संसाधनों और लाभों को समान रूप से वितरित करके, सहकारी समितियां सामाजिक–आर्थिक असमानताओं को कम करती है तथा सामाजिक सद्भाव में योगदान देती हैं।

स्थिरता और पर्यावरण

पारिस्थितिकी प्रबंधन सहकारी समितियां वानिकी और मत्स्यपालन जैसी टिकाऊ प्रथाओं को अपनाती हैं, जो पर्यावरण संरक्षण में योगदान देती है।

नवीकरणीय ऊर्जा पहल सहकारी

समितियां विकेन्द्रीकृत ऊर्जा समाधानों को बढ़ावा देकर, पेरिस समझौते के प्रति भारत की प्रतिबद्धताओं का समर्थन करती है और देश के नवीकरणीय ऊर्जा लक्ष्यों में योगदान देती है।

विकास के अवसर

नीति और संस्थागत पहल

अधिक वित्तपोषण और लक्षित क्षमता निर्माण कार्यक्रम सहकारी संरचनाओं को मजबूत कर सकते है, जिससे उन्हें आगे बढ़ने और आधुनिक बनाने में मदद मिलेगी। वर्ष 2021 में स्थापित सहकारी क्षेत्र के लिए सुसंगत नीतियां तैयार करने और रणनीतिक मार्गदर्शन प्रदान करने में सहायक है।

प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना

ई–नाम (राष्ट्रीय कृषि बाजार) जैसे प्लेटफॉर्म किसानों के लिए बाजार तक पहुंच में क्रांतिकारी बदलाव ला सकते हैं। जिससे उन्हें अपनी उपज के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त करने में मदद मिलेगी। ब्लॉक–चेन जैसी उभरती प्रौद्योगिकियां सहकारी परिचालनों, विशेषकर वित्तीय लेन–देन और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन में पारदर्शिता और दक्षता प्रदान करती है।

वैश्विक जुड़ाव

आईसीए असेंबली की मेजबानी से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सर्वोत्तम प्रथाओं से सीखने और सहयोग को बढ़ावा देने के रास्ते खुल गए है। विभिन्न देशों के साथ सहयोगात्मक साझेदारियाँ भारतीय सहकारी समितियों को आधुनिक बनाने तथा उनकी वैश्विक उपस्थिति बढ़ाने हेतु निवेश और विशेषज्ञता को आकर्षित कर सकती हैं।

क्षेत्रीय नवाचार

अमूल जैसी सफल पहलों को अविकसित क्षेत्रों में दोहराने से ग्रामीण आय और आत्मनिर्भरता बढ़ सकती है। समाधान सहकारी स्वास्थ्य देखभाल मॉडल स्थापित करने से वंचित क्षेत्रों में किफायती और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच में सुधार हो सकता है। पर्यटन विकास सहकारी समितियों के माध्यम से समुदाय–आधारित पर्यटन पहल ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा दे सकती है और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर सकती है।

वैश्विक लक्ष्यों के साथ संरेखण

सहकारिताएं संयुक्त राष्ट्र सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से गरीबी उन्मूलन, लैंगिक समानता और पर्यावरणीय स्थिरता से संबंधित लक्ष्यों को प्राप्त करना।

वित्तीय और तकनीकी पहुंच

ऋण उपलब्धता और वित्तीय स्थिरता में सुधार के लिए बैंकों, वित्तीय प्रौद्योगिकी कम्पनियों और विकास एजेंसियों के साथ साझेदारी करना। सहकारी संचालन को आधुनिक बनाने और प्रौद्योगिकी के माध्यम से सदस्यों की सहभागिता बढ़ाने के लिए डिजिटल बुनियादी ढाँचे में निवेश करना।

समावेशी और स्थिरता

समान भागीदारी और लाभ सुनिश्चित करने के लिए सहकारी पहलों में महिलाओं, युवाओं और हाशिए पर पड़े समूहों को सक्रिय रूप से शामिल करना। वैश्विक पर्यावरणीय प्रतिबद्धताओं के अनुरूप तथा स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए सहकारी परिचालनों में पर्यावरण अनुकूल प्रथाओं को शामिल करना।

अंतरराष्ट्रीय मान्यता का लाभ उठाना

आईसीए और आगामी अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष में भारत का नेतृत्व, सहकारी मॉडलों में वैश्विक नेता के रूप में अपनी स्थिति मजबूत करने तथा अपनी सफलता की कहानियों को प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करता है।

समावेशी विकास में सहकारिता की भूमिका

आर्थिक योगदान

इफको और नैफेड जैसे संगठनों ने इनपुट, ऋण और बाजारों तक बेहतर पहुंच प्रदान करके छोटे किसानों को सशक्त बनाया है। सहकारी समितियों ने कृषि उत्पादकता में सुधार और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। देश में लगभग 8 लाख से अधिक सहकारी समितियों कार्यरत हैं जो विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त रोजगार अवसर पैदा करती है तथा गरीबी उन्मूलन में योगदान देती है।

सहकारी बैंक और ऋण समितियां अक्सर वंचित समुदायों को आवश्यक वित्तीय सेवाएं प्रदान करती हैं, जिससे आर्थिक भागीदारी को बढ़ावा मिलता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी समितियां ग्रामीण विकास, वित्तीय समावेशन और समाज के कमजोर वर्गों के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जो कृषि, डेयरी, ऋण और बैंकिंग, आवास जैसे विविध क्षेत्रों में कार्यरत हैं।

किसी सहकारी संस्था का उद्देश्य संगठन के सदस्यों और उसके आसपास के समुदाय की आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करना होता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में सहकारी समितियों की भूमिका:

- **ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार:** ग्रामीण क्षेत्रों में 98% कवरेज के साथ, सहकारी समितियां ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं, जो स्थायी आजीविका और आय सुनिश्चित करती हैं।
- **वित्तीय समावेशन:** ये समितियां उन किसानों और छोटे उद्यमियों को ऋण प्रदान करती हैं, जिन्हें पारंपरिक बैंकिंग सेवाओं तक पहुंचने में कठिनाई होती है, जिससे वित्तीय समावेशन को बढ़ावा मिलता है।
- **कृषि विकास में योगदान:** सहकारी समितियां किसानों को कृषि ऋण, आवश्यक आदानों की आपूर्ति, और उत्पादों के विपणन में मदद करती हैं, जिससे कृषि उत्पादकता बढ़ती है।
- **कमजोर वर्गों का सशक्तिकरण:** सहकारी समितियां महिलाओं, युवाओं, गरीबों और हाशिए पर पड़े लोगों को सशक्त बनाने और उनके अधिकारों की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।
- **सेवाएं और सुविधाएं:** ये समितियां सदस्यों को रियायती दरों पर उपभोग की वस्तुएं और सेवाएं (जैसे बिजली, सिंचाई, स्वास्थ्य, बीमा) प्रदान करती हैं, जिससे बिचौलियों के मुनाफे को कम किया जाता है।
- **सामुदायिक विकास और विश्वास:** सहकारी समितियां सामाजिक विश्वास, सामूहिक सहयोग और सदस्यों के बीच आपसी समझ को बढ़ावा देती हैं, जिससे सामुदायिक विकास को गति मिलती है।

भारत में सहकारिता

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां विश्व के सबसे बड़े सहकारी आंदोलन की नींव रखी गई। डेयरी, चीनी मिलें, कताई मिलें और कृषि में अन्य सहकारी उद्यम उन किसानों के संयुक्त संसाधनों का उपयोग करके बनाए जाते हैं जो अपनी उपज को संसाधित करना चाहते हैं। देश में 1,94,195 सहकारी डेयरी समितियां और 330 सहकारी चीनी मिलें संचालित हैं। देश में उत्पादित चीनी का 35% हिस्सा सहकारी चीनी मिलों द्वारा उत्पादित होता है। बैंकिंग और वित्त में सहकारी संस्थाएं ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में फैली हुई हैं। स्थानीय स्तर पर ऋण प्रवाह का सबसे स्पष्ट उदाहरण ग्राम स्तर पर किसान संघों द्वारा स्थापित प्राथमिक कृषि ऋण समितियां (पैक्स) हैं। ये संगठन गांव की आवश्यकता से पहले ही जिला केंद्रीय सहकारी बैंकों (डीसीसीबी) को ऋण अनुरोध भेजते हैं। राज्य सहकारी बैंक ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के शीर्ष पर स्थित हैं। पैक्स के पास एक वाणिज्यिक बैंक के समक्ष अपना मामला प्रस्तुत करने वाले एक व्यक्तिगत किसान की तुलना में काफी अधिक बातचीत करने की क्षमता होती है, क्योंकि वे किसानों का एक समूह होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी विपणन समितियां और शहरी क्षेत्रों में सहकारी आवास समितियां भी हैं। ग्राहक सहकारी समितियां भारत में सहकारी समितियों के कई प्रकारों में से एक हैं जो वस्तुओं को सस्ती दर पर उपलब्ध कराकर सभी उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के लिए काम करती हैं। ये सहकारी समितियां, जिनमें केंद्रीय भंडार, अपना बाज़ार और सहकारी भंडार प्रमुख उदाहरण हैं, उत्पादकों से सीधे सामान खरीदती हैं, जिससे बिचौलिये हट जाते हैं। इससे उपभोक्ताओं तक कम कीमत पर सामान पहुंचता है। फिर उत्पादकों के सहकारी समूह हैं, जो कच्चे माल, उपकरण, मशीनरी आदि तक पहुंच प्रदान करते हैं। इससे छोटे उत्पादकों के हितों की रक्षा होती है। एपीपीसीओ, बयानिका, हरियाणा हैंडलूम आदि हथकरघा समितियां उत्पादक सहकारी समितियों के उदाहरण हैं। अमूल देश के सबसे प्रसिद्ध सहकारी ब्रांडों में से एक है। इसका जन्म गुजरात के 36 लाख दूध उत्पादकों से हुआ है। यह गुजरात सहकारी दुग्ध विपणन संघ को नियंत्रित करता है। छोटे उत्पादकों और निर्माताओं द्वारा एक सहकारी विपणन समूह बनाया गया, जिन्हें अपने माल को स्वयं बेचने में परेशानी हो रही थी। सहकारी समितियां न केवल आर्थिक लाभ प्रदान करती हैं बल्कि नैतिक और सामाजिक मूल्यों को भी बढ़ावा देती हैं, जिससे आत्मनिर्भरता और सामाजिक विश्वास बढ़ता है।

निष्कर्ष

सहकारिताओं में, भारत में समावेशी और सतत् विकास के उत्प्रेरक के रूप में कार्य करने की अपार क्षमता है। चुनौतियों का समाधान करके और उभरते अवसरों का लाभ उठाकार ये आर्थिक लचीलेपन, सामाजिक समानता और पर्यावरण संरक्षण महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। संयुक्त 2025 का अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष के रूप में मना रही है, जिसमें भारत अपने सामाजिक–आर्थिक ताने–बाने बदलने के लिए एक नए सहकारी आंदोलन की अग्रिम पक्ति में शामिल है।

नवभारत के निर्माण में सहकारिता की भूमिका: एक ऐतिहासिक विश्लेषण

– नेहा गौड़
वैज्ञानिक/अभियंता 'एस–एफ'
एवं विवेक शर्मा
वैज्ञानिक/अभियंता 'एस–जी'
अंतरिक्ष उपयोग केंद्र (इसरो), अहमदाबाद

"सहकार से उद्धार" मूलमंत्र के साथ सामाजिक उन्नति और देश के निर्माण के लिए, सहकारिता को एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में देखा गया है। यह सिद्धांत सामूहिक प्रयासों के माध्यम से राष्ट्र व समाज को सशक्त बनाने की कुंजी है। सहकार की मूल भावना संस्कृत के निम्न श्लोकों में परिलक्षित होती है:

संगच्छध्वं संवद्धवम सं वो मनांसि, जानताम देवाभागं यथा पूर्वे संजनाना – ऋग्वेद

अर्थात सब एक साथ चलो और बोलो, सबके मन एक हों, और सभी देवताओं की तरह मिलकर कार्य करो व फल प्राप्त करो, इसी कारण देवता वन्दनीय हैं। इस श्लोक का मूल भाव एकता और समन्वित प्रयास है और इसमें आपसी सहयोग से कार्य करने और परिणाम बांटने पर जोर दिया गया है

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम, उदारचरितामान तु वसुधैव कुटुम्बकम –महोपनिषद्

अर्थात यह मेरा है, यह उसका है यह सोच संकुचित हृदय की है, उदार हृदय वालों के लिए तो संपूर्ण धरती ही परिवार के समान है। इस श्लोक का मूल भाव समन्वय और उदारता है जिसमें सभी को एक बड़े परिवार की तरह सोचना और कार्य करने पर जोर दिया है

भारत जैसी लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सहकारिता के प्रमुख सिद्धांत हैं– सदस्यों का योगदान और नियंत्रण, आर्थिक भागीदारी, स्वायत्ता और स्वतंत्रता, शिक्षा–प्रशिक्षण और सूचना, सामुदायिक हित की प्रमुखता एवं स्वैच्छिक सदस्यता इत्यादि, जिनके आधार पर स्वतंत्रता से लेकर वर्तमान काल तक सहकारिता एक आंदोलन की तरह सामाजिक उन्नयन में अपना योगदान देती रही है, जिसका प्रस्तुतीकरण आगे किया गया है।

1947–1957: नींव का दशक – भारत को 1947 में स्वतंत्रता मिली, और नवगठित राष्ट्र के सामने सबसे बड़ी चुनौती अपनी विशाल ग्रामीण आबादी के लिए आर्थिक स्थिरता और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना था। इस दशक में, सहकारिता को ग्रामीण पुनर्निर्माण और कृषि विकास के एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में देखा गया। औपनिवेशिक काल में शुरू हुए सहकारिता आंदोलन को अब राष्ट्रीय विकास की कार्यसूची में शामिल किया गया। इसी दशक की देन थी श्री किशिभाई त्रिभुवनदास जी पटेल द्वारा आणंद में प्रेरित और स्थापित "कैरा जिला सहयोगी दुग्ध उत्पादक संघ" जो बाद में 'अमूल' के नाम से विश्व प्रसिद्ध हुआ।

अमूल की विशिष्ट पहचान बनाने वाले प्रमुख श्री वर्गीस कुरियन, त्रिभुवनदासजी और श्री एच एम डलायाजी (1946)

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

1950 में योजना आयोग की स्थापना हुई और पहली पंचवर्षीय योजना (1951–1956) में कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। सहकारिता को कृषि उत्पादन बढ़ाने, ग्रामीण ऋण प्रदान करने और विपणन को सुव्यवस्थित करने के लिए एक महत्वपूर्ण रणनीति के रूप में रेखांकित किया गया। इस अवधि में प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पैक्स) की स्थापना पर विशेष ध्यान दिया गया। इनका उद्देश्य किसानों को आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराकर साहूकारों के चंगुल से मुक्त करवाना था। भारतीय रिजर्व बैंक ने ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति (1951) का गठन किया, जिसने अपनी रिपोर्ट में सहकारिता को ग्रामीण ऋण का मुख्य स्रोत बनाने की सिफारिश की।

विभिन्न राज्यों में सहकारी समितियां अधिनियमों को संशोधित किया गया ताकि उन्हें नई राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुरूप बनाया जा सके। इन कानूनों ने सहकारी समितियों के गठन, पंजीकरण और कामकाज के लिए एक कानूनी ढाँचा प्रदान किया। कृषि ऋण के साथ–साथ, कृषि उपज के विपणन और प्रसंस्करण के लिए भी सहकारी समितियों की स्थापना की शुरुआत हुई। हालांकि, इस दशक में इनकी संख्या और प्रभाव सीमित था। 1952 में शुरू किए गए सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में सहकारिता को एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में शामिल किया गया जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में समग्र विकास हो।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में सहकारिता आंदोलन ने अपनी जड़ें जमाना शुरू किया। लाखों किसानों को सहकारी ऋण के माध्यम से लाभ मिला और ग्रामीण क्षेत्रों में एक संगठित संरचना का विकास हुआ। निरक्षरता, नेतृत्व की कमी, सदस्यों की निष्क्रिय भागीदारी और सरकारी हस्तक्षेप की शुरुआत इस अवधि की प्रमुख समस्याएं थीं। कई समितियां वित्तीय रूप से कमजोर थीं और उनमें पेशेवर प्रबंधन का अभाव था। फिर भी, यह दशक सहकारिता के भविष्य के लिए एक मजबूत आधारशिला रखने वाला साबित हुआ।

1957–1967: विस्तार और विविधीकरण का दशक: यह दशक भारतीय सहकारिता आंदोलन के विस्तार और विविधीकरण का गवाह बना। कृषि क्षेत्र से आगे बढ़कर, सहकारिता ने अन्य क्षेत्रों में भी अपनी उपस्थिति दर्ज कराना शुरू किया, जिससे इसकी पहुंच और प्रभाव में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

इस दशक में दुग्ध सहकारिता आंदोलन ने गति पकड़ी, जिसमें गुजरात के आणंद मॉडल (अमूल) ने एक क्रांतिकारी उदाहरण प्रस्तुत किया। यह मॉडल छोटे दुग्ध उत्पादकों को संगठित कर उन्हें सीधे उपभोक्ताओं से जोड़ने में सफल रहे, जिससे बिचौलियों का उन्मूलन हुआ और किसानों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य मिला। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में उपभोक्ता सहकारी भंडारों की स्थापना को बढ़ावा मिला। इनका उद्देश्य उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर गुणवत्तापूर्ण वस्तुएं उपलब्ध कराना और जमाखोरी व कालाबाजारी पर अंकुश लगाना था।

इस दशक में महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में सहकारी चीनी मिलों की संख्या बढ़ी और इसकी वजह से कई गन्ना किसान संगठित हुए, उन्हें प्रसंस्करण में हिस्सेदारी मिली, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों को आर्थिक लाभ मिला और औद्योगिक विकास भी हुआ। विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों के समन्वय और समर्थन के लिए राष्ट्रीय स्तर के फेडरेशनों का गठन हुआ, जैसे राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ (नेफेड) और भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ (एन सी यू आई)। इन फेडरेशनों ने नीति निर्माण, प्रशिक्षण और विपणन सहायता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सहकारिता आंदोलन की सफलता के लिए सदस्यों और पदाधिकारियों के प्रशिक्षण और शिक्षा के महत्व को पहचाना गया, साथ ही प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की गई।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में सहकारिता ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कई पहलुओं को प्रभावित कर लाखों लोगों के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाए। दुग्ध सहकारिताएं विशेष रूप से सफल रहीं और उन्होंने एक आत्मनिर्भर मॉडल प्रस्तुत किया। नेतृत्व की समस्या, वित्तीय अनुशासन की कमी और सदस्यों की सीमित भागीदारी जैसी समस्याएं भी बनी रहीं।

1967–1977: चुनौतियों और समेकन का दशक: यह दशक भारतीय सहकारिता आंदोलन के लिए चुनौतियों और समेकन का काल था। **हरित क्रांति** ने कृषि परिदृश्य को बदल दिया, जिससे सहकारिता के सामने नई चुनौतियां और अवसर दोनों आए। इस अवधि में इफको, नाबार्ड जैसी एजेंसियों की नींव रखी गयी।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

1960 के दशक के उत्तरार्ध में शुरू हुई हरित क्रांति ने उच्च उपज वाली किस्मों, उर्वरकों और सिंचाई पर जोर दिया। सहकारिता ने उर्वरकों और बीजों के वितरण तथा कृषि ऋण प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालांकि, इसने छोटे किसानों और बड़े किसानों के बीच असमानता को भी जन्म दिया, जिससे सहकारी समितियों पर दबाव बढ़ा कि वे सभी वर्गों की जरूरतों को पूरा करें। 1969 में वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण से ग्रामीण ऋण परिदृश्य में बदलाव आया। सहकारी बैंकों को अब वाणिज्यिक बैंकों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा, हालांकि ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी अभी भी महत्वपूर्ण पहुंच थी।

सरकार ने सहकारी समितियों को मजबूत करने के लिए वित्तीय सहायता और रियायतें बढ़ाना जारी रखा। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन सी डी सी) जैसी संस्थाओं ने सहकारी क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा दिया। आवास सहकारिता, औद्योगिक सहकारिता और श्रम सहकारिता जैसे नए क्षेत्रों में भी सहकारी समितियों का गठन हुआ, हालांकि उनका प्रभाव अभी भी सीमित था। सहकारी समितियों में पेशेवर प्रबंधन, बेहतर प्रशासन और व्यापक सुधार की आवश्यकता थी।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में सहकारिता ने हरित क्रांति की सफलता में महत्वपूर्ण योगदान दिया, विशेषकर कृषि आदानों के वितरण में। दुग्ध और चीनी सहकारिताएं मजबूत होती रहीं। हालांकि, राजनीतिकरण और भ्रष्टाचार के कारण कई सहकारी समितियों की कार्यप्रणाली प्रभावित हुई। वित्तीय अनियमितताएं और अनुत्पादक ऋण भी चिंता का विषय बने। इस अवधि में सहकारिता आंदोलन को अपनी स्वायत्तता बनाए रखने और सरकारी नियंत्रण से मुक्त होने की चुनौती का सामना करना पड़ा।

1977—1987: नीतिगत समर्थन और विकास का दशक: यह दशक भारतीय सहकारिता आंदोलन के लिए नीतिगत समर्थन और विकास का काल था। सरकार ने सहकारिता को ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन के लिए एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में मान्यता दी, और इस क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए कई नई नीतियां और संस्थाएं स्थापित की गईं।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

ग्रामीण ऋण के लिए एक शीर्ष संस्था के रूप में वर्ष 1982 में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना सहकारिता आंदोलन के लिए एक मील का पत्थर था। नाबार्ड ने सहकारी बैंकों और अन्य ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं को पुनर्वित्त सुविधाएं प्रदान कीं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्रवाह में वृद्धि हुई। दुग्ध सहकारिता आंदोलन ने ऑपरेशन फ्लड के दूसरे और तीसरे चरण के साथ अभूतपूर्व सफलता हासिल की। इसने भारत को दुनिया का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक बना दिया और लाखों ग्रामीण परिवारों के लिए स्थायी आजीविका सुनिश्चित की।

बहु—राज्य सहकारी समिति अधिनियम (1984) ने उन सहकारी समितियों के पंजीकरण और विनियमन के लिए एक ढाँचा प्रदान किया जिनकी गतिविधियां एक से अधिक राज्यों में फैली हुई थीं। इसने अंतर—राज्यीय सहकारी गतिविधियों को सुगम बनाया। स्वयं सहायता समूहों ने इस दशक में गति पकड़ी, जो सहकारिता के सिद्धांतों पर आधारित थे। इन्होंने ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कृषि उपज के विपणन और प्रसंस्करण में सहकारी समितियों की भूमिका को और मजबूत करने के प्रयास किए गए, ताकि किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य मिल सके।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में सहकारिता आंदोलन ने अपनी पहुंच और प्रभाव को काफी बढ़ाया। नाबार्ड की स्थापना और ऑपरेशन फ्लड की सफलता ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सहकारिता की केंद्रीय भूमिका को स्थापित किया। वित्तीय समावेश और ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। हालांकि, पेशेवर प्रबंधन की कमी, चुनावी अनियमितताएं और राजनीतिक हस्तक्षेप अभी भी चिंता के प्रमुख विषय बने रहे। कई सहकारी समितियों की सरकारी वित्तीय सहायता पर अत्यधिक निर्भरता से उनकी आत्मनिर्भरता प्रभावित हुई।

1987—1997: उदारीकरण और अनुकूलन का दशक: यह दशक भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की शुरुआत का गवाह बना, जिसका सहकारिता आंदोलन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। सहकारी समितियों को अब एक अधिक प्रतिस्पर्धी माहौल में काम करना था।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

1991 के आर्थिक सुधारों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को खोला, जिससे निजी क्षेत्र की भूमिका बढ़ी।

सहकारिता को अब निजी कंपनियों से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा, खासकर कृषि प्रसंस्करण और विपणन जैसे क्षेत्रों में। उदारीकरण के माहौल में, सहकारी समितियों ने अधिक स्वायत्तता और सरकारी नियंत्रण से मुक्ति की मांग की। यह महसूस किया गया कि अत्यधिक सरकारी विनियमन उनकी दक्षता और प्रतिस्पर्धात्मकता को बाधित कर रहा है।

कई सहकारी बैंकों और ऋण समितियों को वित्तीय संकट का सामना करना पड़ा। उन्हें मजबूत करने और उनकी वित्तीय स्थिति में सुधार के लिए प्रयास किए गए। बदलती आर्थिक परिस्थितियों में अनुकूलित होने के लिए, सहकारी समितियों को अपने संचालन में विविधता और नवाचार लाने की आवश्यकता पड़ी। यह महसूस किया गया कि सदस्यों की सक्रिय भागीदारी और शिक्षा सहकारी समितियों की सफलता के लिए महत्वपूर्ण है, खासकर एक प्रतिस्पर्धी माहौल में।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में कुछ सहकारी समितियों ने सफलतापूर्वक खुद को नए आर्थिक माहौल के अनुकूल ढाला, विशेषकर वे जो पहले से ही मजबूत थीं, जैसे कि अमूल। उन्होंने अपनी दक्षता बढ़ाई और बाजार की मांगों के प्रति अधिक संवेदनशील हो गए। हालांकि, कई कमजोर सहकारी समितियां प्रतिस्पर्धा का सामना करने में विफल रहीं और उन्हें बंद करना पड़ा या वे निष्क्रिय हो गईं।

1997–2007: सुधार और आधुनिकीकरण का दशक: इस दशक में सहकारिता आंदोलन में सुधार और आधुनिकीकरण पर विशेष जोर दिया गया। यह महसूस किया गया कि सहकारिता को अपनी प्रासंगिकता बनाए रखने और एक प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आंतरिक सुधारों की आवश्यकता है।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

प्रोफेसर ए.वैद्यनाथन की अध्यक्षता में गठित समिति ने ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के पुनरुद्धार के लिए 2004 में व्यापक सिफारिशें प्रस्तुत कीं। इन सिफारिशों में वित्तीय पुनर्गठन, कानूनी और नियामक ढाँचे में सुधार, और सहकारी समितियों में सुशासन को बढ़ावा देना शामिल था। इस रिपोर्ट ने सहकारी क्षेत्र में सुधारों के लिए एक रोडमैप प्रदान किया। कई राज्यों ने अपने सहकारी कानूनों में संशोधन किए ताकि सहकारी समितियों को अधिक स्वायत्तता और लचीलापन मिल सके। केंद्र सरकार ने भी एक मॉडल सहकारी समिति अधिनियम का प्रस्ताव रखा, जिसमें सरकारी हस्तक्षेप को कम करने और सदस्यों की भागीदारी को बढ़ाने पर जोर दिया गया। सहकारी समितियों के कामकाज में दक्षता और पारदर्शिता लाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग को बढ़ावा दिया गया, विशेषकर सहकारी बैंकों के कंप्यूटरीकरण पर जोर दिया गया।

स्वयं सहायता समूहों को सहकारी सिद्धांतों पर आधारित छोटे–छोटे समूहों के रूप में मान्यता मिली और उन्हें औपचारिक सहकारी संरचनाओं से जोड़ने के प्रयास किए गए, जिससे ग्रामीण वित्तीय समावेश को बढ़ावा मिला। सहकारी समितियों में बेहतर कॉर्पोरेट गवर्नेंस प्रथाओं को अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया ताकि पारदर्शिता, जवाबदेही और व्यावसायिकता सुनिश्चित की जा सके।

उपलब्धियां और चुनौतियां: वैद्यनाथन समिति की सिफारिशों के आधार पर कई राज्यों में सहकारी ऋण संरचना के पुनरुद्धार के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए गए। कुछ सहकारी समितियों ने सफलतापूर्वक आधुनिकीकरण किया और अपनी सेवाओं में सुधार किया। हालांकि, सुधारों की

धीमी गति, राज्यों में असमान कार्यान्वयन और राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी अभी भी बड़ी चुनौतियां बनी रहीं। कई सहकारी समितियां अभी भी वित्तीय रूप से कमजोर थीं और उन्हें पर्याप्त पूंजी और विशेषज्ञता का अभाव था।

2007–2017: वैश्वीकरण, प्रौद्योगिकी और बाजार अनुकूलन का दशक: यह दशक भारतीय सहकारिता आंदोलन के लिए वैश्वीकरण, प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग और बाजार अनुकूलन का काल था जहां सहकारी समितियों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा और बदलती उपभोक्ता मांगों के अनुरूप ढलना था।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

भारतीय अर्थव्यवस्था के और अधिक खुलने के साथ, सहकारी समितियों को न केवल घरेलू निजी क्षेत्र से, बल्कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों से भी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। इसने उन्हें अपनी दक्षता, गुणवत्ता और नवाचार पर अधिक ध्यान केंद्रित करने के लिए मजबूर किया। प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास के साथ, सहकारी समितियों ने अपने संचालन में डिजिटलीकरण और ई–गवर्नेंस को अपनाया। ऑनलाइन लेनदेन, डेटा प्रबंधन और डिजिटल भुगतान प्रणालियों को लागू करने के प्रयास किए गए।

सहकारी समितियों ने किसानों को बेहतर मूल्य दिलाने के लिए अपनी उपज में मूल्य संवर्धन और सीधे बाजार से जुड़ने पर अधिक ध्यान केंद्रित किया। प्रसंस्करण इकाइयों और ब्रांडिंग को बढ़ावा दिया गया। सहकारी बैंक और ऋण समितियां अभी भी ग्रामीण व अर्ध–शहरी क्षेत्रों में वित्तीय समावेश के लिए महत्वपूर्ण बनी रहीं, खासकर वहाँ, जहां वाणिज्यिक बैंकों की पहुंच सीमित थी। उपभोक्ता सहकारिता और आवास सहकारिता जैसे सामाजिक उद्देश्यों वाली सहकारी समितियों को फिर से बढ़ावा दिया गया, खासकर शहरी क्षेत्रों में।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में कई सफल सहकारी समितियों ने प्रौद्योगिकी को अपना कर बाजार की बदलती जरूरतों के अनुसार कार्यप्रणाली विकसित की। उन्होंने अपनी ब्रांड बनाई साथ ही उपभोक्ताओं का विश्वास जीता। हालांकि, कमजोर प्रबंधन और पर्याप्त पूंजी की कमी कई सहकारी समितियों के लिए बड़ी बाधाएं थीं। नियामक मुद्दे और राज्य सरकारों का अत्यधिक नियंत्रण भी उनकी स्वायत्तता और विकास को बाधित करता रहा।

2017–वर्तमान: नव–सहकारिता और 'सहकार से समृद्धि' का युग: वर्तमान दशक भारतीय सहकारिता आंदोलन के लिए एक नए युग का प्रतीक है, जिसमें सरकार ने सहकारिता को राष्ट्रीय विकास के एक प्रमुख स्तंभ के रूप में फिर से स्थापित किया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में, सहकारिता को 'सबका साथ, सबका विकास और सबका प्रयास' के मंत्र के साथ एक मजबूत दिशा मिली है।

प्रमुख घटनाएं और विशेषताएं:

भारत सरकार ने एक ऐतिहासिक कदम उठाते हुए केन्द्रीय सहकारिता मंत्रालय का गठन किया। यह मंत्रालय देश में सहकारिता आंदोलन को मजबूत करने, उसे एक अलग प्रशासनिक, कानूनी और नीतिगत ढाँचा प्रदान करने और उसकी पहुंच जमीनी स्तर तक ले जाने के लिए जिम्मेदार है। यह सहकारिता के प्रति केंद्र सरकार की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

'सहकार से समृद्धि' का उद्देश्य सहकारी समितियों को एक सच्चे जन–आधारित आंदोलन के रूप में विकसित करना, उनकी दक्षता बढ़ाना, पारदर्शिता लाना और उन्हें आत्मनिर्भर बनाना है। प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पैक्स) को मजबूत करने और उन्हें बहु–सेवा केंद्र बनाने के लिए उनके कंप्यूटरीकरण और आधुनिकीकरण पर जोर दिया जा रहा है। इसका उद्देश्य उनकी कार्यप्रणाली में पारदर्शिता और दक्षता लाना है। विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय स्तर पर नई बहु–राज्य सहकारी समितियों का गठन किया जा रहा है, जैसे कि राष्ट्रीय सहकारी ऑर्गेनिक्स लिमिटेड (एन सी ओ एल) जैविक उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए, और भारतीय बीज सहकारी समिति लिमिटेड (बी एस सी एल) बीजों के उत्पादन और वितरण के लिए।

सहकारी समितियों को अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जोड़ने और उनके उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए भी पहल की जा रही है। सहकारी बैंकों और अन्य वित्तीय सहकारी समितियों को मजबूत करने के लिए नियामक ढाँचे में सुधार और वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। सहकारी समितियों के पदाधिकारियों और सदस्यों के लिए व्यापक प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है ताकि वे आधुनिक व्यावसायिक प्रथाओं को अपना सकें।

इस दौरान हमारे देश में कोरोना काल में सहकारिता और सामूहिक प्रयास का अद्भुत उदाहरण सामने आया, जब कोविड–19 महामारी के दौरान, प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में सरकार और जन–सामान्य ने अनेक चुनौतियों का सामना किया और सहकारिता व सामूहिक प्रयास की भावना को उजागर किया।

महामारी के दौरान, स्थानीय समुदायों, स्वयंसेवी संगठनों और सहकारी समितियों ने मिलकर भोजन वितरण, मास्क निर्माण, सैनिटाइजर उपलब्ध कराने और जागरूकता फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह सहकारिता के मूल सिद्धांत–'सबके लिए एक, एक के लिए सब'–का जीवंत उदाहरण था। दुनिया का सबसे बड़ा टीकाकरण अभियान, 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास' के मंत्र के साथ चलाया गया। इसमें स्वास्थ्यकर्मियों, स्वयंसेवकों और आम जनता के सामूहिक प्रयास से ही इतनी बड़ी सफलता हासिल की जा सकी। प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के अंतर्गत करोड़ों लोगों को मुफ्त राशन उपलब्ध कराया गया, जिसमें वितरण प्रणाली को सुचारू बनाने में स्थानीय लोगों की भागीदारी की अहम भूमिका रही। अभी हाल ही में शुरू किए गए कई कार्यक्रम सहकारिता की भावना को दर्शाते हैं जैसे:

वर्तमान सरकार में सहकारिता मंत्रालय भिन्न योजनाओं पर कार्यरत है।

स्वच्छ भारत अभियान: यह केवल एक सरकारी कार्यक्रम नहीं, बल्कि एक जन–आंदोलन बन गया है। इसमें प्रत्येक नागरिक की सामूहिक जिम्मेदारी और भागीदारी के माध्यम से देश को स्वच्छ बनाने का लक्ष्य रखा गया है, जो सहकारिता के सामाजिक पहलू को दर्शाता है।

एक पेड़ माँ के नाम: यह पहल पर्यावरण संरक्षण के लिए सामूहिक प्रयास को बढ़ावा देती है। यह लोगों को पेड़ लगाने और प्रकृति के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए प्रेरित करती है, जिससे सामुदायिक स्तर पर पर्यावरणीय सहकारिता को बढ़ावा मिलता है।

सिविल सेवकों की क्षमता निर्माण के लिए मिशन कर्मयोगी के रूप में व्यापक कार्यक्रम है। इसका उद्देश्य सरकारी मशीनरी को अधिक कुशल, पारदर्शी और जन–केंद्रित बनाना है।

प्रधानमंत्री जन धन योजना: इस योजना ने करोड़ों लोगों को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ा, जिससे वित्तीय समावेश को बढ़ावा मिला। सहकारी बैंक और ऋण समितियां इस वित्तीय समावेशन में महत्वपूर्ण भागीदार बनीं, खासकर दूरदराज के क्षेत्रों में।

आयुष्मान भारत योजना: यह दुनिया की सबसे बड़ी स्वास्थ्य बीमा योजना है। इसके कार्यान्वयन में सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं और स्थानीय स्वास्थ्य केंद्रों की भूमिका महत्वपूर्ण है, जो स्वास्थ्य सेवा वितरण में एक सहकारी दृष्टिकोण को दर्शाती है।

उपलब्धियां और चुनौतियां: इस दशक में सहकारिता आंदोलन को एक नई गति मिली है। सहकारिता मंत्रालय का गठन और 'सहकार से समृद्धि' का विजन इस क्षेत्र के लिए एक मजबूत नीतिगत समर्थन प्रदान कर रहा है। पैक्स के कंप्यूटरीकरण से ग्रामीण स्तर पर वित्तीय समावेश और सेवाओं में सुधार की उम्मीद है। नई राष्ट्रीय स्तर की सहकारी समितियां विभिन्न क्षेत्रों में नवाचार और विकास को बढ़ावा देंगी। सरकार के अन्य जन–केंद्रित कार्यक्रमों ने भी सामूहिक भागीदारी और सहकारिता की भावना को मजबूत किया है। वित्तीय रूप से कमजोर सहकारी समितियों का पुनरुद्धार और उनमें विश्वास बहाल करना भी एक बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष:

स्वतंत्रता के बाद से, भारतीय सहकारिता आंदोलन ने देश के सामाजिक–आर्थिक विकास में एक अविस्मरणीय भूमिका निभाई है। कृषि ऋण से लेकर दुग्ध उत्पादन, चीनी मिलों से लेकर उपभोक्ता सेवाओं तक, सहकारिता ने लाखों लोगों को सशक्त किया है, उन्हें आत्मनिर्भर बनाया है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत किया है।

सहकारिता मंत्रालय के गठन और 'सहकार से समृद्धि' के विजन के साथ, भारत एक बार फिर सहकारिता को नवभारत के निर्माण की धुरी के रूप में देख रहा है। वर्तमान की भू–राजनैतिक परिस्थिति को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने 2025 को अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष घोषित किया है। भविष्य में, सहकारिता आंदोलन को और अधिक पारदर्शी, व्यावसायिक, स्वायत्त और प्रौद्योगिकी–अनुकूल बनने की आवश्यकता है। इसे युवाओं को आकर्षित करना होगा और नए क्षेत्रों में अपनी पहुंच बढ़ानी होगी। यदि इन चुनौतियों का प्रभावी ढंग से समाधान किया जाता है, तो सहकारिता निश्चित रूप से एक ऐसे विकसित भारत के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी जो आर्थिक रूप से समृद्ध, सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण और विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी हो।

संदर्भः

1. अमूल डेयरी का इतिहासः https://www.amuldairy.com/history.php
2. वैद्यनाथन समिति की रिपोर्ट (2004) का सारांश https://slbckarnataka.com/UserFiles/slbc/Chap-VI.pdf
3. NCUI का इतिहास और गतिविधियाँ (ब्रोशर): https://ncui.coop/storage/NCUI% 20Brochure.pdf
4. सहकारिता मंत्रालय (Ministry of Cooperation) की प्रमुख पहलें और नीतियां (नवीनतम): https://www.cooperation.gov.in/en
5. शहरी सहकारी बैंकों का संक्षिप्त इतिहास https://rbi.org.in/history/Brief-Fun-UrbanCoopBanks.html
6. नाबार्ड का परिचय (इतिहास सहित): https://financialservices.gov.in/beta/en/nabard-act
7. Wikipedia (हरित क्रांति जानकारी) https://en.wikipedia.org/wiki/Green-Revolution-in-India
8. Drishti IAS (आर्थिक सुधारों पर लेख): https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/political-and-economic-reforms-in-1991
9. प्रधानमंत्री जन धन योजना (PMJDY): https://www.pmjdy.gov.in/
10. कोविड.19 टीकाकरण अभियान (COVID-19 Vaccination Drive) https://health.vikaspedia.in/viewcontent/health/health-campaigns/all-about-covid-vaccines/covid-vaccine-intelligence-network-cowin?lgn=en

सहकारिताः वर्तमान समय में विश्व की आवश्यकता

– रूपेन्द्र कुमार कौशल
कनिष्ठ अनुवादक
कार्यालय महालेखाकार, ग्वालियर

इक्कीसवीं सदी का सूर्योदय मानवता के लिए आशा और प्रगति की अनगिनत किरणों के साथ हुआ। हमने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ऐसी छलांगें लगाई हैं, जिनकी कुछ दशक पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। कृत्रिम बुद्धिमत्ता हमारे सोचने के तरीके को बदल रही है, जेनेटिक इंजीनियरिंग रोगों पर विजय पाने का वादा कर रही है, और डिजिटल क्रांति ने दुनिया को एक 'वैश्विक गाँव' में बदल दिया है, जहां सूचना और संचार की गति प्रकाश–तुल्य है। हमने ब्रह्मांड के रहस्यों को भेदने के लिए अंतरिक्ष में दूरबीनें और उपग्रह जैसे चंद्रयान, मंगलयान भेजे हैं और मानव चेतना की गहराइयों को समझने का प्रयास कर रहे हैं।

एक ओर जहां हम तकनीकी शिखर पर पहुंच रहे हैं, वहीं दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन अब केवल एक पर्यावरणीय चिंता नहीं, बल्कि एक आसन्न प्रलय है जो हमारे पारिस्थितिकी तंत्र, खाद्य सुरक्षा और तटीय शहरों के अस्तित्व को निगल जाने की धमकी दे रहा है। राष्ट्रों के बीच बढ़ता भू–राजनीतिक तनाव, व्यापार युद्ध और सैन्यीकरण की होड़ एक नए विश्व युद्ध की आशंका को जन्म दे रही है, वहीं दूसरी ओर आतंकवाद दिन प्रतिदिन विश्व के सामने नई चुनौतियां पेश करता जा रहा है। आर्थिक असमानता की खाई इतनी गहरी हो चुकी है कि दुनिया की मुट्ठी भर आबादी के पास आधी से अधिक मानवता की कुल संपत्ति से ज्यादा धन है। इस असमानता से उपजा असंतोष सामाजिक ताने–बाने को छिन्न–भिन्न कर रहा है।

इन अभूतपूर्व और परस्पर जुड़ी हुई समस्याओं ने एक बात पूरी तरह स्पष्ट कर दी है कि कोई भी राष्ट्र, चाहे वह कितना भी आर्थिक या सैन्य रूप से शक्तिशाली क्यों न हो, इन वैश्विक सुनामियों का अकेले सामना नहीं कर सकता। जब संकट वैश्विक हो, तो समाधान भी वैश्विक होना चाहिए। ऐसे महत्वपूर्ण मोड़ पर, जब दुनिया एक नए मार्गदर्शक दर्शन की तलाश में है, भारत की प्राचीन और समृद्ध भूमि से उपजे दो शाश्वत सिद्धांत प्रकाश स्तंभ के रूप में हमारा मार्गदर्शन करने के लिए प्रस्तुत होते हैं – "वसुधैव कुटुंबकम" और "सहकारिता"।

"वसुधैव कुटुंबकम" (सम्पूर्ण विश्व एक परिवार है) एक उदात्त दार्शनिक दृष्टि है जो हमें संकीर्ण सीमाओं से परे सार्वभौमिक भाईचारे का बोध कराती है। वहीं, "सहकारिता" (मिलकर काम करना) उस दृष्टि को यथार्थ में बदलने का व्यावहारिक मार्ग है; यह वह शरीर है जो उस आत्मा को क्रियान्वित करता है। ये दोनों सिद्धांत केवल नैतिक उपदेश या आदर्शवादी कल्पनाएं नहीं, बल्कि आज की दुनिया के अस्तित्व, स्थिरता और समृद्धि के लिए अनिवार्य, व्यावहारिक और तत्काल आवश्यकताएँ हैं।

वसुधैव कुटुंबकमः एक गहन दार्शनिक विवेचना

"वसुधैव कुटुंबकम" एक संस्कृत वाक्यांश है, जो तीन शब्दों से मिलकर बना हैः वसुधा (पृथ्वी), एव (ही), और कुटुंबकम (परिवार)। इसका शाब्दिक अर्थ है "पृथ्वी ही परिवार है"। यह वाक्यांश भारतीय संसद के प्रवेश कक्ष में अंकित है और यह भारतीय चिंतन के सार को दर्शाता है। यह महोपनिषद् के अध्याय 6, श्लोक 71 से लिया गया हैः

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्

अर्थात्, यह मेरा है, यह पराया है, ऐसी गणना (सोच) संकीर्ण मन वालों की होती है। उदार चरित्र वालों के लिए तो सम्पूर्ण धरती ही एक परिवार है।

आधुनिक भारत में भी इस दर्शन को नए संदर्भों में प्रस्तुत किया गया। स्वामी विवेकानंद ने शिकागो धर्म संसद में अपने भाषण के माध्यम से दुनिया को भारतीय सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति के इसी सिद्धांत से परिचित कराया। महात्मा गांधी का 'सर्वोदय' (सभी का उदय) का विचार "वसुधैव कुटुंबकम्" का ही एक व्यावहारिक रूप था, जो समाज के अंतिम व्यक्ति के कल्याण की बात करता है। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने संकीर्ण राष्ट्रवाद की आलोचना करते हुए एक मानवतावादी अंतरराष्ट्रीयवाद का समर्थन किया, जिसका केंद्र उनका विश्व–भारती विश्वविद्यालय बना।

सहकारिताः सामूहिक प्रगति का व्यावहारिक तंत्र

यदि "वसुधैव कुटुंबकम" वह उदात्त दृष्टि है जो हमारी मंजिल को परिभाषित करती है, तो "सहकारिता" वह सुविचारित और व्यावहारिक मार्ग है जो हमें उस मंजिल तक ले जाएगा। सहकारिता का सरल अर्थ है – साझा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए स्वेच्छा से मिलकर प्रयास करना। यह प्रकृति का मूल नियम है।

सहकारिता का तात्विक अर्थ और सिद्धांतः सहकारिता केवल मिलकर काम करना नहीं है, बल्कि यह एक संगठित सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था है जो कुछ निश्चित सिद्धांतों पर आधारित है। अंतरराष्ट्रीय सहकारी गठबंधन ने इसके सात प्रमुख सिद्धांत परिभाषित किए हैं, जो इस आंदोलन की आत्मा हैंः

1. स्वैच्छिक और खुली सदस्यता, 2. लोकतांत्रिक सदस्य नियंत्रण, 3. सदस्य की आर्थिक भागीदारी, 4. स्वायत्तता और स्वतंत्रता, 5. शिक्षा, प्रशिक्षण और सूचना, 6. सहकारी समितियों के बीच सहयोग, 7. समुदाय के लिए चिंता।

सहकारिता के वैश्विक और भारतीय उदाहरणः

- **भारत में श्वेत क्रांति** – भारत में सहकारिता का सबसे चमकदार उदाहरण गुजरात सहकारी दुग्ध विपणन संघ है, जिसे हम 'अमूल' के नाम से जानते हैं। 1946 में दो गाँवों से शुरू हुआ यह आंदोलन आज 36 लाख से अधिक छोटे दूध उत्पादकों का एक महासंघ है। इसने न केवल भारत को दुनिया का सबसे बड़ा दूध उत्पादक बनाया, बल्कि लाखों ग्रामीण परिवारों, विशेषकर महिलाओं को

आर्थिक रूप से सशक्त किया। अमूल ने यह सिद्ध कर दिया कि जब छोटे उत्पादक मिलकर काम करते हैं, तो वे बड़े–से–बड़े कॉर्पोरेट दिग्गजों को भी टक्कर दे सकते हैं। इसी तरह, 'लिज्जत पापड़' की कहानी, जो सात महिलाओं द्वारा 80 रुपये के ऋण से शुरू हुई और आज एक विशाल सहकारी उद्यम है, प्रेरणादायक है। भारत सरकार द्वारा 2021 में एक अलग 'सहकारिता मंत्रालय' की स्थापना इस क्षेत्र के बढ़ते महत्व को रेखांकित करती है।

- **स्पेन का मोंड्रैगन कॉर्पोरेशन:** यह दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे सफल श्रमिक सहकारी समितियों का महासंघ है। बास्क देश, जिसे यूस्कल हेरिया भी कहा जाता है में 1956 में एक छोटी सी तकनीकी फर्म के रूप में शुरू हुआ, आज यह वित्त, उद्योग, खुदरा और ज्ञान के क्षेत्र में काम करने वाली सैकड़ों सहकारी समितियों का एक नेटवर्क है। इसकी सफलता का राज इसका 'श्रमिक–स्वामित्व' मॉडल है, जहां निर्णय लेने की शक्ति और लाभ श्रमिकों के बीच साझा किया जाता है।

- **जर्मनी में राइफेसेन आंदोलन:** 19वीं शताब्दी में फ्रेडरिक विल्हेम राइफेसेन द्वारा शुरू की गई ग्रामीण क्रेडिट यूनियनों ने जर्मनी के किसानों को साहूकारों के चंगुल से मुक्त कराया। आज भी, सहकारी बैंक जर्मनी के बैंकिंग क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

आधुनिक प्रतिस्पर्धा–आधारित मॉडल का विकल्प: आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था का मूल मंत्र 'प्रतिस्पर्धा' है। जहां एक ओर स्वस्थ प्रतिस्पर्धा नवाचार को बढ़ावा दे सकती है, वहीं दूसरी ओर अनियंत्रित और गलाकाट प्रतिस्पर्धा ने गंभीर विकृतियों को जन्म दिया है। इसने शोषण को बढ़ावा दिया है, आय की असमानता को बढ़ाया है, पर्यावरण का अंधाधुंध दोहन किया है, और समाज में तनाव, चिंता और अविश्वास का माहौल पैदा किया है। सहकारिता 'अस्तित्व के लिए संघर्ष' (survival of the fittest) के मॉडल के विपरीत 'सहयोग से प्रगति' (progress through cooperation) का एक अधिक मानवीय और टिकाऊ विकल्प प्रस्तुत करती है।

अंतर्संबंध: दृष्टि और मार्ग का संगम

"वसुधैव कुटुंबकम" और "सहकारिता" एक–दूसरे से अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं; वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। उनका संबंध आत्मा और शरीर जैसा है। "वसुधैव कुटुंबकम" वह आत्मा है, वह दार्शनिक आधार है जो हमें बताता है कि हमें सहयोग क्यों करना चाहिए। जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि पूरी दुनिया एक परिवार है, तो उस परिवार के सदस्यों के रूप में एक–दूसरे की मदद करना, एक–दूसरे का समर्थन करना और मिलकर चुनौतियों का सामना करना हमारा स्वाभाविक कर्तव्य बन जाता है।

वहीं, "सहकारिता" वह शरीर है, वह व्यावहारिक तंत्र है जो इस दार्शनिक दृष्टि को साकार करता है। यह हमें बताता है कि सहयोग 'कैसे' किया जाए। यह हमें वे संरचनाएँ, सिद्धांत और प्रक्रियाएँ प्रदान करता है जिनके माध्यम से हम अपने सहयोग को प्रभावी और परिणामोन्मुखी बना सकते हैं।

जब ये दोनों मिलते हैं, तो एक शक्तिशाली परिवर्तनकारी शक्ति का निर्माण होता है। "वसुधैव

कुटुंबकम" सहकारिता को एक नैतिक दिशा और एक व्यापक उद्देश्य प्रदान करता है, जबकि सहकारिता "वसुधैव कुटुंबकम" को जमीन पर उतारने का एक ठोस ढाँचा प्रदान करती है। यह संगम हमें व्यक्तिगत और सामूहिक स्वार्थ से ऊपर उठकर 'सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय' (सभी का हित, सभी का सुख) के लिए काम करने को प्रेरित करता है।

समकालीन वैश्विक चुनौतियों का समाधानः एक एकीकृत दृष्टिकोण

क. जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय विनाशः

विकसित और विकासशील देशों के बीच ऐतिहासिक जिम्मेदारी को लेकर आरोप–प्रत्यारोप का खेल चलता रहता है। विकसित देश स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकियों (जैसे सौर, पवन, ग्रीन हाइड्रोजन) को विकासशील देशों को सस्ती और सुलभ दरों पर उपलब्ध कराकर पर्यावरण को बेहतर बना सकते हैं।

'पेरिस समझौते' के तहत स्थापित 'ग्रीन क्लाइमेट फंड' जैसी पहलों को ईमानदारी से वित्त पोषित किया जाए। नवीकरणीय ऊर्जा, कार्बन कैप्चर और टिकाऊ कृषि पर अंतरराष्ट्रीय सहयोगात्मक अनुसंधान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। भारत के नेतृत्व में स्थापित 'अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन' इस दिशा में एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

ख. वैश्विक स्वास्थ्य और महामारियाँः

विश्व स्वास्थ्य संगठन को अधिक अधिकार और संसाधन दिए जाने चाहिएं ताकि वह भविष्य की महामारियों के लिए एक प्रभावी प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली स्थापित कर सके और वैश्विक प्रतिक्रिया का समन्वय कर सके। आवश्यक दवाओं और टीकों के लिए पेटेंट नियमों में ढील देने और 'कोविड–19 टेक्नोलॉजी एक्सेस पूल' (C&TAP) जैसी पहलों को मजबूत करने की आवश्यकता है। बीमारियों के प्रकोप पर नजर रखने के लिए एक वैश्विक, पारदर्शी और सहयोगी निगरानी नेटवर्क स्थापित किया जाना चाहिए।

ग. आर्थिक असमानता और सतत विकासः

ऐसी वैश्विक व्यापार प्रणालियों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए जो उत्पादकों को, विशेष रूप से विकासशील देशों में, उनके श्रम का उचित मूल्य सुनिश्चित करें। 2030 तक गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा को समाप्त करने जैसे सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वित्तीय और तकनीकी सहयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

घ. भू–राजनीतिक संघर्ष और आतंकवादः

आतंकवाद एक ऐसी वैश्विक चुनौती है जिससे कोई भी देश अकेले नहीं लड़ सकता। संयुक्त राष्ट्र, विशेष रूप से सुरक्षा परिषद में सुधार करके उसे अधिक प्रभावी बनाना चाहिए। संघर्षों के समाधान के लिए सैन्य हस्तक्षेप के बजाय कूटनीति और संवाद को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

क्रियान्वयन की चुनौतियां और मार्ग

इन महान आदर्शों को वास्तविकता में बदलना निस्संदेह एक कठिन यात्रा है। इस मार्ग में अनेक बाधाएं हैं। दुनिया के कई हिस्सों में आक्रामक और आत्म–केंद्रित राष्ट्रवाद का उदय हो रहा है, जो "मेरा देश पहले" की नीति पर चलता है और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को कमजोर करता है। शक्तिशाली निगमों और देशों के निहित स्वार्थ अक्सर वैश्विक सहयोग के मार्ग में बाधा डालते हैं। हथियार उद्योग, जीवाश्म ईंधन लॉबी और फार्मास्यूटिकल कंपनियाँ अक्सर अपने लाभ के लिए संघर्ष और असमानता को बनाए रखना चाहती हैं। राष्ट्रों के बीच पुराने संघर्षों, औपनिवेशिक शोषण और ऐतिहासिक शिकायतों के कारण गहरा अविश्वास व्याप्त है, जो सार्थक सहयोग को कठिन बना देता है। वैश्विक स्तर पर ऐसे दूरदर्शी और साहसी नेताओं की कमी है जो अपने अल्पकालिक राजनीतिक लाभों से ऊपर उठकर मानवता के दीर्घकालिक हितों के लिए काम करने को तैयार हों।

समाधान के उपाय:

शिक्षा की नींव में ही वैश्विक नागरिकता, सांस्कृतिक संवेदनशीलता और सहयोग के मूल्यों को स्थापित करना होगा। पाठ्यक्रम में इतिहास को युद्धों और साम्राज्यों की कहानी के बजाय पाठ्यक्रम में वैश्विक नागरिकता, समावेशिता, सहिष्णुता, सहयोग और विचारों के आदान–प्रदान की कहानी के रूप में भी पढ़ाया जाना चाहिए। साथ ही परियोजना आधारित सहयोगी शिक्षा लागू की जानी चाहिए। संयुक्त राष्ट्र, विश्व स्वास्थ्य संगठन, विश्व व्यापार संगठन जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठनों में तत्काल सुधार करके उन्हें अधिक लोकतांत्रिक, पारदर्शी, जवाबदेह और प्रभावी बनाने की आवश्यकता है। सरकारों से परे, सांस्कृतिक आदान–प्रदान, पर्यटन, छात्र विनिमय कार्यक्रमों, कला और खेल के माध्यम से विभिन्न देशों के आम लोगों के बीच संवाद और समझ को बढ़ावा देना चाहिए। डिजिटल प्लेटफॉर्म इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

गैर–सरकारी संगठनों, थिंक टैंकों और नागरिक समाज के समूहों को सरकारों पर वैश्विक सहयोग के लिए दबाव बनाने और जमीनी स्तर पर सहकारिता के मॉडल को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। भारत को अपनी विदेश नीति, कूटनीति ('वैक्सीन मैत्री', 'अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन') और वैश्विक मंचों पर अपनी भागीदारी के माध्यम से इन मूल्यों का नेतृत्व करना जारी रखना चाहिए। G20 की अध्यक्षता के दौरान "एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य" की थीम को अपनाना इस दिशा में एक शक्तिशाली संदेश था।

निष्कर्ष: भविष्य का चुनाव

हम इतिहास के एक निर्णायक मोड़ पर खड़े हैं। हमारे सामने दो रास्ते स्पष्ट हैं। एक रास्ता अलगाव, प्रतिस्पर्धा, संघर्ष और संकीर्ण स्वार्थों का है। यह हमें निश्चित रूप से जलवायु प्रलय, निरंतर संघर्ष और सामूहिक विनाश की ओर ले जाएगा। दूसरा रास्ता नया और चुनौतीपूर्ण है, लेकिन आशा से भरा है। यह सहयोग, सहानुभूति, साझा जिम्मेदारी और साझा मानवता का मार्ग है। आज का मानव, ज्ञान और संसाधनों में जितना समृद्ध हुआ है, उतना ही अकेला, असुरक्षित और विखंडित भी महसूस कर रहा है। इसका समाधान केवल तकनीक या हथियार नहीं दे सकते

हैं, बल्कि एक ऐसी वैचारिक और व्यावहारिक क्रांति चाहिए जिसमें हर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र स्वयं को एक साझा परिवार का सदस्य माने।

"वसुधैव कुटुंबकम" और "सहकारिता" केवल प्राचीन भारतीय दर्शन के सुंदर शब्द नहीं हैं; वे भविष्य के लिए एक उत्तरजीविता मैनुअल (survival manual) हैं। सभी राष्ट्रों की नियति एक अदृश्य धागे से एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। एक वैश्विक परिवार के रूप में हमारी सफलता और हमारा अस्तित्व इस बात पर निर्भर करेगा कि हम कितनी अच्छी तरह एक–दूसरे का सहयोग करना सीखते हैं।

"मिलकर साथ चलें, साथ बढ़ें और सबको अपना मानता हुए एक ऐसा विश्व बनाएं जो सचमुच एक परिवार हो।"

यही विश्व की आवश्यकता है, यही समय की माँग है, और यही मानवता का एकमात्र भविष्य है।

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8) **पं.सं. 3246/77**

प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम

समाचार पत्रों का पंजीकरण (केंद्रीय) नियम

"राजभाषा भारती" के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन का स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशन का नाम व पता	राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
6.	संपादक का नाम व पता	श्री अनिल कुमार, उप सचिव (पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, अनिल कुमार घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–

प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली–6

मैं से हम तकः नये भारत की सहकारी यात्रा

– वैद्या हेतल प्रविणभाई बारैया
सह–प्राध्यापक,
आयुर्वेद शिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान, जामनगर

इक्कीसवीं सदी का भारत केवल आर्थिक रूप से नहीं, सामाजिक दृष्टि से भी एक निर्णायक मोड़ पर खड़ा है। तकनीकी विकास, वैश्विक संपर्क और डिजिटल परिवर्तन के इस युग में, राष्ट्र की वास्तविक प्रगति का मापदंड केवल सकल घरेलू उत्पाद नहीं, बल्कि समाज की साझी भागीदारी, समरसता और सामाजिक न्याय है। इसी दिशा में 'सहकारिता' एक ऐसा विचार है जो व्यक्ति से समाज, स्वार्थ से सेवा और लाभ से लोकहित की ओर ले जाता है एवं नये भारत के निर्माण की आधारशिला बन चुका है। सहकारिता का मूल भाव केवल संस्था खड़ा करना नहीं, बल्कि एक चेतना को जगाना है जिसमें 'मैं' के स्थान पर 'हम' का भाव प्रमुख हो।

वैश्विक मान्यता और भारत की भूमिका

संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 2025 को 'अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष घोषित किया गया है। इसकी थीम है – "सहकारिता से बनेगा एक बेहतर विश्व"। यह थीम न केवल वैश्विक स्तर पर सहकारी मूल्यों को मान्यता देती है, बल्कि भारत जैसे देशों के लिए अपनी सहकारी परंपराओं को विश्व मंच पर प्रस्तुत करने का एक स्वर्णिम अवसर भी प्रदान करती है। भारत में आयोजित 'आई.सी.ए. वैश्विक सहकारी सम्मेलन' (2024, नई दिल्ली) इस बात का प्रमाण है कि भारत अब वैश्विक सहकारिता नेतृत्व में निर्णायक भूमिका निभा रहा है।

अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष, 2025 के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र ने चार प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किए हैं:

1. सहकारिता के प्रति जागरूकता बढ़ाना,
2. सहकारी संस्थाओं की सशक्त वृद्धि,
3. अनुकूल नीति और विधिक वातावरण का निर्माण,
4. युवाओं और महिलाओं के नेतृत्व को प्रोत्साहन।

भारत ने इन सभी बिंदुओं पर सक्रिय कार्य आरंभ कर दिया है। बहुद्देशीय प्राथमिक कृषि साख समितियों (पैक्स) का निर्माण, डिजिटल सशक्तिकरण के माध्यम से महिला स्वयं सहायता समूह को वित्तीय और तकनीकी पहुंच देना तथा युवाओं को कृषक उत्पादक संगठन (एफ.पी.ओ) और स्टार्टअप से जोड़ना, ये सभी कदम अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष 2025 के लक्ष्यों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं।

राष्ट्रीय सहकारी नीति 2025–2045 की दिशा

भारत सरकार द्वारा हाल ही में घोषित 'राष्ट्रीय सहकारी नीति 2025–2045' एक दीर्घकालिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। इस नीति के अंतर्गत लक्ष्य है कि हर गाँव में कम से कम एक बहुउद्देशीय सहकारी संस्था स्थापित हो, जो कृषि, विपणन, भंडारण और ऋण जैसे कार्यों में दक्ष हो। इस नीति में पारदर्शिता, भागीदारी और तकनीकी नवाचार को प्राथमिकता दी गई है। अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष 2025 की भावना को सशक्त करने हेतु भारत के कई राज्यों ने नवाचार आधारित सहकारी प्रयास शुरू किए हैं। गुजरात में सहकारी संस्थाओं द्वारा 13,000 से अधिक गांवों में धार्मिक स्थलों की सामूहिक सफाई 'सहकार–स्वच्छता' की एक प्रेरणादायक मिसाल बनी। वहीं राजस्थान में रोजगार मेलों और गोपाल क्रेडिट कार्ड योजना जैसे कार्यक्रमों ने सहकारिता को स्थानीय विकास से जोड़ा है।

भारत में सहकारिता कोई नया विचार नहीं। यह हमारी सांस्कृतिक, धार्मिक और दार्शनिक परंपरा में रचा–बसा है। वैदिक ऋचाओं में "संगच्छध्वं सं वदध्वं" (साथ चलें, साथ बोलें) से लेकर भगवद्गीता में कर्मयोग की भावना, और महाभारत में युधिष्ठिर की सभा नीति तक, हर जगह सामाजिक समन्वय और सह–निर्णय की प्रेरणा दिखाई देती है। कुरान में 'शूरा' की परंपरा यानी परामर्श आधारित नेतृत्व को प्राथमिकता दी गई है। बाइबल में सहयोग और करुणा से भरे समुदाय के निर्माण को ईश्वरीय इच्छा माना गया है। सिख धर्म में सेवा और संगत की परंपरा, सहकारिता का जीवंत रूप है। जैनी और बौद्ध ग्रंथ में अहिंसा, सह–अस्तित्व और सम्यक दृष्टि के माध्यम से समाज के सभी वर्गों को साथ लेकर चलने की शिक्षा दी गई है। आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथ चरक संहिता में स्वास्थ्य को "व्यक्ति और समाज के सामूहिक संतुलन" से जोड़ा गया है। सुश्रुत संहिता में चिकित्सकों की सभा के लिए सहमति और परामर्श की व्यवस्था वर्णित है। इस प्रकार, सहकारिता सांस्कृतिक, धार्मिक और नैतिक परंपरा की गहराई से उपजा वह मूल मंत्र है, जो भारत को "वसुधैव कुटुम्बकम्" के दर्शन से जोड़ता है।

स्वतंत्र भारत में सहकारिता की पुनर्स्थापना

भारत को जब स्वतंत्रता मिली, तब आर्थिक विषमता, संसाधनों की कमी और सामाजिक विखंडन जैसे गंभीर संकट सामने थे। इन समस्याओं का समाधान केवल सरकारी योजनाओं से संभव नहीं था; इसके लिए जनभागीदारी आवश्यक थी। इसी संदर्भ में सहकारिता को एक सशक्त उपकरण के रूप में अपनाया गया। 1951 की प्रथम पंचवर्षीय योजना में ही सहकारिता को ग्रामीण विकास की रीढ़ कहा गया। चाहे वह कृषि ऋण हो, उर्वरक वितरण, दुग्ध उत्पादन या बीजों की आपूर्ति; हर क्षेत्र में सहकारी संस्थानों ने किसानों को बिचौलियों के चंगुल से मुक्त किया और सीधा बाजार और समर्थन उपलब्ध कराया। 1969 में 'राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम' की स्थापना ने सहकारिता को बहु–क्षेत्रीय स्वरूप दिया; जिससे मत्स्य, हस्तशिल्प, विपणन, लघु उद्योग जैसे क्षेत्रों में भी सहकारी दृष्टिकोण लागू हुआ।

73वें संविधान संशोधन (1992) के बाद ग्राम पंचायतों को संवैधानिक दर्जा मिला और विकेंद्रीकरण के साथ स्थानीय भागीदारी की नई नींव रखी गई। ग्राम पंचायतें अब केवल सड़क या पानी की योजनाएं नहीं बनातीं, बल्कि स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार और स्वच्छता जैसे विषयों पर सहकारी

निर्णय प्रक्रिया के तहत कार्य करती हैं। कई राज्यों में पंचायतों ने स्थानीय दुग्ध समितियां, कृषक उत्पादक संघ और महिला बचत समूहों के माध्यम से स्वराज की सहकारी छवि प्रस्तुत की है।

भारत के ग्रामीण परिदृश्य में 'महिला स्वयं सहायता समूह' एक सामाजिक क्रांति के वाहक बन चुके हैं। जहां कभी महिलाएं केवल घर तक सीमित थीं, आज वे बचत और ऋण का संचालन करती हैं; सिलाई, कढ़ाई, फूड प्रोसेसिंग, गौ–संवर्धन जैसे उद्यमों को चलाती हैं; शिक्षा और पोषण अभियानों की स्थानीय नेतृत्वकर्ता बन चुकी हैं। दीनदयाल अंत्योदय योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एन.आर.एल.एम.) जैसी योजनाओं ने इन समूहों को प्रशिक्षण, पूंजी और विपणन तक की सहूलियत दी। आज भारत में सात करोड़ से अधिक महिलाएं इस समूह से जुड़ी हैं जो विश्व में किसी भी देश से अधिक है। यह न केवल आर्थिक सहकारिता है, बल्कि नारी सशक्तिकरण का सामाजिक मॉडल भी है। भारत ने महिलाओं के नेतृत्व में विकास को केवल नीति तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे वैश्विक विमर्श का केंद्र बनाया है। मार्च 2024 में न्यूयॉर्क में आयोजित 'महिला स्थिति पर 68वें आयोग (CSW 68)' में भारत ने 'महिला नेतृत्व आधारित विकास' थीम पर विचार प्रस्तुत किए। संयुक्त राष्ट्र महिला (यूएन वूमैन) और भारत के स्थायी मिशन द्वारा आयोजित चर्चाओं में भारत ने बताया कि 'जब नेतृत्व करती हैं महिलाएँ (When Women Lead)' जैसे प्रयासों से जमीनी स्तर पर महिलाओं के नेतृत्व को मान्यता मिल रही है। यह नेतृत्व निजी लाभ से ऊपर उठकर सामूहिक उत्थान की दिशा में अग्रसर होता है। वे ऐसी संरचनाएँ गढ़ती हैं जो न केवल आज की समस्याओं का समाधान करें, बल्कि भविष्य के लिए स्थायी विकास का मार्ग प्रशस्त करें।

डिजिटल भारत– तकनीक से सहकारिता

जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2015 में "डिजिटल इंडिया" की घोषणा की, तो उद्देश्य केवल इंटरनेट पहुंच या ऑनलाइन सेवाएं नहीं था, बल्कि प्रत्येक नागरिक को देश के विकास में भागीदार बनाना था। यह भी एक प्रकार की डिजिटल सहकारिता है, जिसमें ज्ञान, सेवा और सशक्तिकरण साझा होता है। ई–ग्राम स्वराज पोर्टल, जनधन योजना, आधार आधारित सेवाएं और भारत इंटरफेस फॉर मनी – एकीकृत भुगतान इंटरफेस (BHIM-UPI) जैसे प्लेटफॉर्म ने गांव के साधारण व्यक्ति को भी डिजिटल भागीदारी का हिस्सा बना दिया है। कोविड–19 वैक्सीनेशन अभियान इसका श्रेष्ठ उदाहरण है, जहां डिजिटल प्लेटफॉर्म और समुदाय–आधारित स्वयंसेवी संस्थाओं ने सहयोग की मिसाल कायम की।

भारत आज दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप इकोसिस्टम है। लेकिन यह कहानी केवल शहरी युवाओं की नहीं बल्कि ग्रामीण भारत और सहकारी भावना की भी है। एफपीओ और कृषक प्रोड्यूसर कंपनियां तकनीकी साझेदारी से जुड़कर ऑनलाइन विपणन, वैल्यू एडिशन, और क्लाउड–बेस्ड आपूर्ति श्रृंखला जैसे नवाचार अपना रही हैं। महिला उद्यमी स्टार्टअप्स स्वयं सहायता समूहों से निकलकर डिजिटल मार्केटप्लेस पर दस्तक दे रहे हैं। सरकारी योजनाएं जैसे; स्टार्टअप इंडिया, मुद्रा योजना, नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन, मंथन प्लेटफॉर्म, अटल इनोवेशन मिशन ये सभी सहकारी सोच को नवाचार से जोड़ने के सशक्त प्रयास हैं।

ओपन–सोर्स प्लेटफॉर्म्स, शिक्षा में कोलैबोरेटिव लर्निंग, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में साझी प्रयोगशालाएं और डिजिटल लोकतंत्र में जनभागीदारी, ये सभी डिजिटल सहकार के आधुनिक रूप हैं। इससे एक ऐसा वातावरण बन रहा है जहां ज्ञान, संसाधन और अवसर, सब कुछ साझा है। यह दर्शाता है कि नव भारत का भविष्य तकनीक और सहकारिता के संयुक्त प्रयास से ही उज्ज्वल होगा, जहां नवाचार केवल आविष्कार नहीं, बल्कि समाज का सामूहिक समाधान बनेगा।

भारत की 65% से अधिक जनसंख्या युवा है जो किसी भी लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ी शक्ति है। आज का युवा स्टार्टअप, समाजसेवा, डिजिटल आंदोलन और स्थानीय नेतृत्व के माध्यम से सहकारिता को नए आयाम दे रहा है।

योग और आयुर्वेद से वैश्विक सहकारिता

जहां पश्चिमी देश औद्योगिकरण और पूँजी आधारित विकास की दौड़ में लगे थे, भारत ने स्वास्थ्य, संतुलन और प्रकृति के साथ सहअस्तित्व का मार्ग अपनाया। यही दर्शन आज योग और आयुर्वेद के माध्यम से पूरी दुनिया में भारत की पहचान बन रहा है। वर्ष 2015 में जब संयुक्त राष्ट्र ने भारत के प्रस्ताव पर 21 जून को "अंतरराष्ट्रीय योग दिवस" घोषित किया, तो यह मात्र भारत की विश्वव्यापी सहकारी पहल नहीं थी, बल्कि वसुधैव कुटुम्बकम् के विचार का वैश्विक उत्सव था। आज 180+ देशों में लाखों लोग प्रतिदिन योग करते हैं। यह संस्कृति के सहकार का अनुपम उदाहरण है।

भारत सरकार द्वारा स्थापित आयुष मंत्रालय और ग्लोबल आयुर्वेद समिट्स के माध्यम से आयुर्वेद को एक साक्ष्य–आधारित चिकित्सा प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा भारत में पहला "ग्लोबल ट्रेडीशनल सेंटर मैडिसिन (जी टी सी एम)" गुजरात के जामनगर में स्थापित करना इस दिशा में ऐतिहासिक कदम है। यह केंद्र केवल शोध नहीं करेगा, बल्कि अनेक देशों को पारंपरिक चिकित्सा और सहकारी ज्ञान के आधार पर जोड़ने का माध्यम बनेगा। आयुष ग्रीड, आयुष स्टार्टअप चैलेंज, जैसे प्रयासों से भारत वैश्विक सहयोग में साझेदार की भूमिका निभा रहा है। इस से स्पष्ट होता है कि भारत केवल "विश्वगुरु" नहीं, बल्कि "विश्वसहकारी" भी बन रहा है, जहां वह ज्ञान, स्वास्थ्य और संस्कृति को बाँटने के लिए नहीं, जोड़ने के लिए साझा कर रहा है।

चिकित्सा और औषधि क्षेत्र में सहकारिता की भूमिका

स्वास्थ्य और औषधि क्षेत्र में सहकारिता का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। भारत में कई प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, ग्रामीण डिस्पेंसरी और जन औषधि केंद्र सहकारी आधार पर कार्यरत हैं, जहां समुदाय की भागीदारी से गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा सेवा सुलभ होती है। जनऔषधि परियोजना के अंतर्गत सहकारी संस्थाओं को किफायती दवाइयों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु सशक्त भूमिका दी जा रही है। इसके अतिरिक्त, कुछ राज्यों में फार्मेसी सहकारी समितियां भी सक्रिय हैं, जो थोक खरीद और वितरण के माध्यम से दवाओं की लागत कम करती हैं और छोटी फार्मेसियों को सामूहिक लाभ पहुंचाती हैं। मेडिकल कॉलेजों के लिए आवश्यक दवाइयों, उपकरणों और प्रशिक्षण संसाधनों की सामूहिक खरीद भी अब सहकारी मोड के तहत हो रही है।

शिक्षा नीति और सहकारिताः समावेशी विकास की आधारशिला

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत शिक्षण संस्थानों में बहु–अनुशासनात्मकता, कौशल विकास, सामुदायिक भागीदारी और उद्यमशीलता को प्रोत्साहन मिलता है। भारत में कई सहकारी शिक्षण संस्थान, जैसे शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज, कृषि एवं डेयरी प्रबंधन संस्थान वर्षों से स्थानीय युवाओं को सामूहिक नेतृत्व, पारदर्शिता और सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रशिक्षण दे रहे हैं। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत 'स्कूल कॉम्प्लेक्स' और 'सामुदायिक शिक्षा केंद्र' जैसे प्रयोग, ग्रामीण स्तर पर सहकारी संरचना को शिक्षा से जोड़ने के प्रयास हैं। इनमें शिक्षक, अभिभावक, प्रशासन और विद्यार्थी सभी सहभागी बनते हैं, जिससे नीति का कार्यान्वयन अधिक प्रभावी और स्थानीय सन्दर्भ में प्रासंगिक होता है। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा प्रस्तावित 'लोकल ज्ञान और परंपरा आधारित शिक्षण' की अवधारणा, सहकारिता के स्थानीय और सांस्कृतिक स्वरूप को पुनर्स्थापित करने की दिशा में एक सशक्त कदम है। इससे विद्यार्थियों में न केवल जड़ों से जुड़ाव पैदा होगा, बल्कि वे स्थानीय सहकारी गतिविधियों से व्यावहारिक अनुभव भी प्राप्त करेंगे।

राष्ट्रीय रक्षा प्रणाली और सहकारिताः सामूहिक सुरक्षा का मॉडल

सहकारिता का प्रभाव केवल सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं, बल्कि यह राष्ट्र की सुरक्षा रणनीति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। भारत की राष्ट्रीय रक्षा प्रणाली में सहकारिता का सिद्धांत कई रूपों में प्रकट होता है, जैसे कि सिविल डिफेंस वॉलंटियर्स, पूर्व सैनिक सहकारी समितियां और ग्रामीण सुरक्षा निगरानी समितियां, जो सामूहिक सुरक्षा और सहभागिता के आदर्श प्रस्तुत करती हैं। पूर्व सैनिकों द्वारा स्थापित सहकारी समितियां न केवल उन्हें आजीविका और पुनर्स्थापन का साधन देती हैं, बल्कि स्थानीय युवाओं को अनुशासन, नेतृत्व और सुरक्षा शिक्षा भी प्रदान करती हैं। इन समितियों के माध्यम से रक्षक सेवा क्षेत्रों में सहकारी उद्यम चलाए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, आपदा प्रबंधन, स्वास्थ्य सुरक्षा और सीमांत क्षेत्रों में नागरिक सहभागिता के लिए स्थानीय स्तर पर बनाए गए सहकारी समूहों ने यह प्रमाणित किया है कि रक्षा और नागरिक जीवन के बीच सामंजस्य स्थापित कर पाना संभव है। राष्ट्रीय रक्षा नीति में सहकारी सोच को समाहित करने से सुरक्षा रणनीति अधिक सहभागी, विकेंद्रीकृत और उत्तरदायी बन सकती है, जिसमें हर नागरिक केवल रक्षक नहीं, बल्कि सहकारी संरचना का सक्रिय हिस्सा बन सके।

हिंदीः भारत को जोड़ने वाली सहकारी भाषा

भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में हिंदी न केवल एक भाषा है, बल्कि संवेदनाओं और संवादों का साझा माध्यम है। भारत में लगभग 55 करोड़ से अधिक लोग हिंदी भाषी हैं, जो इसे विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा बनाता है। हिंदी आज सिर्फ साहित्य तक सीमित नहीं; यह प्रशासन, विज्ञान, तकनीक, मीडिया और डिजिटल संचार की सशक्त भाषा बन चुकी है। गृह मंत्रालय के अधीन कार्यरत राजभाषा विभाग न केवल हिंदी के संवर्धन का दायित्व निभाता है, बल्कि वह इसे राष्ट्रीय एकता, पारस्परिक समझ और सहकारी शासन का माध्यम भी बनाता है। नई तकनीकों जैसे आर्टीफ़िशियल इंटेलिजन्स (ए आई), प्राकृतिक भाषा संसाधन" (एन एल पी) में हिंदी को सक्षम बनाने के प्रयास, देश को तकनीकी रूप से समावेशी और भाषाई रूप से

आत्मनिर्भर बना रहे हैं। राजभाषा विभाग का यह कार्य सहकारिता के डिजिटल, प्रशासनिक और सामाजिक पहलुओं को मजबूत करता है।

भारत का अगला कदम AI आधारित सहकारी निर्णय प्रणाली, ब्लॉकचेन द्वारा पारदर्शी सहकारी लेन–देन, ग्राम स्तर पर क्लाउड डेटा साझाकरण और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत–आधारित सहकारी मॉडल का निर्यात है। यह सब तभी संभव होगा जब भाषा, तकनीक और युवा शक्ति, तीनों सहकारी ढांचे में संगठित हों।

सार–संक्षेप

जब समाज "मैं" की संकीर्णता से निकलकर "हम" की व्यापकता की ओर अग्रसर होता है, तभी सच्चे अर्थों में राष्ट्र निर्माण की यात्रा आरंभ होती है। भारत की सहकारी यात्रा इसी भाव से सुसज्जित रही है जहां गाँव का किसान, शहर का युवा, महिला उद्यमी, शिक्षक, चिकित्सक और तकनीकी विशेषज्ञ सब मिलकर विकास की एक साझा तस्वीर बनाते हैं। सहकारिता भारत के लिए महज़ आर्थिक तंत्र नहीं, एक जीवनदृष्टि है जो गांधी के ग्राम स्वराज, कुरियन के अमूल, योग की सार्वभौमिकता, और राजभाषा विभाग की भाषाई एकता से लेकर डिजिटल भारत के नवाचार तक पसरी हुई है। आज जब भारत अमृतकाल की ओर बढ़ रहा है, तब हमें यह समझना होगा कि नव भारत का निर्माण न केवल नीतियों से, बल्कि नियत से होगा। और यह निर्माण तब सफल होगा जब हर नागरिक सहभागी, संवेदनशील और सशक्त होगा। सहकार की परंपरा को आगे बढ़ाकर ही हम भविष्य को स्वर्णिम बना सकते हैं। सहकारिता ही वह शक्ति है जो भारत को सशक्त, समावेशी और सहृदय राष्ट्र बना सकती है। यदि नव भारत को और नयी ऊंचाइयों पर ले जाना है, तो केवल सरकार से नहीं, सहकार से बनेगा।

पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकासः आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक सामूहिक यात्रा

– रेनू सनवाल, कुशाग्रा जोशी एवं लक्ष्मी कांत
विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, अल्मोड़ा

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी जनसंख्या का लगभग 65 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। कृषि यहां सिर्फ आजीविका का माध्यम नहीं, बल्कि संस्कृति, परंपरा और सामाजिक ताने–बाने का केंद्र बिंदु भी है। देश के पर्वतीय क्षेत्रों, विशेषकर उत्तराखंड, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश और उत्तर–पूर्वी राज्यों पर कृषि की विशिष्ट पारिस्थितिकी के चलते विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

उत्तराखंड राज्य का उदाहरण लें, तो यह हिमालय की दक्षिणी ढलान पर स्थित है और इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 53,483 वर्ग किमी है। यहां की जलवायु, पारंपरिक कृषि प्रणाली, वन आधारित जीवन शैली और सीमित संसाधनों के कारण कृषि और ग्रामीण विकास को लेकर अनेक अवसर एवं चुनौतियां दोनों विद्यमान हैं। यहां की विशिष्ट चुनौतियों में सहकारी कृषि प्रणाली पर्वतीय क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता की दिशा में एक प्रभावी रणनीति बनकर उभरती है जो कि विकसित भारत का लक्ष्य प्राप्त करने में एक मील का पत्थर साबित हो सकती है।

पर्वतीय क्षेत्र की कृषिः स्थिति और संभावनाएं

उत्तराखंड जैसे राज्य में कुल भौगोलिक क्षेत्र का 71.05 प्रतिशत वन क्षेत्र के अंतर्गत आता है (भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2023)। शेष भूमि में भी बहुत सा हिस्सा बंजर या ढलान वाला है। इसके चलते केवल 6.38 लाख हेक्टेयर भूमि ही कृषि के लिए प्रयोग में लाई जा सकती है, जो कुल क्षेत्र का मात्र 11.93 प्रतिशत है।

यहां की अधिकांश भूमि छोटे और सीमांत किसानों की है। मैदानी जिलों की तुलना में पर्वतीय जिलों में कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता बेहद कम है। हालांकि औसत वर्षा 1,644 मि.मी. है, लेकिन जल संग्रहण और सिंचाई व्यवस्था की स्थिति कमजोर है।

उत्तराखंड में दो प्रमुख कृषि–जलवायु क्षेत्र हैं – एक प्रमुख पर्वतीय क्षेत्र और दूसरा छोटा मैदानी क्षेत्र। राज्य में कुल 8.81 लाख हेक्टेयर भूमि में से 8.08 लाख हेक्टेयर भूमि लघु और सीमांत किसानों की है, जो कुल भूमि का 91.70 प्रतिशत है। उत्तराखंड के पर्वतीय और मैदानी जिलों में कृषि भूमि की उपलब्धता में बड़ा अंतर है। जहां मैदानी जिलों में लगभग 50% भूमि खेती योग्य है, वहीं पर्वतीय जिलों में यह आंकड़ा केवल 8 प्रतिशत है। जनगणना 2011 के अनुसार, राज्य की कुल जनसंख्या 100.86 लाख है, जिसमें 51.38 लाख पुरुष और 49.48 लाख महिलाएं शामिल हैं। लिंग अनुपात 963 महिलाएं प्रति 1000 पुरूष है और साक्षरता दर 78.80 प्रतिशत है। कुल 38.72 लाख श्रमिकों में से 28.71 लाख मुख्य श्रमिक और 10.01 लाख सीमांत श्रमिक हैं। राज्य की 52 प्रतिशत से अधिक आबादी की आजीविका का मुख्य आधार कृषि है, जो एकल राज्य

घरेलू उत्पाद में 10.37 प्रतिशत योगदान देती है। वर्ष 2011—12 से 2019—20 के बीच कृषि एवं संबंधित क्षेत्रों में बजटीय आवंटन कुल बजट का 2.72 से 3.80 प्रतिशत के बीच रहा है। मुख्य फसलें गेहूं (24.80 प्रतिशत) और धान (30.47 प्रतिशत) (कुल बोया गया क्षेत्रफल दृ 10.24 लाख हेक्टेयर) हैं। अन्य फसलों में गन्ना, मक्का, दलहन और तिलहन शामिल हैं। प्रमुख फलः आम, लीची, अमरूद, खुबानी। प्रमुख सब्जियाँः आलू, टमाटर, मटर, फूलगोभी, शिमला मिर्च। औषधीय व सुगंधित पौधों की खेती भी सीमित क्षेत्रों में की जाती है। मैदानी जिलों (ऊधमसिंह नगर, हरिद्वार, नैनीताल, देहरादून) में अन्न उत्पादन की उत्पादकता अधिक है जबकि पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत कम (सिर्फ दलहनों को छोड़कर)।पर्वतीय क्षेत्रों में उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने की पर्याप्त संभावनाएं हैं, विशेषकर दलहन और तिलहन में। जैविक खेती, कृषि विविधीकरण, बेमौसमी सब्जी उत्पादन, शीतोष्णत फल, औषधीय एवं सुगंध पौधों के उत्पादन, कटाई उपरान्त तकनीकें, बाजार सुधार और यंत्रीकरण से यहां कृषि को लाभकारी रोजगार बनाया जा सकता है।

प्रमुख फसलें एवं उत्पाद

- **मुख्य फसलें:** गेहूं, धान, मंडुवा, मादिरा।
- **अन्य फसलें:** मक्का, गन्ना, भट्ट, गहत, राजमा, सोयाबीन, सरसों, तोरिया इत्यादि।
- **फलः** आम, लीची, खुबानी, आड़ू, अखरोट, कीवी, पूलम।
- **सब्जियाँः** आलू, टमाटर, मटर, शिमला मिर्च, फूलगोभी, बन्दगोभी।
- **कृषि आधारित पूरक उद्योगः** डेयरी, मधुमक्खी पालन, बकरी पालन, मशरूम उत्पादन, शीतोष्ण उत्पादन।

पर्वतीय क्षेत्रों में जैविक खेती, बागवानी, औषधीय पौधों की खेती और पर्यटन आधारित कृषि की अपार संभावनाएं हैं।

सहकारी कृषि का महत्व

सहकारी कृषि वह प्रणाली है जिसमें किसान मिलकर एक संगठन या समिति के रूप में खेती करते हैं। इसमें संसाधनों, श्रम, भूमि, निवेश, लाभ और जोखिम को साझा किया जाता है। सभी सदस्य निर्णय लेने में समान अधिकार रखते हैं और पारदर्शिता बनी रहती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी कृषि की प्रासंगिकता

यहां के छोटे एवं सीमान्त कृषकों को अक्सर संसाधनों की कमी, ऋण बोझ एवं बाजार में विपणन आदि की समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसका निराकरण वे अकेले नहीं कर सकते और यहीं पर सहकारिता की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। इन समस्याओं का निराकरण सहकारिता द्वारा आसानी से किया जा सकता है। जब कृषक संगठित होकर संसाधन आपस में साझा करते हैं और सामूहिक प्रयासों से काम करते हैं, तो ऐसी कृषि सहकारी कृषि कहलाती है। यह ग्रामीण विकास को सुदृढ़ बनाती है। इस कृषि में सामूहिक स्वामित्व और साझेदारी होती है, सभी को निर्णय लेने का समान अधिकारी होता है, कृषक स्वेच्छा से सदस्यता ले सकता है। इसमें प्रशिक्षण और शिक्षा की सुविधा भी होती है। पर्वतीय क्षेत्रों में खेत छोटे तथा टुकड़ों में बंटे होते हैं। सहकारी

कृषि के माध्यम से कृषकों की भूमि को समेकित कर एक बड़े खेत के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, जिससे बेहतर योजना और आधुनिक तकनीकों का उपयोग भी संभव हो जाता है। विशेष रूप से कृषि में मशीनीकरण का लाभ यहाँ के कृषक तभी ले सकते हैं जब वे खेतों को मिलाकर एक संस्था बना, मिलकर सभी की जमा पूंजी से बड़े कृषि यन्त्र खरीदकर उपयोग करें क्योंकि ये उपकरण महंगे होते हैं और पर्वतीय कृषकों द्वारा सीमित आमदनी में इनको ले पाना संभव नहीं हो पाता। साथ ही, यहाँ के कृषक सहकारी समिति बनाकर बीज, उर्वरक, सिंचाई के उपकरण, मशीनें आदि संसाधनों को साझा करके लागत को कम कर सकते हैं। सहकारी संस्थाएं किसानों को कृषि से संबंधित प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता और नई जानकारी उपलब्ध कराती हैं, जो सामान्यणतया पर्वतीय क्षेत्रों के किसानों के लिए व्यक्तिगत रूप से प्राप्त करना कठिन होता है। पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन, अतिवृष्टि आदि का खतरा अधिक होता है। सहकारी व्यवस्था के अंतर्गत जोखिमों को सामूहिक रूप से वहन किया जा सकता है और बीमा आदि योजनाओं का लाभ लेना आसान होता है। सहकारी कृषि पर्वतीय क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजित करती है, जिससे यहाँ के युवाओं के पलायन को कम कर इस क्षेत्र का समग्र विकास होता है। इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी कृषि न केवल कृषि उत्पादन को बढ़ावा देती है, बल्कि सामाजिक समरसता, आर्थिक आत्मनिर्भरता और पर्यावरणीय संतुलन को भी सुनिश्चित करती है।

ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका

i. ऋण और वित्तीय सेवाएं

- सहकारी बैंक किसानों को कम ब्याज पर ऋण, बीज, उर्वरक और सिंचाई उपकरण मुहैया कराते हैं।
- किसान क्रेडिट कार्ड जैसी योजनाओं से किसानों को त्वरित ऋण सुविधा मिलती है।

ii. विपणन और मूल्य समर्थन

- बिचौलियों से मुक्ति दिलाकर किसानों को उचित मूल्य दिलाना।
- गोदाम, कोल्ड स्टोरेज और प्रसंस्करण इकाइयां उपलब्ध कराना।

iii. कृषि–पूरक व्यवसाय

- डेयरी (जैसे आंचल मॉडल), मत्स्य पालन, बकरी पालन, सिलाई–कढ़ाई, हस्तशिल्प।
- महिला स्व–सहायता समूहों द्वारा लघु उद्योग संचालन।

iv. प्रशिक्षण और तकनीकी जागरूकता

- जैविक खेती, पॉलीहाउस, ड्रिप सिंचाई, जल संरक्षण, कृषि यंत्रीकरण पर प्रशिक्षण। कृषि विज्ञान केंद्रों और अनुसंधान संस्थानों द्वारा तकनीकी सहायता।

सफल सहकारी मॉडल व योजनाएं

- नाबार्ड ग्रामीण विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह ऋण वितरण की

शीर्ष संस्था है, जो ग्रामीण बैंकिंग, सहकारी समितियों व कृषि विकास योजनाओं को वित्त पोषित कर ग्रामीण क्षेत्रों में क्रेडिट संरचना को सुदृढ़ बनाती है।

- किसान क्रेडिट कार्ड के प्रयोग द्वारा सहकारी बैंकों के माध्यम से सरल ऋण व्यवस्था का लाभ ले सकते हैं।
- 'आंचल' नामक दुग्ध सहकारी संस्था जिससे लाखों कृषकों की आमदनी बढ़ी।
- उर्वरक वितरण में इफको सहकारिता की सफल मिसाल है।
- महिला स्वयं सहायता समूह द्वारा छोटे उद्योग, ऋण सेवाएं, सिलाई व बुनाई द्वारा उन्हें आत्मनिर्भर बनाना।

राज्य में सहकारी समितियों की स्थिति

राज्य में कई शीर्ष सहकारी संस्थाएं कार्यरत हैं, जैसे उत्तराखंड राज्य सहकारी बैंक लिमिटेड, उत्तराखंड सहकारी रेशम संघ लिमिटेड, देहरादून, उत्तराखंड राज्य आवास संघ लिमिटेड, देहरादून आदि। उत्तराखंड राज्य सहकारी संघ लिमिटेड (यूसीएफ), उत्तराखंड सहकारी डेयरी संघ लिमिटेड (यूसीडीएफ) जिसका ब्रांड नाम 'आँचल' है, उत्तराखंड सहकारी रेशम संघ लिमिटेड, उत्तराखंड सेब उत्पादक एवं विपणन सहकारी संघ लिमिटेड आदि जैसी कई सहकारी संस्थाएं हैं, जो राज्य में विपणन, आदानों की आपूर्ति, सलाहकार सेवाओं आदि के लिए काम कर रही हैं।

सहकारी कृषि में चुनौतियां

बुनियादी ढांचे की कमी – इसके अंतर्गत गोदामों और कोल्ड स्टोरेज की कमी प्रमुख है जिसके फलस्वरूप कृषकों को फसल की कटाई के बाद भंडारण की सुविधा नहीं मिलती और उन्हें अपनी उपज तुरंत बेचनी पड़ती है, जिससे कम मूल्य मिलता है। पर्वतीय क्षेत्रों में गांवों या दूरदराज के क्षेत्रों में सड़कों, बिजली और संचार साधनों की कमी होती है। परिणामस्वरूप कृषक अपने उत्पाद शहरों में भेज पाने में सफल नहीं हो पाते और उत्पाद ख़राब होने का खतरा रहता है। यहाँ आधुनिक कृषि उपकरण, गुणवत्ता परीक्षण प्रयोगशालाएं, प्रसंस्करण इकाइयां आदि की भी कमी है। इससे उत्पादकता और गुणवत्ता दोनों पर असर पड़ता है। कई सहकारी समितियों के पास अपने भवन, कार्यालय या डिजिटल प्रणाली नहीं होती। इससे पारदर्शिता और कुशल प्रबंधन में बाधा आती है। डिजिटल प्लेटफार्म, डेटा प्रबंधन, ई–बैंकिंग, ई–मार्केटिंग जैसी सुविधाएं नहीं होतीं। अतः सहकारिताएं प्रतिस्पर्धी बाजार में पिछड़ जाती हैं।

उत्पाद बेचने के लिए आसानी से बाज़ार न मिल पाना – सहकारी समितियां जब अपना उत्पाद उचित समय पर या सही जगह नहीं बेच पातीं, तो उन्हें बहुत कम दाम मिलते हैं। इससे किसानों और उत्पादकों को घाटा होता है। बाजार तक सीधी पहुंच न होने के कारण सहकारिताओं को बिचौलियों के माध्यम से माल बेचना पड़ता है। बिचौलिए उत्पाद का बड़ा हिस्सा कम कीमत में खरीदते हैं और अधिक दामों में बेचते हैं। सहकारी समितियों के पास अपने उत्पादों को ब्रांडेड तरीके से प्रस्तुत करने की सुविधा नहीं होती। बाज़ार में प्रतिस्पर्धा के बीच बिना ब्रांड के उत्पाद टिक नहीं पाते। सदस्य व प्रबंधक प्रायः विपणन की आधुनिक तकनीकों जैसे डिजिटल मार्केटिंग,

ई–कॉमर्स, उपभोक्ता व्यवहार आदि से परिचित नहीं होते। सहकारिताओं को सुपरमार्केट, निर्यात एजेंसियों और सरकारी खरीद योजनाओं से जोड़ने की व्यवस्था नहीं होती।

सहकारी समितिओं का निष्क्रिय होना– पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी समितियों की निष्क्रियता के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें वित्तीय बाधाएं, प्रशासनिक चुनौतियां, सामाजिक–सांस्कृतिक कारक और बुनियादी ढांचे की कमी शामिल हैं। सहकारी समितियों के लिए पर्याप्त पूंजी जुटाना मुश्किल हो सकता है, खासकर पर्वतीय क्षेत्रों में जहां सदस्य आर्थिक रूप से कमजोर होते हैं या पारंपरिक वित्तीय संस्थानों से ऋण प्राप्त करने में चुनौतियों का सामना करते हैं। कई सहकारी समितियां वित्तीय प्रबंधन में कुशल नहीं होती हैं, जिससे धोखाधड़ी और धन के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। सदस्यों की सीमित भागीदारी और वित्तीय योगदान भी पूंजी की कमी का कारण बन सकता है। सहकारी समितियों में अक्सर पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी होती है, जिससे सदस्यों का विश्वास कम हो जाता है और प्रबंधन में अक्षमता आ सकती है। सहकारी समितियों को प्रायः कुशल नेतृत्व की कमी का सामना करना पड़ता है, जिससे प्रभावी निर्णय लेने और संचालन में कठिनाई होती है। सरकारी हस्तक्षेप, जैसे कि रजिस्ट्रेशन और ऑडिटिंग में अनावश्यक देरी, सहकारी समितियों की स्वायत्तता को कम कर सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकतर महिलाएं सहकारी समितियां चलाती हैं। इसलिए लैंगिक मुद्दे भी इन समितियों के निष्क्रिय होने का कारण हो सकते हैं। सदस्यों के बीच हितों का टकराव, शासन और प्रबंधन के मुद्दों पर असहमति, सहकारी समिति के कामकाज को बाधित कर सकती है।

व्यावसायिक कौशल की कमी – प्रशिक्षित कर्मचारियों और प्रबंधकों की अनुपलब्धता के कारण सदस्य निर्णय लेने और योजना बनाने में पिछड़ जाते हैं और उनमें व्यापार की क्षमता विकसित नहीं हो पाती। बिना प्रबंधन कौशल के लोग गलत आर्थिक या संगठनात्मक निर्णय ले लेते हैं। बाजार की माँग को समझे बिना उत्पादन होता है, जिससे घाटा होता है। लेखा और वित्तीय रिकार्ड की सही जानकारी न होने से पारदर्शिता नहीं रहती। कृषकों में योजनाओं की जानकारी या उन्हें लागू करने की क्षमता नहीं होती। नेतृत्व कौशल के अभाव में सदस्य सक्रिय नहीं रहते, संस्था निष्क्रिय हो जाती है। पर्वतीय कृषि की आधार यहाँ की महिलाएं ही हैं लेकिन उनमें निर्णय लेने की प्रक्रिया धीमी होती है तथा उन्हें बाज़ार जाने में समस्या होती है। अतः यदि उन्हें डिजिटल प्लेटफार्म, डेटा प्रबंधन, ई–बैंकिंग, ई–मार्केटिंग जैसी सुविधाओं पर प्रशिक्षित किया जाए तो सहकारी संस्थाएं अवश्य ही सफल होंगी।

चुनौतियों से निपटने हेतु सुझाव

बुनियादी ढांचे की कमी का समाधान – सहकारी समितियों को केंद्र और राज्य सरकार की भंडारण निर्माण योजना, ग्रामीण भंडारण योजना आदि का लाभ उठाने के लिए प्रशिक्षित किया जाए। कृषक उत्पाद संगठन के माध्यम से सामूहिक भंडारण इकाइयां विकसित की जाएं। पर्वतीय क्षेत्रों में प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना जैसे कार्यक्रमों का विस्तार कर सहकारी उत्पादकों को मुख्य बाजारों से जोड़ा जा सकता है। सौर ऊर्जा या माइक्रो ग्रिड के माध्यम से बिजली की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है। सहकारी समितियों को सब्सिडी पर कृषि यंत्र, गुणवत्ता परीक्षण के लिए मोबाइल प्रयोगशालाएँ उपलब्ध करायी जा सकती हैं। प्रत्येक सहकारी समिति में कम से कम एक डिजिटल सुविधा केंद्र स्थापित करना उचित होगा। डिजिटल साक्षरता

अभियान चलाकर महिलाओं और सदस्यों को ई–बैंकिंग, डेटा प्रबंधन और ई–मार्केटिंग प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

उत्पाद बेचने के लिए बाज़ार की उपलब्धता सुनिश्चित करना– स्थानीय उत्पादों के लिए राज्य और केंद्र सरकार के विपणन मंच (जैसे GeM पोर्टल) से कृषकों को जोड़ना कारगर हो सकता है। सहकारी समितियों को प्रादेशिक ब्रांड नाम और सरकारी लोगो (जैसे GI टैग) प्रदान किए जा सकते हैं। स्थानीय हस्तशिल्प व उत्पादों को पर्यटन से जोड़ना भी लाभकारी हो सकता है। डिजिटल मार्केटिंग, ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म (जैसे अमेजॉन, सहेली, फ्लिपकार्ट, समर्थ) से सहकारी उत्पादकों को जोड़ा जाना चाहिए तथा उपभोक्ता व्यवहार और मूल्य निर्धारण रणनीति पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिएं।

सहकारी समितियों की निष्क्रियता को बंद करना – सहकारी समितियों को नाबार्ड, राष्ट्रीय सहकारिता विकास निगम के माध्यम से सस्ती दरों पर ऋण उपलब्ध कराया जाए। सदस्यता शुल्क कम किया जाए और लघु बचत योजनाओं के माध्यम से पूंजी जुटाई जाए। ऑनलाइन लेखा प्रणाली अपनाई जाए और ऑडिटिंग प्रक्रिया को डिजिटल किया जाए। सदस्यों की नियमित बैठकें और रिपोर्टिंग व्यवस्था सुनिश्चित की जाए। सदस्यों में नेतृत्व क्षमता का विकास करने हेतु प्रशिक्षणों का आयोजन किया जाए। महिला नेतृत्व को बढ़ावा देने के लिए विशेष महिला सशक्तिकरण योजनाएं लागू की जाएं। लैंगिक समावेश और सामाजिक भागीदारी हेतु महिला सदस्यों के लिए डिजिटल और निर्णय क्षमता प्रशिक्षण आयोजित किए जाएं। बाजार तक पहुंच के लिए महिला स्वयं सहायता समूहों और एन.जी.ओ. के साथ सहयोग के माध्यम से सहकारी समितियों को सक्रिय किया जा सकता है।

व्यावसायिक कौशल की कमी का समाधान– सहकारी समितियों के लिए कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केंद्रों और प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा नियमित व्यावसायिक और प्रबंधन प्रशिक्षण आयोजित होने चाहिएं। मॉडल अपनाकर गांव स्तर पर प्रशिक्षकों को तैयार किया जाना चाहिए। स्मार्टफोन और लैपटॉप पर विशेषकर महिलाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम करवाकर उनमें डिजिटल साक्षरता और तकनीकी क्षमता का विकास किया जाना चाहिए। वित्तीय साक्षरता, जैसे कि बैंकिंग, बीमा, ऋण प्रबंधन पर कार्यशालाएं आयोजित कर उनको निपुण बनाया जाए। नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देकर युवाओं को रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण दिया जाए तथा सहकारी समितियों को स्टार्टअप मॉडल की तरह विकसित किया जाए। एक महिला–केंद्रित एफ.पी.ओ नेटवर्क मिलेट सिस्टर्स है, जो मुख्यतः आंध्र प्रदेश और अन्य राज्यों में काम करती है, यह महिलाओं को मिलेट (श्री अन्न) की खेती, प्रोसेसिंग और विपणन में सशक्त बनाती है। इस परिवर्तनकारी पहल की अगुआई 19 किसान उत्पादक संगठनों का एक संघ कर रहा है। ये एफपीओ मुख्य रूप से श्री अन्ना (मिलेट) उत्पादन और प्रसंस्करण में लगे हुए हैं और मिलेट की खपत को बढ़ावा देने के लिए एकजुट हुए हैं। इसी प्रकार पर्वतीय क्षेत्र की महिला कृषक भी कार्य कर अपनी पारिवारिक आय को बढ़ा सकती हैं।

प्रेरणास्पद उदाहरणः भगरतोला गांव (उत्तराखंड)

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थीन, अल्मोनड़ा के सहकारी खेतों हेतु प्रयास।

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थासन, अल्मोड़ा द्वारा सहकारी कृषि को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उद्यानिकी तकनीकी मिशन परियोजना के अन्तर्गत फल एवं सब्जी आधारित टिकाऊ कृषि प्रणाली के प्रदर्शन एवं उत्पा्दन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से अल्मोड़ा जिले से लगभग 50 किमी. दूर स्थित ग्राम भगरतोला को अंगीकृत कर वहां के कृषि परिदृश्य को संस्थान की उन्नत तकनीकों के प्रयोग से कृषकों की सहभागिता से बदलने का प्रयास किया गया। अंगीकरण से पूर्व भगरतोला गांव में कृषकों व युवाओं को उन्नत कृषि विधियों एवं टिकाऊ कृषि की पूर्ण जानकारी न होने के कारण अधिकांश ग्रामीणों को जीवन यापन हेतु गांव से पलायन करना पड़ता था। संस्थान द्वारा भगरतोला में फसल विविधता पर जोर दिया गया जिसके परिणामस्वरूप सब्जी व फल उत्पादन में आशातीत वृद्धि होने से कृषकों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हुई। वहां के कृषकों के लिए संस्थान द्वारा टिकाऊ खेती पर विशेष ध्यान दिया गया तथा किसानों को पॉलीहाउस, जल संग्रहण तकनीक व मत्स्य पालन हेतु प्रोत्साहित किया गया और कम लागत पॉलीहाउस व पॉलीटैंकों का निर्माण कृषक सहभागिता से कराया गया। पॉलीटैंक में संग्रहित जल का उपयोग कृषकों द्वारा पॉलीहाउस में लगाई गयी बेमौसमी सब्जियों जैसे टमाटर, शिमला मिर्च, फूलगोभी, फ्रासबीन, मटर व चप्पान कद्दू आदि की सिंचाई हेतु किया गया। फलस्वरूप कृषकों की आय में वृद्धि हुई। इसके अलावा इस गांव में कीवी, आड़ू, नेक्ट रीन, पूलम, खुमानी, अखरोट व संतरा आदि का रोपण भी किया गया। साथ ही पशुपालन प्रबन्धन पर भी जानकारी दी गई। संस्थान द्वारा कृषकों को क्रेडिट कार्ड के महत्व के प्रति जागरूक किया गया जिसके परिणामस्वरूप नैनीताल अल्मोड़ा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के माध्यम से 35 कृषकों ने किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त किए। सहकारिता के मद्देनजर इस गांव में दो कृषक क्लबों (भगरतोला एवं ढिगरी गूंठ) का गठन किया गया जिसका उद्देश्य कृषकों को आत्मनिर्भर बनाना है।

संस्थान द्वारा दी गयी तकनीकी एवं सहायता के फलस्वरूप भगरतोला गांव के शत–प्रतिशत ग्रामीण काश्तकार वित्तीय एवं सामाजिक रूप से सुदृढ़ हो चुके है। फलस्वरूप पलायन कर गये परिवार व कृषक फिर से उन्नत कृषि प्रणाली अपनाने के लिए प्रोत्साहित हुए हैं। तकनीकी हस्तान्तरण की सूचना का लाभ लेने हेतु अन्य विभागों एवं परियोजनाओं के प्रतिनिधि, कृषक व पंचायत प्रतिनिधियों द्वारा यहां क्षेत्रीय भ्रमण कर रहे हैं तथा गणमान्य व्यक्तियों द्वारा भ्रमण के दौरान इस क्षेत्र में चलाये जा रहे कृषि कार्यों की सराहना की गयी है।

समाधान और रणनीतियां

- **शिक्षा और प्रशिक्षणः** किसानों को कृषि तकनीक, सहकारिता, विपणन और वित्तीय साक्षरता पर नियमित प्रशिक्षण देना।
- **महिला सशक्तिकरणः** महिला स्व–सहायता समूहों को सशक्त कर सहकारी ढांचे से जोड़ना।

- **डिजिटल सशक्तिकरणः** मोबाइल ऐप्स, पोर्टल और ई–मार्केट से जोड़ना।
- **सरकार की भूमिकाः** निगरानी, पारदर्शिता और नीति निर्माण में सहयोग।
- **प्रेरक मॉडल अपनानाः** आंचल, इफको, भूतपूर्व सफल सहकारी समितियों से सीखना।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते है कि सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास न केवल आर्थिक प्रगति का साधन है बल्कि यह सामाजिक समरसता, आत्म निर्भर और सामूहिक शक्ति का प्रतीक भी है। भारत जैसे विशाल और विविधता वाले देश में सहकारिता वो कड़ी है जो किसान को मजबूती, सम्माान और विकास की राह पर ले जा सकती है। यदि सहकारी व्यवस्था को पारदर्शिता शिक्षा और जागरूकता के साथ आगे बढ़ाया जाए तो 'ग्राम से भारत' की परिकल्पना को यथार्थ में बदला जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक मजबूत आधारशिला है। जब किसान मिलकर काम करते हैं, संसाधनों को साझा करते हैं और पारदर्शी तथा लोकतांत्रिक ढंग से फैसले लेते हैं, तब केवल उत्पादन ही नहीं, आत्मविश्वास और सम्मान भी बढ़ता है। उत्तराखंड जैसे राज्य जहां भौगोलिक कठिनाइयां हैं, वहां सहकारिता एक व्यावहारिक, सशक्त और आत्मनिर्भर रास्ता है। सरकार, संस्थान, सामाजिक संगठनों और स्वयं किसानों की सक्रिय भागीदारी से सहकारिता आंदोलन को नए शिखर पर ले जाया जा सकता है। यदि सहकारी प्रणाली को सशक्त रूप से अपनाया जाए, तो वह दिन दूर नहीं जब भारत के पर्वतीय गांव आत्मनिर्भरता, समृद्धि और सामाजिक समरसता के आदर्श बन जाएंगे।

आधुनिक भारत में सहकारिता की भूमिका

— रवि कुमार साव
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी, दूरसंचार विभाग, नई दिल्ली

भारत, अपने गौरवशाली अतीत और असीम संभावनाओं के साथ, एक नए युग की दहलीज पर खड़ा है— एक ऐसा 'नया भारत' जहाँ आर्थिक समृद्धि के साथ—साथ सामाजिक समरसता, पर्यावरणीय चेतना और प्रत्येक नागरिक का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित हो। यह केवल एक भौगोलिक इकाई का विकास नहीं, बल्कि एक अरब से अधिक सपनों, आकांक्षाओं और सामूहिक प्रयासों का साकार होना है। इस महत्वाकांक्षी यात्रा में, एक ऐसा सिद्धांत है जो सदियों से मानवीय सभ्यता का अभिन्न अंग रहा है और आज भी अपनी प्रासंगिकता सिद्ध कर रहा है— वह है सहकारिता। सहकारिता भारत में कोई नई अवधारणा नहीं है अपितु प्राचीन समय से चली आ रही है। सभा, ग्राम पंचायत आदि हमारी संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं।

सहकारिता का अर्थ है 'साथ मिलकर कार्य करना', और इसका मूल मंत्र है' एक सबके लिए और सब एक के लिए'। यह एक ऐसा आर्थिक और सामाजिक मॉडल है जो अनेक व्यक्तियों को स्वेच्छा से एकजुट होकर साझा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करने हेतु प्रेरित करता है, जहां लाभ की पहुंच न्यायसंगतता से दी जाती है और निर्णय लोकतांत्रिक ढंग से लिए जाते हैं।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में, जब पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाएं अक्सर असमानताएं पैदा करती हैं तब सहकारिता का मॉडल एक समावेशी और टिकाऊ विकल्प के रूप में उभरता है। आत्म भारत के निर्माण की परिकल्पना में, सहकारिता केवल एक आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि एक जीवनशैली, एक दर्शन और एक शक्तिशाली सामाजिक उपकरण है जो देश के सुदूर ग्रामीण अंचलों से लेकर शहरी केंद्रों तक, हर वर्ग और समुदाय को विकास की मुख्यधारा से जोड़ सकता है।

सहकारिताः अर्थ, सिद्धांत और मूल्य

सहकारिता एक ऐसा संगठन है जहां समान आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकता और आकांक्षा वाले व्यक्ति स्वेच्छा से एकजुट होते हैं और एक संयुक्त स्वामित्व वाले तथा लोकतांत्रिक रूप से नियंत्रित उद्यम का सृजन करते हैं। इसका प्राथमिक उद्देश्य सदस्यों के हितों की पूर्ति करना है, न कि अधिकतम लाभ कमाना।

सहकारिता के अंतरराष्ट्रीय सिद्धांतः

ये सिद्धांत सहकारिता आंदोलन के वैश्विक मूल्यों और दिशा—निर्देशों को परिभाषित करते हैंः

स्वैच्छिक और खुली सदस्यताः सहकारिताएं स्वैच्छिक संगठन हैं, जो लिंग, सामाजिक, नस्लीय, राजनीतिक या धार्मिक भेदभाव के बिना सभी व्यक्तियों के लिए खुली हैं, जो उनकी

सेवाओं का उपयोग करने और सदस्यता की जिम्मेदारियों को स्वीकार करने में सक्षम हैं।

लोकतांत्रिक सदस्य नियंत्रण: सहकारिताएं अपने सदस्यों द्वारा नियंत्रित लोकतांत्रिक संगठन हैं, जो नीतियों को निर्धारित करने और निर्णय लेने में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। निर्वाचित प्रतिनिधि सदस्यों के प्रति जवाबदेह होते हैं। प्राथमिक सहकारी समितियों में, सदस्यों को 'एक सदस्य, एक वोट' का अधिकार होता है।

सदस्य आर्थिक भागीदारी: सदस्य अपनी सहकारिता की पूंजी में न्यायसंगत रूप से योगदान करते हैं और लोकतांत्रिक तरीके से उस पर नियंत्रण रखते हैं। इस पूंजी का कम से कम एक हिस्सा आमतौर पर सहकारिता की साझा संपत्ति होती है।

स्वायत्तता और स्वतंत्रता: सहकारिताएं स्वशासी, आत्मनिर्भर संगठन हैं जो अपने सदस्यों द्वारा नियंत्रित होते हैं। यदि वे अन्य संगठनों (सरकारों सहित) के साथ करार करते हैं, या बाहरी पूंजी प्राप्त करते हैं, तो वे ऐसा अपनी लोकतांत्रिक सदस्य नियंत्रण बनाए रखते हुए और अपनी सहकारी स्वायत्तता को बनाए रखते हुए करते हैं।

शिक्षा, प्रशिक्षण और सूचना: सहकारिताएं अपने सदस्यों, निर्वाचित प्रतिनिधियों, प्रबंधकों और कर्मचारियों को शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान करती हैं ताकि वे सहकारिता के विकास में प्रभावी ढंग से योगदान कर सकें। वे आम जनता, विशेषकर युवाओं और विचारकों को सहकारिता की प्रकृति और लाभ के बारे में भी सूचित करती हैं।

सहकारिताओं के बीच सहयोग: सहकारिताएं अपने सदस्यों को सबसे प्रभावी ढंग से सेवा देने और सहकारी आंदोलन को मजबूत करने के लिए स्थानीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतरराष्ट्रीय संरचनाओं के माध्यम से मिलकर कार्य करती हैं।

समुदाय के प्रति चिंता: सहकारिताएं अपने सदस्यों द्वारा अनुमोदित नीतियों के माध्यम से अपने समुदायों के सतत विकास के लिए कार्य करती हैं।

ये सिद्धांत सहकारिता को केवल एक व्यावसायिक इकाई से कहीं अधिक बनाते हैं; वे इसे सामाजिक न्याय, समानता और सामुदायिक विकास का एक शक्तिशाली साधन बनाते हैं।

भारत में सहकारिता का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य और विकास

भारत में सहकारिता की अवधारणा कोई नई नहीं है। प्राचीन काल से ही 'पंचायती राज' और 'ग्राम सभा' जैसी संस्थाएं सामुदायिक सहयोग और साझा संसाधनों के प्रबंधन पर आधारित रही हैं। तथापि आधुनिक सहकारी आंदोलन की नींव ब्रिटिश शासन के दौरान रखी गई थी, जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण ऋणग्रस्तता और किसानों के शोषण को कम करना था।

प्रारंभिक चरण (1904–1947): वर्ष 1904 का सहकारी ऋण समितियां अधिनियम भारत में औपचारिक सहकारी आंदोलन की शुरुआत थी। इसका उद्देश्य किसानों को साहूकारों के चंगुल से मुक्त कराना था। बाद में, वर्ष 1912 के अधिनियम ने गैर–ऋण सहकारी समितियों के गठन की अनुमति दी, जिससे विपणन, उपभोक्ता और अन्य प्रकार की सहकारी समितियों का गठन हुआ।

स्वतंत्रता के बाद का युग (1947—1990 के दशक): स्वतंत्रता के बाद, भारतीय योजनाकारों ने सहकारिता को ग्रामीण विकास और सामाजिक—आर्थिक परिवर्तन के एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में देखा। पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारिता को विशेष महत्व दिया गया।

कृषि क्षेत्र: प्राथमिक कृषि ऋण समितियां (पैक्स) ग्रामीण ऋण वितरण की रीढ़ बन गईं। सहकारी विपणन समितियां, चीनी मिलें और कताई मिलें किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य दिलाने और प्रसंस्करण में भाग लेने में सहायक सिद्ध हुईं।

डेयरी क्षेत्र: डॉ. वर्गीस कुरियन के नेतृत्व में 'ऑपरेशन फ्लड' ने भारत को दुनिया का सबसे बड़ा दूध उत्पादक बनाया। अमूल (आणंद मिल्क यूनियन लिमिटेड) इसका सबसे शानदार उदाहरण है, जिसने लाखों छोटे और सीमांत डेयरी किसानों को सशक्त किया।

उपभोक्ता और आवास: शहरी क्षेत्रों में उपभोक्ता सहकारी समितियां उचित मूल्य पर वस्तुओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने लगीं, जबकि आवास सहकारी समितियां किफायती आवास प्रदान करने में सहायक बनीं।

उदारीकरण के बाद का चरण (1990 के दशक से वर्तमान तक): आर्थिक उदारीकरण के बाद, सहकारी समितियों को बाजार की प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। तथापि कई सहकारी समितियां, जैसे अमूल, इफ्को, कृभको, नेफेड और विभिन्न सहकारी बैंकों ने अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी और नए क्षेत्रों में भी विस्तार किया। हाल ही में, भारत सरकार द्वारा अलग से सहकारिता मंत्रालय का गठन किया गया है जो सहकारिता आंदोलन को एक नई दिशा और गति देने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसका उद्देश्य 'सहकार से समृद्धि' के विजन को साकार करना है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2025 को अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष घोषित किया गया है। केंद्रीय सहकारिता मंत्रालय ने भी राष्ट्रीय सहकारिता नीति, 2025 का अनावरण किया है जिसका उद्देश्य सहकारिता क्षेत्र को जन—आधारित आर्थिक शक्ति के रूप में परिवर्तित करना है।

नये भारत के निर्माण में सहकारिता की बहुआयामी भूमिका

नये भारत की कल्पना एक ऐसे राष्ट्र की है जो आर्थिक रूप से सुदृढ़, सामाजिक रूप से न्यायसंगत, पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ और लोकतांत्रिक रूप से सशक्त हो। सहकारिता इन सभी स्तंभों को मजबूत करने की क्षमता रखती है।

1. ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कायाकल्प और कृषि सशक्तिकरण

भारत की आत्मा गाँवों में बसती है और इसकी अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है। सहकारिता ग्रामीण भारत में परिवर्तन लाने का सबसे प्रभावी माध्यम है। पैक्स किसानों को समय पर और सस्ती दरों पर संस्थागत ऋण उपलब्ध कराकर उन्हें साहूकारों के शोषण से बचाती हैं। ये समितियां ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देती हैं, जिससे छोटे और सीमांत किसानों को भी बैंकिंग सेवाओं तक पहुंच मिलती है।

सहकारी समितियां किसानों को उन्नत बीज, उर्वरक, कीटनाशक और कृषि उपकरण सामूहिक रूप से खरीदने में मदद करती हैं, जिससे लागत कम होती है और उत्पादकता बढ़ती है। वे कृषि

संबंधी सेवाओं और नई तकनीकों के बारे में जानकारी भी प्रदान करती हैं। किसान विपणन सहकारी समितियां किसानों को अपनी उपज सीधे बाजार में बेचने में मदद करती हैं, जिससे बिचौलियों से बचाव होता है और उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य मिलता है। सहकारी प्रसंस्करण इकाइयां (जैसे चीनी मिलें, चावल मिलें, दाल मिलें, तेल मिलें) कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन करती हैं, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है। सहकारी मॉडल किसानों को सामूहिक क्रय–विक्रय की शक्ति प्रदान करता है। वे एक साथ अपनी उपज बेचकर या खरीदकर बेहतर सौदे प्राप्त कर सकते हैं। यह सरकार के किसानों की आय दोगुनी करने के लक्ष्य को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। डेयरी, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, रेशम उत्पादन जैसी संबद्ध गतिविधियों में सहकारी समितियां ग्रामीण आय के स्रोतों का विविधीकरण करती हैं, जिससे कृषि पर निर्भरता कम होती है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्थिरता आती है।

2. महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता

नये भारत के निर्माण में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी और उनका सशक्तिकरण अपरिहार्य है। महिला स्वयं सहायता समूह, जो सहकारी सिद्धांतों पर आधारित होते हैं, महिलाओं को छोटी बचत करने, आंतरिक ऋण प्राप्त करने और छोटे उद्यम शुरू करने में सक्षम बनाते हैं। ये समूह महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाते हैं और उन्हें सामाजिक रूप से सशक्त करते हैं। महिला सहकारी समितियां, जैसे हथकरघा, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, डेयरी और सिलाई इकाइयां, महिलाओं को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में रोजगार और आय के अवसर प्रदान करती हैं। सहकारी ढांचे में महिलाओं को नेतृत्व की भूमिकाएं निभाने का अवसर मिलता है, जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और वे अपने परिवारों और समुदायों में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में अधिक प्रभावी ढंग से भाग ले पाती हैं। सहकारी बैंक और क्रेडिट सोसाइटियां ग्रामीण और अर्द्ध–शहरी क्षेत्रों में महिलाओं को वित्तीय सेवाओं तक पहुंच प्रदान करती हैं, जिससे वे अपनी बचत का प्रबंधन कर सकती हैं और उद्यमों के लिए ऋण प्राप्त कर सकती हैं।

3. शहरी विकास और सामुदायिक जीवन का सुदृढ़ीकरण

सहकारिता केवल ग्रामीण क्षेत्रों तक सीमित नहीं है; शहरी क्षेत्रों में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। शहरी क्षेत्रों में आवास सहकारी समितियां मध्यम और निम्न–आय वर्ग के लिए किफायती आवास उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे भूमि अधिग्रहण, निर्माण और रखरखाव में सदस्यों को सामूहिक रूप से लाभ पहुंचाती हैं, जिससे लागत कम होती है। उपभोक्ता सहकारी समितियां शहरी उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर गुणवत्तापूर्ण दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएं उपलब्ध कराकर मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने में मदद करती हैं और उन्हें बिचौलियों के शोषण से बचाती हैं। कुछ शहरों में, परिवहन सहकारी समितियां कुशल और सस्ती सार्वजनिक परिवहन सेवाएं उपलब्ध कराती हैं। कचरा प्रबंधन, जल आपूर्ति और अन्य नागरिक सेवाओं में भी सहकारी मॉडल को अपनाया जा सकता है, जिससे स्थानीय समुदायों की भागीदारी बढ़ेगी। शहरीकरण के कारण अक्सर व्यक्तिगत अलगाव बढ़ता है। आवास और उपभोक्ता सहकारी समितियां सामुदायिक भावना को बढ़ावा देती हैं, जिससे पड़ोसी एक–दूसरे के साथ जुड़ते हैं और साझा समस्याओं का समाधान करते हैं।

4. समावेशी विकास और सामाजिक न्याय

सहकारिता का मूल सिद्धांत ही समावेशिता और समानता पर आधारित है। सहकारी समितियां अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यकों को आर्थिक अवसर प्रदान कर सकती हैं, जिससे वे सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त हो सकें और मुख्यधारा में शामिल हो सकें। सहकारी समितियां आय सृजन, कौशल विकास और सामूहिक उद्यमों के माध्यम से गरीबी रेखा से नीचे के लोगों को ऊपर उठाने में मदद करती हैं, जिससे सतत आजीविका के अवसर पैदा होते हैं। सहकारिताएं लोगों को अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं खोजने और अपने संसाधनों का सामूहिक रूप से प्रबंधन करने के लिए प्रेरित करती हैं। यह स्वामित्व की भावना पैदा करता है और सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देता है। सहकारिता मॉडल लाभ के न्यायसंगत वितरण और लोकतांत्रिक नियंत्रण पर जोर देता है, जिससे धन और शक्ति का केंद्रीकरण कम होता है और समाज में असमानताएं घटती हैं।

5. कौशल विकास, उद्यमिता और नवाचार को बढ़ावा देना

नये भारत के निर्माण हेतु एक कुशल कार्यबल और सशक्त उद्यमी व्यवस्था की आवश्यकता है सहकारी समितियां अपने सदस्यों और कर्मचारियों को विभिन्न कौशलों जैसे कि वित्तीय प्रबंधन, विपणन, उत्पादन तकनीकें, डिजिटल साक्षरता और गुणवत्ता नियंत्रण में प्रशिक्षित कर सकती हैं। यह कौशल अंतर को कम करता है। सहकारी मॉडल व्यक्तियों को सामूहिक रूप से उद्यम शुरू करने और जोखिम साझा करने की सुविधा प्रदान करता है, जिससे नए उद्यमियों के लिए प्रवेश बाधाएं कम होती हैं। यह विशेष रूप से ग्रामीण और छोटे शहरों में उद्यमिता को बढ़ावा देता है। सहकारी समितियां सामूहिक रूप से स्मार्ट एग्रिकल्चर तकनीकें, ई—कॉमर्स प्लेटफॉर्म और डिजिटल मार्केटिंग जैसी नई तकनीकों और नवाचारों को अपना सकती है। यह छोटे उत्पादकों को बड़े बाजारों तक पहुंचने में मदद करता है। युवा पीढ़ी को सहकारिता आंदोलन से जोड़कर उन्हें रोजगार और स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराया जा सकता है जिससे ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में पलायन को रोका जा सकता है और युवा ऊर्जा का सकारात्मक उपयोग हो सकता है।

6. पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास

नये भारत का निर्माण पर्यावरणीय स्थिरता के बिना अधूरा है। किसान सहकारी समितियां सामूहिक रूप से जैविक खेती को अपना सकती हैं, जिससे रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग कम होगा, मिट्टी की गुणवत्ता सुधरेगी और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव कम होगा। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में सामुदायिक स्तर पर सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा या बायोगैस जैसी नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं को स्थापित करने के लिए सहकारी मॉडल का उपयोग किया जा सकता है जिससे ऊर्जा सुरक्षा बढ़ेगी और कार्बन उत्सर्जन कम होगा। जल उपयोगकर्ता सहकारी समितियां सिंचाई और पेय जल के कुशल उपयोग और प्रबंधन को बढ़ावा दे सकती हैं, जिससे जल संसाधनों का संरक्षण होगा। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी समितियां कचरा संग्रह, प्रसंस्करण और पुनर्चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है जिससे स्वच्छता बढ़ेगी और संसाधनों का बेहतर उपयोग होगा। वन उपज संग्रह और प्रबंधन में स्थानीय समुदायों को शामिल

करने से वनों का सतत उपयोग सुनिश्चित होगा, अवैध कटाई पर अंकुश लगेगा और जैव विविधता का संरक्षण होगा।

चुनौतियां और नये भारत के निर्माण हेतु आगे की राह

सहकारिता की अपार संभावनाओं के बावजूद, भारतीय सहकारिता आंदोलन को कई आंतरिक और बाहरी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जिसका निराकरण नये भारत के निर्माण हेतु आवश्यक है:

पेशेवर प्रबंधन का अभाव: अधिकांश सहकारी समितियों में आधुनिक प्रबंधन कौशल और पेशेवर विशेषज्ञता की कमी होती है। निर्णय अक्सर गैर–पेशेवर व्यक्तियों द्वारा लिए जाते हैं, जिससे उनकी दक्षता और प्रतिस्पर्धात्मकता प्रभावित होती है।

वित्तीय कमजोरी और आत्मनिर्भरता का अभाव: कई सहकारी समितियां वित्तीय रूप से कमजोर हैं और अभी भी सरकारी सहायता पर अत्यधिक निर्भर हैं। उन्हें अपने स्वयं के संसाधनों को जुटाने और बाजार से पूंजी प्राप्त करने में कठिनाई होती है।

जागरूकता और शिक्षा का अभाव: सदस्यों को अक्सर सहकारी सिद्धांतों, उनके अधिकारों और जिम्मेदारियों के बारे में पूर्ण जानकारी नहीं होती है। इससे वे अपनी सहकारिता पर प्रभावी नियंत्रण नहीं रख पाते हैं और निष्क्रिय हो जाते हैं।

नियमन और कानून की जटिलता: सहकारी कानूनों में अक्सर जटिलताएँ होती हैं और वे हमेशा बदलते रहते हैं, जिससे सहकारिता के प्रचालन में बाधा आती है। विभिन्न राज्यों में अलग–अलग कानून भी एक चुनौती पेश करते हैं।

आधुनिक तकनीक का अभाव: कई सहकारी समितियां अभी भी पुरानी प्रणालियों और तकनीकों का उपयोग करती हैं, जिससे उनकी उत्पादकता कम होती है और वे बाजार की प्रतिस्पर्धा में पिछड़ जाती हैं। इससे डिजिटल परिवर्तन की गति धीमी है।

बाज़ार तक पहुंच और प्रतिस्पर्धा: वैश्वीकरण और उदारीकरण के युग में, सहकारी समितियों को बड़े निजी विनिर्माताओं से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। उन्हें बेहतर बाज़ार तक पहुंच बनाने हेतु सशक्त करने की आवश्यकता है।

नेतृत्व का संकट: कई सहकारी समितियों में दूरदर्शी और ईमानदार नेतृत्व का अभाव है, जो उन्हें आगे ले जा सके और सदस्यों के हितों की रक्षा कर सके।

इन चुनौतियों का सामना करने और सहकारिता को नवभारत के निर्माण में एक मजबूत शक्ति बनाने के लिए एक व्यापक और समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता है:

सहकारी कानूनों में सुधार और सरलीकरण: राजनीतिक हस्तक्षेप को कम करने, पारदर्शिता बढ़ाने और पेशेवर प्रबंधन को बढ़ावा देने के लिए कानूनों को सरल, सुसंगत और मजबूत बनाने और एक समान राष्ट्रीय सहकारी नीति पर विचार किया जा सकता है।

क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण पर जोर: सहकारी नेताओं, प्रबंधकों और सदस्यों के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम खासकर वित्तीय प्रबंधन, विपणन, डिजिटल साक्षरता, उत्पादन तकनीकें और शासन जैसे विषयों पर आयोजित करना।

तकनीकी उन्नयन और डिजिटलीकरण: सहकारी समितियों को आधुनिक तकनीक, जैसे डिजिटल भुगतान प्रणाली, ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म, डेटा एनालिटिक्स और ब्लॉकचेन को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना। एक राष्ट्रीय सहकारी डेटाबेस और डिजिटल प्लेटफॉर्म का निर्माण सहायक होगा।

वित्तीय सुदृढ़ीकरण और नवाचार: सहकारी समितियों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए वित्तीय सहायता के बजाय व्यावसायिक कौशल, नवीन वित्तपोषण मॉडल (जैसे इक्विटी भागीदारी) और बाजार से पूंजी जुटाने की क्षमता को बढ़ावा देना।

युवाओं और महिलाओं की सक्रिय भागीदारी: युवाओं और महिलाओं को सहकारी आंदोलन से जोड़ने के लिए विशेष पहल करना, उन्हें नेतृत्व की भूमिकाएँ प्रदान करना और उनके लिए नए अवसर पैदा करना।

सहकारिताओं के बीच सहयोग और नेटवर्किंग: विभिन्न स्तरों पर सहकारिताओं के बीच नेटवर्किंग और सहयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि वे एक दूसरे के अनुभवों से सीख सकें, संसाधनों को साझा कर सकें और संयुक्त रूप से बड़े पैमाने पर परियोजनाओं को अपने हाथ में ले सकें।

जागरूकता अभियान और शिक्षा: सहकारिता के सिद्धांतों, लाभों और सफलताओं के बारे में जन जागरूकता बढ़ाना ताकि अधिक से अधिक लोग इसमें शामिल हों और इसे एक व्यवहार्य मॉडल के रूप में देखें। साथ ही स्कूली पाठ्यक्रम में भी सहकारिता को शामिल किया जाना चाहिए।

सरकारी समर्थन पर लचीलापन: सरकार द्वारा सहकारिता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए साथ ही यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उन पर अत्यधिक नियंत्रण न लगाया जाए। सहायता इस तरह से होनी चाहिए जिससे उनकी स्वायत्तता और आत्मनिर्भरता बनी रहे, और वे बाजार के प्रभाव के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकें।

सफल सहकारिता मॉडल की तर्ज पर नवीन मॉडल का सृजन: अमूल जैसे सफल सहकारी मॉडल का अध्ययन करना और उनके सिद्धांतों को अन्य क्षेत्रों और राज्यों में संस्थापित करने का प्रयास करना जिससे उनके तर्ज पर नवीन मॉडल का वृहद पैमाने पर सृजन किया जा सके।

निष्कर्ष

नये भारत का निर्माण केवल आर्थिक विकास के आंकड़ों तक सीमित नहीं है; यह एक ऐसे समाज के निर्माण का स्वप्न है जहां प्रत्येक व्यक्ति को गरिमा, अवसर और सशक्तिकरण प्राप्त हो। इसके परिणामस्वरूप एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण होगा जहां विकास समावेशी होगा, समृद्धि साझा होगी

और निर्णय लोकतांत्रिक होगा। इस भव्य परिकल्पना को साकार करने में सहकारिता एक अद्वितीय और अपरिहार्य भूमिका निभा सकती है।

सहकारिता का सिद्धांत, जो सामूहिक प्रयास, समानता और न्याय पर आधारित है, भारत के सामाजिक–आर्थिक ताने–बाने के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने, किसानों की आय बढ़ाने, महिलाओं को सशक्त बनाने, वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने, शहरी जीवन को बेहतर बनाने और पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करने का एक शक्तिशाली माध्यम है। यह लोगों को अपनी नियति का स्वयं निर्माता बनने में सक्षम बनाता है, उन्हें एकजुट होकर अपनी समस्याओं का समाधान खोजने और साझा समृद्धि प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है।

हाल ही में गठित सहकारिता मंत्रालय के साथ, भारत में सहकारी आंदोलन एक नए युग में प्रवेश कर रहा है। यदि इसे राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त रखा जाए, पेशेवर प्रबंधन से लैस किया जाए, आधुनिक तकनीकों को अपनाया जाए और सदस्यों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए, तो यह निश्चित रूप से नवभारत के सपनों को साकार करने में एक क्रांतिकारी शक्ति के रूप में उभरेगा। 'सहकार से समृद्धि' का मंत्र केवल एक नारा नहीं, बल्कि एक शक्तिशाली सूत्र है जो वास्तव में एक समृद्ध, समावेशी, समतावादी और आत्मनिर्भर नवभारत का निर्माण कर सकता है। यह एक ऐसा मार्ग है जहां हर कदम पर सहयोग है, हर प्रयास में सामूहिक शक्ति है, और हर उपलब्धि में सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास निहित है।

हिंदी संग भारतीय भाषाओं का समभाव
सबके सुरों में गूँजे एक ही भाव

हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में परस्पर समन्वय और सहअस्तित्व

— डॉ. दीक्षा मेहरा
सह–प्राध्यापिका (अतिथि व्याख्याता)
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

भारत एक बहुभाषिक देश है जहां सैकड़ों भाषाएं और बोलियाँ विविधता के साथ अस्तित्व में हैं। इस भाषाई विविधता में हिंदी का एक विशिष्ट और केंद्रीय स्थान है। भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं में हिंदी सर्वाधिक बोलने वालों की भाषा है, जो जनसंख्या के एक बड़े हिस्से द्वारा मातृभाषा या संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। हिंदी न केवल उत्तर भारत में बल्कि संपूर्ण देश में प्रशासन, शिक्षा, साहित्य और मीडिया के क्षेत्रों में एक प्रमुख भाषा के रूप में स्थापित है। भारत की अन्य प्रमुख भाषाएं जैसे– बंगला, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, गुजराती, उर्दू, मलयालम, पंजाबी आदि भी अपने–अपने क्षेत्रों में समृद्ध साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपराएं लिए हुए हैं। इन भाषाओं और हिंदी के बीच एक गहरा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंध है, जो एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए सहअस्तित्व में विकसित हुआ है। सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या के मतानुसार– ''भारत के अनार्य–भाषियों में द्रविड़ों का स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण है। उस विचार के पहले मंगोलकर (Mongoloid), 'किरात' या 'भोटचीनी' भाषाएं बोलने वालों के बारे में कुछ कहना चाहिए। वैदिक साहित्य में किरातों का उल्लेख आता है– संभवतः ये लोग भारत में आर्यों से भी प्राचीनतर हैं। भारत की उत्तर–पूर्व दिशा किरात जाति का आदि–स्थान था–पूर्व–चीन प्रांत। चीनी, भोट, स्यामी, बर्मी– ये सब किरातों की जातियां हैं। प्रागैतिहासिक युग में ये लोग ब्रह्मपुत्र–उपत्यका तथा तिब्बत की राह से भारत में आये। समग्र आसाम, पूर्व और उत्तर बंगाल, उत्तर बिहार, भोटान, नेपाल, कुमायूं–गढ़वाल – इन सब स्थानों में ये लोग फैल गए। सिन्ध प्रदेश, राजस्थान, मध्यभारत तक इनका प्रसार हुआ। परन्तु ज्यादातर ये उत्तर भारत में ही (आसाम, बंगाल, बिहार, नेपाल इत्यादि स्थानों में) सीमित थे, इसलिए इनका प्रभाव समग्र भारत के ऊपर नहीं पड़ सका।''[1]

उपरोक्त सहअस्तित्व और विविधता के बावजूद उनमें आपसी संवाद, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और अनुवाद के माध्यम से एकता का बोध गहराता गया है। यही परस्पर समभाव का ऐतिहासिक आधार भी है। ''तेलुगु साहित्य का उद्भव ईसा पूर्व ही हुआ था। दसवीं से तेरहवीं शती के बीच का युग तेलुगु साहित्य में भाषांतरीकरण का युग माना जाता है, उस समय संस्कृत से महाभारत का तेलुगु में कवित्रय (नन्नय्या, तिक्कना तथा एर्राप्रगडा) द्वारा अनुवाद कार्य सुसंपन्न हुआ। महाभारत कथा के आधार पर कई छोटी–छोटी कहानियाँ प्रचलित हुई।''[2] इस प्रकार 'परस्पर समभाव' जिसके अंतर्गत विभिन्न भाषाओं के बीच संवाद, सहयोग और सह–अस्तित्व की संभावनाएं बनी। आज हम इसमें भाषिक संरचना, साहित्यिक प्रभाव, अनुवाद, शिक्षा और तकनीकी माध्यमों के द्वारा भाषाओं के बीच गहरे संबंधों को देखते हैं। परस्पर समभाव केवल

भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारतीय भाषाओं की पारस्परिक उपयोगिता, संवर्धन और सामूहिक विकास की दिशा में संभावनाओं की तलाश भी है। भारत विश्व के उन गिने–चुने देशों में से एक है जहां भाषाई विविधता अत्यंत समृद्ध और बहुपरतीय है। यहाँ सैकड़ों भाषाएं और हजारों बोलियाँ बोली जाती हैं, जिनका वर्गीकरण भाषावैज्ञानियों ने प्रमुखतः चार भाषिक परिवारों में किया है–

1. इंडो–आर्यन भाषाएं

यह भाषाएं भारत की जनसंख्या के लगभग 75% लोगों द्वारा बोली जाती हैं और मुख्य रूप से उत्तर, पश्चिम और पूर्वी भारत में प्रचलित हैं। इस समूह में प्रमुख भाषाएं हैं– हिंदी, बंगला, मराठी, उर्दू, गुजराती, पंजाबी, ओड़िया और असमिया। इन भाषाओं की जड़ें संस्कृत से जुड़ी हैं और इनमें आपसी शब्द विनिमय और व्याकरणिक समानताएँ पाई जाती हैं।

2. द्रविड़ भाषाएं

भारत के दक्षिणी राज्यों में प्रचलित ये भाषाएं ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत प्राचीन हैं और इनकी एक समृद्ध साहित्यिक परंपरा है। इसके अंतर्गत प्रमुख द्रविड़ भाषाएं हैं– तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम इन भाषाओं की लिपियां अलग हैं, परंतु हिंदी और संस्कृत से इनके संबंधों को अनदेखा नहीं किया जा सकता, विशेष रूप से शब्दों और साहित्यिक आदान–प्रदान में।

3. ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषाएं

यह भाषाएं मुख्य रूप से झारखंड, ओडिशा, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में बोली जाती हैं। इनका प्रयोग आदिवासी समुदायों द्वारा होता है। इसके अंतर्गत प्रमुख भाषाएं हैं– संथाली, हो, मुंडारी और खड़िया।

4. तिब्बतो–बर्मी भाषाएं

इस समूह की भाषाएं मुख्यतः भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों जैसे अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, नागालैंड, मिजोरम आदि में बोली जाती हैं। इन भाषाओं का संबंध चीन और तिब्बत की भाषाओं से है। इसमें प्रमुख भाषाएं– मिजो, बोडो मणिपुरी (मीतेई)

वस्तुतः भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्तमान में 22 भाषाएं शामिल हैं, जिन्हें संवैधानिक मान्यता प्राप्त है। हिंदी, जो कि राजभाषा है, यह आठवीं अनुसूची में शामिल समस्त भाषाओं के बीच संपर्क भाषा के रूप में कार्य करती है। भारत की भाषाएं सदियों से एक–दूसरे के संपर्क में रही हैं। सामाजिक, व्यापारिक, धार्मिक और साहित्यिक कारणों से भाषाओं के बीच सतत संवाद होता रहा है। इस संवाद ने शब्दों, शैलियों, भावों और साहित्यिक प्रवृत्तियों के आदान–प्रदान को जन्म दिया है। हिंदी और अन्य भाषाओं के बीच यह संपर्क आज भी जीवंत और सृजनात्मक बना हुआ है। "भारतीय साहित्य यद्यपि कई भाषाओं में लिखा जाता है, मगर उसकी आत्मा एक है। भारत एक बहुभाषी देश है और भारत की विभिन्न भाषाएं देश की भाषिक समृद्धि की प्रतीक है। भारत में 22 स्वीकृत भाषाएं हैं और प्रत्येक में स्वीकृत और जीवंत साहित्य है। लेकिन इसके बावजूद प्रत्येक साहित्य में व्यक्त विचार, भाव और संवेदनाएं समान है। इन भाषाओं में रचे गए

साहित्य में संवाद स्थापित कर भारत की संस्कृति को पारदर्शी बनाना जरूरी है।'' भारतीय भाषाओं के बीच भाषिक समानता ही एक ऐसा तत्व है जो भारत की भाषाई विविधता के भीतर सांस्कृतिक एकता को संभव बनाता है। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच व्याकरणिक संरचना, शब्दावली, अभिव्यक्ति की शैली तथा ध्वनि तंत्र में कई बिंदुओं पर मेल पाया जाता है। यह भाषिक साम्यता न केवल भाषाओं के विकास की ऐतिहासिक प्रक्रिया को दर्शाती है, बल्कि परस्पर संवाद की संभावनाओं को भी प्रबल बनाती है। रामधारी सिंह दिनकर ने इस ऐतिहासिक प्रक्रिया को स्पष्ट किया है– ''तमिल–परम्परा के अनुसार संस्कृत और द्राविड़ भाषाएं एक ही उद्‌गम से निकली हैं। इधर भाषा–तत्त्वज्ञों ने यह भी प्रमाणित किया है कि आर्यों की मूल भाषा यूरोप और एशिया के प्रत्येक भूखंड की स्थानीय विशिष्टताओं के प्रभाव में आकर परिवर्तित हो गई, उसकी ध्वनियाँ बदल गईं, उच्चारण बदल गए और उसके भांडार में आर्येतर शब्दों का समावेश हो गया। भारत में संस्कृत का उच्चारण तमिल प्रभाव से बदला है, यह बात अब कितने ही विद्वान मानने लगे हैं। तमिल में र को ल और ल को र कर देने का रिवाज है। यह रीति संस्कृत में भी 'रलयोरभेदः' के नियम से चलती है। काडवेल (Caldwell) का कहना है कि संस्कृत ने यह पद्धति तमिल से ग्रहण की है। बहुत प्राचीन काल में भी तमिल और संस्कृत के बीच शब्दों का आदान–प्रदान काफी अधिक मात्रा में हुआ था, इसके प्रमाण यथेष्ट संख्या में उपलब्ध हैं। किटेल ने अपनी कन्नड़–इंगलिश–डिक्शनरी में ऐसे कितने शब्द गिनाए हैं, जो तमिल–भांडार से निकलकर संस्कृत में पहुंचे थे। बदले में संस्कृत ने भी तमिल को प्रभावित किया। संस्कृत के कितने ही शब्द तो तमिल में तत्सम रूप में ही मौजूद हैं, किन्तु, कितने ही शब्द ऐसे भी हैं, जिनके तत्सम रूप तक पहुंच सकना बीहड़ भाषा–तत्त्वज्ञों का ही काम है। डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी ने बताया है कि तमिल का 'आइरम' शब्द संस्कृत के 'सहस्रम्' का रूपान्तरण है। इसी प्रकार, संस्कृत के स्नेह शब्द को तमिल भाषा ने केवल 'ने' (घी) बनाकर तथा संस्कृत के कृष्ण को 'किरुत्तिनन' बनाकर अपना लिया है। तमिल भाषा में उच्चारण के अपने नियम हैं। इन नियमों के कारण बाहर से आए हुए शब्दों को शुद्ध तमिल प्रकृति धारण कर लेनी पड़ती है।''[3]

भारतीय भाषाओं, विशेषतः इंडो–आर्यन समूह की भाषाओं में, एक बड़ी संख्या में शब्द संस्कृत मूल के हैं। यही कारण है कि हिंदी, बंगला, मराठी, गुजराती, ओड़िया आदि भाषाओं में अनेक सामान्य शब्द पाए जाते हैं:–

हिंदी	बंगला	मराठी	गुजराती	अर्थ
जल	জল	जल	જળ	पानी
पिता	পিতা	पिता	પિતા	पिता
मित्र	বন্ধু	मित्र	મિત્ર	दोस्त

भक्ति आंदोलन भारतीय भाषाओं में साहित्यिक अंतःक्रिया का सबसे प्राचीन और प्रभावशाली उदाहरण है। इस आंदोलन ने हिंदी (संत काव्य), मराठी (ज्ञानेश्वर, तुकाराम), बंगला (चैतन्य महाप्रभु), कन्नड़ (बसवन्ना), तमिल (नायनार–अलवार) आदि भाषाओं में आध्यात्मिक–सामाजिक साहित्य को जन्म दिया। तुलसीदास, कबीर, मीराबाई की रचनाएं दक्षिण और पूर्व भारत में भी अनूदित और लोकप्रिय हुईं। संत तुकाराम और ज्ञानेश्वर की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद हुआ और विचारधारा का विस्तार हुआ। इस संदर्भ में आचार्य विजय मोहन शर्मा का महत्वपूर्ण शोध

ग्रंथ है 'हिंदी को मराठी संतों की देन' जिसकी भूमिका में वे लिखते हैं– ''महाराष्ट्र में हिंदी दो रूपों में विकसित हुई, एक वह जिसमें अरबी–फारसी के शब्दों का थोड़ा–बहुत मिश्रण और स्थानीय भाषाओं की छाया दिखाई देती है। इस रूप को दक्खिनी, हिन्दवी अथवा उर्दू अथवा रेखता कहा गया है और दूसरा वह जिसमें खड़ी बोली, ब्रजभाषा आदि के मिश्रण के साथ मराठी का पुट परिलक्षित हुआ। इसे 'मराठी हिंदी' के नाम से अभिहित किया जा सकता है।''[4]

भारतीय भाषाओं में अधिकांशतः वाक्य संरचना (कृ + क + क्र) यानी कर्म + कर्ता + क्रिया के रूप में ही होती है। उदाहरणस्वरूपः

हिंदीः मैं बाजार गया।

मराठीः मी बाजारात गेलो।

बंगलाः আমি বাজারে গেলাম।

तमिलः நான் சந்தைக்கு சென்றேன்।

लिंग, वचन और काल के प्रयोग का ढांचा भी तुलनात्मक रूप से समान है, यद्यपि रूपांतरण की पद्धतियाँ अलग–अलग हैं। भारतीय भाषाओं में उच्चारण की ध्वन्यात्मक पद्धतियां भी काफी हद तक समान हैं। सभी भाषाओं में स्वर और व्यंजन संस्कृत के ध्वनि सिद्धांत से प्रभावित हैं। उच्चारण में त, थ, द, ध जैसी ध्वनियाँ लगभग सभी भाषाओं में पाई जाती हैं, भले ही उनके स्वरूप थोड़े भिन्न हों। सांस्कृतिक समानता के कारण हिंदी और भारतीय भाषाओं में कई मुहावरे, कहावतें और भावबोध एक जैसे हैं: हिंदी में "नाच ना जाने आँगन टेढ़ा" बंगला में "নাচতে না জানলে উঠোন বাঁকা " मराठी में "नाचता येईना अंगण वाकडे" आदि। इस प्रकार "भारत की समस्त भाषाओं की जड़ें तथा प्रेरणाएं अधिकांशतः एक–सी हैं और जिस मानसिक परिवेश में उनका विकास हुआ है, एक–सा ही है। भारत का प्रत्येक साहित्य – चाहे वह हिंदी, उर्दू, तेलुगू, तमिल, मलयालम, गुजराती, मराठी अथवा बंगला, उड़िया या असमिया किसी भी भाषा में हो, समग्र रूप से देश की वैचारिकता और संस्कृति का एक प्रकार से प्रतिनिधित्व करता है।"[5]

हालांकि भारतीय भाषाओं की लिपियाँ भिन्न हो सकती हैं (जैसे तमिल, बंगला, गुजराती, देवनागरी), परंतु भाषाई संरचना और मूलभूत शब्दावली में समानता से यह स्पष्ट होता है कि लिपि की विविधता भाषाई एकता में बाधक नहीं है। हिंदी में दक्षिण भारतीय भाषाओं से जैसे "सांबर", "इडली", "दोसा" जैसे शब्द प्रचलित हैं। वहीं, मराठी, बंगला और अन्य भाषाओं में भी हिंदी/संस्कृत से लिए गए शब्द आम हैं। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच साहित्यिक अंतःक्रिया भारत की बहुभाषिक संस्कृति का एक सशक्त उदाहरण है। इन भाषाओं में रचे गए साहित्य ने न केवल अपने–अपने समाजों को प्रतिबिंबित किया है, बल्कि एक–दूसरे को प्रेरित, प्रभावित और समृद्ध भी किया है। इसके साथ ही, अनुवाद ने इन भाषाओं के बीच सेतु का कार्य करते हुए साझा सांस्कृतिक अनुभव को जन–जन तक पहुंचाया है। डॉ. आरसु अपनी पुस्तक 'अनुवाद : अनुभव और अवदान' की भूमिका में लिखते हैं– "अनुवाद मूल सृजन से भी ऊँचे स्तर तक पहुंच जाता है। दो समाजों–संस्कृतियों, परिवेशों एवं भाषाओं के बीच का यह संवाद–सूत्र, अज्ञात को ज्ञात, अपरिचित को परिचित एवं भिन्न को अभिन्न बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयत्न करता है – भाषा की सौन्दर्य चेतना/दर्शाता अनुवाद है/दो भाषाओं से आपस का/यह प्यारा संवाद है।"[6]

अनुवाद ने भारतीय भाषाओं में सृजनात्मक और वैचारिक संवाद को संभव बनाया है। साहित्य अकादमी, एन.सी.ई.आर.टी., नेशनल बुक ट्रस्ट जैसी संस्थाओं ने विभिन्न भाषाओं के प्रमुख साहित्यिक कृत्यों का हिंदी और अन्य भाषाओं में अनुवाद करवाया। रवींद्रनाथ ठाकुर की बंगला रचनाएं जैसे 'गीतांजलि' हिंदी सहित कई भाषाओं में अनूदित हुईं। उर्दू शायरों जैसे ग़ालिब, इक़बाल, फैज़ की रचनाएं हिंदी, पंजाबी और अन्य भाषाओं में भी लोकप्रिय हुईं। तमिल लेखक सुब्रमण्यम भारती, तेलुगु के श्री श्री, कन्नड़ के यू. आर. अनंतमूर्ति जैसे रचनाकारों की रचनाएं हिंदी पाठकों तक अनुवाद के माध्यम से पहुंचीं। वर्तमान में "ऑनलाइन शब्दकोशों ने लाखों शब्दों को जिनमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी की पारिभाषिक शब्दावली भी शामिल हैं, उनके अर्थ सहित अनुवादकों के लिए उपलब्ध करवा दिया है। शब्द को टाइप करके ढूँढने में और उचित भाषा का चयन करने में भी कठिनाई सामने नहीं आती है। फोंट की समस्या तो यहाँ आती ही नहीं है। इसलिए अनेक दृष्टियों से ये कोश प्रयोक्ता अनुकूल हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो ऑनलाइन शब्दकोशों के मामले में हिंदी अभी बहुत पीछे है, प्रामाणिक शब्दकोशों का अभाव है, पारिभाषिक शब्दावली के कोश अलग से उपलब्ध नहीं"।[7]

हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच साहित्यिक अंतःक्रिया और अनुवाद केवल भाषाई प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह संस्कृति, विचार और भावनाओं के आदान–प्रदान की वह धारा है, जो भारत की आत्मा को एकता प्रदान करती है। यह परस्पर समभाव की सबसे सशक्त अभिव्यक्ति है। वर्तमान समय में मीडिया, सिनेमा और डिजिटल प्रौद्योगिकी ने भाषाओं के पारस्परिक संबंधों को नई गति, विस्तार और गहराई प्रदान की है। जहां पहले भाषाओं का संपर्क मुख्यतः साहित्य और शैक्षणिक स्तर तक सीमित था, वहीं आज यह संपर्क लोकप्रिय संस्कृति, जनसंचार और सोशल मीडिया के माध्यम से सीधे आम जन तक पहुंच रहा है। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच यह नवीन अंतःक्रिया परस्पर समभाव की दिशा में अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध हो रही है। बॉलीवुड (हिंदी फिल्म उद्योग) लंबे समय से भारत के विभिन्न भाषाई दर्शकों के लिए मनोरंजन का प्रमुख स्रोत रहा है। दक्षिण भारतीय फिल्में (तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम) अब हिंदी में डब होकर पूरे देश में देखी जाती हैं – जैसे बाहुबली, पुष्पा, केजीएफ आदि। हिंदी फिल्मों के भी मराठी, बंगला, पंजाबी आदि भाषाओं में डब संस्करण बनाए जाते हैं। हिंदी टीवी शोज़ क्षेत्रीय भाषाओं में अनूदित होते हैं, और इसके विपरीत भारतीय भाषाओं में भी अनूदित होते हैं। आज रियलिटी शोज़ में बहुभाषिक प्रस्तुति आम हो चुकी है– जैसे प्रतियोगियों की भाषाएं भिन्न होती हैं, पर संवाद हिंदी या अनुवादित भाषा में होता है। वर्तमान में प्रतिलिपि, वटपैड, कथा, माटी, हमर भाषा जैसे प्लेटफॉर्म विभिन्न भाषाओं में कहानियाँ और कविताएँ प्रकाशित करते हैं और कई बार एक ही रचना के अनुवाद भी वहीं उपलब्ध होते हैं। मीडिया, सिनेमा और डिजिटल प्रौद्योगिकी ने भाषिक सीमाओं को धूमिल कर दिया है। हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच जो परस्पर समभाव पहले केवल साहित्य और शिक्षा तक सीमित था, वह अब जनमानस के व्यावहारिक और सांस्कृतिक अनुभव का हिस्सा बन चुका है। इस युग में भाषिक समन्वय न केवल संभव है, बल्कि यह एक आवश्यक सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया भी बन चुका है।

भारत जैसे बहुभाषिक देश में शिक्षा और भाषा नीति का गहरा संबंध है। भाषाओं के बीच परस्पर सहयोग को सुदृढ़ करने के लिए शैक्षिक और नीतिगत स्तर पर अनेक उपाय किए गए हैं, जिनका उद्देश्य भाषाओं के संवर्धन, समन्वय और आपसी संवाद को प्रोत्साहित करना है। भारत की शिक्षा

नीति में लंबे समय से त्रिभाषा सूत्र लागू है, जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को स्थानीय भाषा, हिंदी और एक अन्य भाषा (अक्सर अंग्रेज़ी) के माध्यम से बहुभाषिक बनाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं को लेकर विशेष बल दिया गया है। NCERT, SCERT और अन्य शैक्षिक निकायों द्वारा तैयार की गई पुस्तकों में बहुभाषिक दृष्टिकोण को शामिल किया जा रहा है। छात्रों को क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य से भी परिचय कराया जा रहा है, जैसे–कक्षा 9–10 की हिंदी पुस्तक में मराठी, तमिल, बंगला साहित्य के अनुवाद शामिल किए गए हैं। कई विश्वविद्यालयों में तुलनात्मक साहित्य, भाषा विज्ञान और अनुवाद अध्ययन जैसे विषयों की पढ़ाई होती है, जहां हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं पर शोध कार्य होता है। केन्द्रीय हिंदी संस्थान, साहित्य अकादमी और भाषा संस्थान विभिन्न भाषाओं में अनुवाद, शोध और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं। इन संस्थानों के सहयोग से साझा भाषिक अध्ययन और अनुवाद परियोजनाओं का विस्तार हुआ है।

भारत भाषाओं की विविधता वाला देश है, जहाँ सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ सह–अस्तित्व में हैं। हिंदी, भारतीय भाषाओं में सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है, लेकिन विडंबना यह है कि हिंदी का संबंध अन्य भारतीय भाषाओं से जितना गहरा और ऐतिहासिक है, आज उतना ही उसमें एक तरह का अजनबीपन दिखाई देता है। यह अजनबीपन भाषाई, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों में एक जटिल प्रश्न बन गया है इस जटिलता को सुलझाने के लिए हमें फिर इतिहास के पन्न्नों को पलटना होगा और मूल उद्‌गम की ओर देखना होगा– ''अगस्त्य उत्तर और दक्षिण भारत के बीच प्रथम सेतु थे, इसका आख्यान उत्तर भारतीय परम्परा में भी है। उत्तर और दक्षिण को विभक्त रखने वाला पर्वत विन्ध्य पर्वत था। अगस्त्य जब दक्षिण को जाने लगे, विन्ध्य ने भूमिष्ठ होकर उन्हें प्रणाम किया। अगस्त्य ने आशीर्वाद देते हुए उसे यह उपदेश दिया कि मैं जब तक दक्षिण से न लौटूँ, तुम इसी तरह सिर झुकाए पड़े रहो। लेकिन, अगस्त्यजी दक्षिण जाकर फिर वापस नहीं हुए। सो, विन्ध्य अब तक सिर झुकाए, ज्यों–का–त्यों पड़ा है। तमिल–परम्परा में उत्तर और दक्षिण की एकता का इससे कहीं अधिक प्रमाण है। उसमें कहा गया कि जब अगस्त्य दक्षिण जाने लगे, पहले वे गंगा के पास गए और गंगा की धारा में से निकालकर उन्होंने कावेरी को साथ कर लिया। फिर जमदग्नि ऋषि के पुत्र तृणधूमाग्नि को, पुलस्त्य की कुमारी बहिन लोपामुद्रा को और द्वारका जाकर वृष्णिवंश के अठारह राजाओं को भी उन्होंने अपने साथ लगा लिया। अगस्त्य विन्ध्य के पार जंगलों को काटते और लोगों को बसाते हुए पश्चिमी घाट की ओर चले। पश्चिमी घाट पर पहुँचकर 'पोदिइल' नामक स्थान पर उन्होंने अपना आश्रम बनाया।''8

निष्कर्षतः हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं का संबंध हमेशा से सौहार्दपूर्ण रहा हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। ब्रिटिश काल में जब भाषाओं का पुनर्गठन और वर्गीकरण किया गया, तब हिंदी को उत्तर भारत की भाषा के रूप में प्रस्तुत किया गया और दक्षिण व पूर्व की भाषाओं को उससे अलग रखा गया। आज़ादी के बाद संविधान सभा में भाषा–विवाद ने इस दूरी को और बढ़ा दिया। हिंदी को राजभाषा बनाने के प्रयासों का कई हिंदीतर भाषी राज्यों में विरोध हुआ। इस ऐतिहासिक संघर्ष के कारण हिंदी को थोपे जाने वाली भाषा के रूप में देखा जाने लगा, जिससे अन्य भाषाओं के बीच परस्पर समभाव में भी कमी आईं। हिंदी और भारतीय भाषाओं में परस्पर समभाव न होने से भाषाई अलगाव की भावना बढ़ी है और इसका राजनीतिकरण भी हुआ है। भाषाओं के बीच संवादहीनता ने भाषाओं के बीच सांस्कृतिक दूरी बढ़ाई है जिसके परिणामस्वरूप आज प्रत्येक

भाषा अपनी जगह असुरक्षित महसूस करने लगी है। हिंदी को लेकर एक 'प्रतिरोध की संस्कृति' का विकास, विशेषतः दक्षिण भारत, पूर्वोत्तर और बंगाल में लम्बे समय से होता आया है। हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच जो अजनबीपन उभरा है, वह भारत के भाषायी—सांस्कृतिक लोकतंत्र के लिए चुनौती है। यह स्थिति केवल नीति—निर्धारकों की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हर नागरिक की भाषायी संवेदना और सजगता से जुड़ी है। हिंदी को राष्ट्रभाषा की तरह नहीं, भारतीय भाषाओं की संगति के रूप में देखा जाए तभी यह अजनबीपन स्नेह में बदलेगा। भारतीयता की आत्मा एकात्मकता में नहीं, बहुलता की सहमति में बसती है। भाषाएँ इस सहमति की सबसे जीवंत कड़ी हैं। अगर हम इन कड़ियों को समझदारी, समरसता और संवाद से जोड़ पाएं, तो हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच का अजनबीपन आत्मीयता में बदल सकता है। भाषाओं के बीच समन्वय, सहिष्णुता और सहयोग से ही भारत की भाषाई एकता और सांस्कृतिक समृद्धि संभव है। हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर समभाव की यह प्रक्रिया न केवल वर्तमान की आवश्यकता है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक मजबूत और समृद्ध विरासत भी है।

संदर्भ :

1. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, भारतीय आर्यभाषा और हिंदी, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण—1998, पृष्ठ संख्या— 54

2. भाषा पत्रिका, वर्ष : 48 अंक : 06, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जुलाई—अगस्त 2009, पृष्ठ संख्या— 96

3. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन पटना, संस्करण— तीसवां संस्करण 2024, पृष्ठ संख्या— 51—52

4. आचार्य विनयमोहन शर्मा, हिंदीत को मराठी संतों की देन, बिहार राष्ट्र भाषा—परिषद् पटना, प्रथम संस्कमरण मार्च 1957, भूमिका से

5. ज्ञानपीठ पुरस्कारः1965—90, संपादक—निशन टंडन, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण—1991, पृष्ठ—323

6. अनुवाद : अनुभव और अवदान, डॉ. आरसु, डॉ.एम. के. प्रीता, जयभारती प्रकाशन, इलाहबाद, भूमिका से

7. भाषा पत्रिका, वर्ष : 48 अंक : 06, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली6, जुलाई—अगस्त 2009, पृष्ठ संख्या— 51—52

8. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन पटना, संस्करण— तीसवां संस्करण 2024, पृष्ठ संख्या— 50—51

हिंदी और गुजराती भाषाओं में साम्यता– भाषा इतिहास और विज्ञान

– अमृता पांडेय
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी, संस्कृति मंत्रालय

भाषा–सरल शब्दों में भावों और विचारों को व्यक्त करने का माध्यम है। भाषा ही वह माध्यम है जिससे विश्व बंधुता का संदेश हम जन–जन तक पहुंचा पाते हैं। सहज और सामान्य रूप से अभिव्यक्त की गई बात ही श्रोता के लिए बोधगम्य होती है। भाषा न केवल सांस्कृतिक मेल–जोल को बढ़ाती है अपितु यह देश की अर्थव्यवस्था को भी सुदृढ़ करने का काम करती है। भारत एक ऐसा देश है जहां हर भाषा एक–दूसरे से जुड़ी है। सभी भारतीय भाषाओं की मूल जननी संस्कृत है। हिंदी भाषा की उत्पत्ति लगभग 1000 ईसवी पूर्व मानी जाती है। इसी तरह से हम देख सकते हैं कि हिंदी के साथ–साथ भारत के अलग–अलग राज्यों में मिलती जुलती भाषाओं का विकास हुआ। प्राचीन हिंदी का विकास प्रारंभ से ही अद्‌भुत रहा है, वहीं वर्तमान खड़ी बोली विकास के क्रम को दर्शाती है। हिंदी की वर्णमाला और गुजराती वर्णमाला में भी कुछ समानताएँ हैं। गुजराती भाषा की लिपि गुजराती लिपि है जो देवनागरी से उत्पन्न हुई है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल हिंदी और गुजराती भाषाएं इंडो–आर्यन भाषा परिवार का हिस्सा है। हिंदी और गुजराती–दोनों भाषाओं पर संस्कृत का अत्यधिक प्रभाव है तथा दोनों में काफी हद तक समान शब्द तथा व्याकरणिक संरचनाएं पाई जाती हैं। दोनों भाषाओं में ऐसी कई ध्वनियाँ हैं जो सामान्य हैं। इसके अलावा आम बोलचाल की भाषा भी सरल, सुबोध और सहज है।

भाषा विज्ञान–

विश्व की भाषाओं को मुख्य रूप से दो आधार में वर्गीकृत किया गया है। ये आधार हैं – आकृति यानि रचना तथा पारिवारिक या आनुवंशिक संबंध। भाषाविदों द्वारा रचना तत्व या आकृति के आधार पर किया गया वर्गीकरण आकृतिमूलक वर्गीकरण कहलाता है। भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण ही ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का प्रमुख विषय है। हम जानते हैं कि भाषा परिवार का अर्थ या तात्पर्य किसी सामान्य पूर्वज या प्राक् भाषा से जन्मी हुई तथा आनुवंशिक संबंध से जुड़ी हुई भाषाओं से है। इसी आधार पर पारिवारिक वर्गीकरण को आनुवंशिक एवं ऐतिहासिक वर्गीकरण की संज्ञा भी दी जाती है। जब हम भाषा को पढ़ते हैं और उसका गहन अध्ययन करते हैं तो हमें पता चलता है कि विश्व के 18 प्रमुख भाषा परिवारों में से भारोपीय भाषा परिवार का महत्व सबसे अधिक है। भाषाविदों के मत में इसके कई कारण हैं–सर्वप्रथम, जनसंख्या की दृष्टि से भारोपीय भाषा का उपयोग करने वाले सर्वाधिक हैं और विश्व के बहुत बड़े भूभाग में भारोपीय परिवार की भाषाएं बोली जाती हैं। यूरोप तथा एशिया के बड़े भूभाग में बोली जाने वाली भाषाएं भारोपीय परिवार से संबद्ध भाषाएं हैं। पठन–पाठन, इतिहास और साहित्यिक दृष्टि से भी इन भाषाओं का साहित्य उत्कृष्ट है। इसके साथ ही भाषाविदों ने इस परिवार की भाषाओं का सर्वाधिक अध्ययन भी किया है। भारोपीय भाषा परिवार को दो वर्गों में जाना जाता है 'केंटुम' और

'शतम' के रूप में। तुलनात्मक पद्धति के आधार पर विश्व की विभिन्न भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण किया गया है और साथ ही विभिन्न भाषा परिवारों की स्थापना भी की गई है उदाहरण के लिए भारत–यूरोपीय (भारोपीय) परिवार, द्रविड़ परिवार, चीनी परिवार, आस्ट्रेलियाई परिवार, अमरीकी परिवार आदि। यदि इन भाषाओं की तुलना करें तो हमें इनमें एक प्रकार की आनुवंशिक समानता मिलती है, ये सभी भाषाएं आर्य भाषा परिवार से संबंध रखती हैं। किंतु यदि हम मराठी या बांग्ला अथवा हिंदी भाषा की तुलना तेलुगु या तमिल से करें तो इनमें असमानता मिलती है क्योंकि ये भाषाएं भिन्न परिवार की भाषाएं हैं। इसे पश्चिमी और पूर्वी भाषाओं के रूप में भी विभाजित किया गया है। पूर्वी भाषाएं 'केंटुम' वर्ग और पश्चिमी भाषाएं 'शतम' वर्ग के रूप में चिह्नित की गई हैं। शतम वर्ग को भारत–ईरानी, आर्य भाषा परिवार के रूप में भी जाना जाता है।[1] भारत की आर्य भाषाएं इसी वर्ग में आती हैं। भाषाविदों ने यही स्थिति हिंदी, बांग्ला, असमिया, उड़िया, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओं की भी वर्णित की है।

गुजराती और हिंदी भाषा विज्ञान का इतिहास और समानता–

गुजराती और हिंदी इस देश की अधिकृत भाषाएं हैं। गुजरात का भौगोलिक क्षेत्र प्राचीन काल में विभिन्न नामों से प्रसिद्ध था,जिसमें उत्तर गुजरात के लिए "आनर्त" शब्द का उपयोग होता था। भारत के गुजरात राज्य में विभिन्न कालावधि के दौरान आनर्त, अर्बुद, सौराष्ट्र, कच्छ, शूर्पारक, नासिक्य आदि जैसे स्थानों के लिए अपरान्त शब्द का प्रयोग होता था, जिसका प्राचीन मतलब 'पश्चिमी तट की भूमि' था। गुजरात राज्य का पश्चिमी भाग समुद्र मार्ग से जुड़ा होने के कारण इसके विदेशों से संपर्क ने अनेकों विदेशी शब्दों से इसका परिचय करवाया। गुजराती भाषा में अनेकों मनीषियों की रचनाएं अपनी सादगी और लयबद्धता के लिए लोकप्रिय हैं। इन विलक्षण रचनाओं ने आधुनिक गुजराती गद्य पर अतुलनीय प्रभाव डाला है। गुजराती भाषा नवीन भारतीय–आर्य भाषाओं के दक्षिण–पश्चिमी समूह से संबंधित है। इतालवी विद्वान तेस्सितोरी ने प्राचीन गुजराती को प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी भी कहा, क्योंकि उनके काल में इस भाषा का उपयोग उस क्षेत्र में भी होता था, जिसे अब राजस्थान राज्य कहा जाता है।[2]

गुजरात की इतिहास की पुस्तकों में 'गुजरात' शब्द का प्रयोग 10वीं शताब्दी में अबू ज़ईद, अल्मसूदी तथा अल्बरूनी नामक 3 अरब–यात्रियों द्वारा बताया गया है। किन्तु कुछ गुजराती भाषाविदों का मत है कि 'गुजराती' शब्द का प्रयोग जहां तक ज्ञात है सर्वप्रथम प्रेमानंद भट्ट (जन्म 1649)– प्रसिद्ध गुजराती साहित्यकार ने भागवत पर आधारित गीतिकाव्य के दशम स्कंध में किया है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं जैसे गुजराती भाषा का इतिहास–10वीं से 15वीं शताब्दी, 15वीं से 17वीं शताब्दी और 17वीं से 19वीं शताब्दी के दौरान तीन अलग–अलग चरणों में विकसित हुआ। इसके पहले चरण में–प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएं जैसे वैदिक भाषा,वैदिक काल के दौरान आपसी बोलचाल की भाषा और सबसे महत्वपूर्ण संस्कृत भाषा का प्रयोग होता था, जबकि दूसरे चरण में– मध्य भारतीय आर्य भाषाएं, जैसे पाली,प्राकृत तथा अपभ्रंश और पुरानी गुजराती लिपि का व्यापक उपयोग हुआ। इसके तीसरे चरण में नवीन भारतीय आर्य भाषाएं, जो उत्तर भारत के प्रदेशों में बोली जाती थीं, जैसे कि हिंदी, गुजराती,बंगला आदि का उपयोग हुआ। इसी प्रकार लगभग 1700 ई. में इस भाषा के लिए 'गुजराती' शब्द का प्रयोग व्यापक हुआ। गुजराती का विकास अप्रभंश से हुआ,जो इसकी माँ कहलाती है। अपभ्रंश मध्य भारतीय आर्य भाषाओं अर्थात प्राकृत के विकास की अंतिम अवस्था है। अपभ्रंश 500 ई. से लगभग एक हज़ार वर्षों तक साहित्य

की भाषा बनी रही। गुजराती और हिंदी का अपभ्रंश से बड़ा घनिष्ठ संबंध है।[3]

भारतीय जनता को हिंदी नाम मुसलमानों के यहाँ आने के बाद मिला और 'हिन्द' नाम बहुप्रचलित कर दिया। उनके द्वारा भारत में रहने वालों को 'हिन्दू' कहा जाने लगा और इसी आधार पर 'हिन्द' देश में रहने वाले हिन्दुओं की भाषा को 'हिंदी' नाम दे दिया। भाषाशास्त्रियों ने पश्चिमी हिंदी को हिंदी माना है, जबकि व्यवहार में हिंदी एक बहुत बड़े भू–भाग की भाषा है जिसमें नेपाल, फिजी, मलेशिया, मॉरिशस आदि अनेकों देश भी आते हैं। जिस भाषा को हम पहले खड़ी बोली कहते थे, वही हिंदी भाषा का प्रधान रूप है जो समस्त क्षेत्र में साहित्य, पत्र–पत्रिकाओं, शिक्षा–दिक्षा, बोलचाल आदि में प्रयुक्त होती है। हिंदी की विभाषाएं हैं, जैसे–बिहारी, भोजपुरी, मगही, मैथिली, राजस्थानी, मारवाड़ी, मेवाती, पूर्वी हिंदी, अवधि, बघेली और छत्तीसगढ़ी तथा पहाड़ी आदि हैं। परन्तु भाषा वैज्ञानिकों की दृष्टि में पूर्वी हिंदी (अवधी,बघेली और छत्तीसगढ़ी) भी हिंदी से भिन्न है। वहीं ऐतिहासिक दृष्टि से पश्चिमी हिंदी शौरसेनी अपभ्रंश की वंशज है तथा पूर्वी हिंदी अर्धमागधी अपभ्रंश की है। प्राचीन भारत में लिपियां तीन प्रमुख रूपों में अस्तित्व में थीं–

1. **सिंधु लिपि–** सिंधु घाटी में 4 हज़ार पूर्व रहने वाले सुमेरीय जाति के लोग अपने विचारों की अभिव्यक्ति इसी भाषा में करते थे। परंतु कुछ विद्वान इसे ब्राह्मी लिपि का प्रारंभिक रूप मानते हैं जबकि कुछ भाषा वैज्ञानिक इसे द्रविड़ लिपि से संबद्ध बताते हैं।

2. **ब्राह्मी लिपि–** यह सबसे प्राचीन वर्ष लिपि है जो पाँचवीं शताब्दी से लेकर तीन सौ पचास ई. तक उपयोग में थी। भारत के विभिन्न भागों में,पश्चिमोत्तर को छोड़कर अशोक के शिलालेखों और अन्य शिलालेखों में यह ब्राह्मी लिपि देखने के मिलती है जिसकी धार्मिक मान्यता है कि इसे ब्रह्मा ने बनाया है।

3. **खरोष्ठी लिपि–** इस लिपि के नाम और उद्भव पर भाषा वैज्ञानिकों में अभी मतभेद है परन्तु ऐसा माना जाता है कि इस लिपि का उपयोग चौथी शताब्दी से लेकर तीसरी शताब्दी ई. पू. तक प्राचीनतम लेखों में किया जाता था। पश्चिम और उत्तर भारत में इस लिपि के लेख और सिक्के मिलने के कारण यह अनुमान किया जाता है कि यह लिपि इन क्षेत्रों में प्रचलित रही होगी। देवनागरी लिपि के विकास के बारे में माना जाता है कि यह आठवीं शताब्दी के आसपास अस्तित्व में आयी और निरंतर इसमें विकास होता रहा।

देवनागरी लिपि और गुजराती लिपि तथा वर्तनी–

वर्तनी का शाब्दिक अर्थ है– वर्तन करना, अनुकरण करना या पीछे–पीछे चलना। अर्थात् मौखिक भाषा का अनुवर्तन करने पर प्राप्त होने वाली ध्वनि–व्यवस्था को 'वर्तनी' की संज्ञा दी जाती है। हिंदी वर्तनी अन्य भाषाओं की ध्वनियों के ग्रहण करने में सक्षम है।[4] डॉ. आर.पी. वर्मा और सुभाषिनी मिश्रा की पुस्तक हिंदी भाषा एवं व्याकरण में गुप्त लिपि और उसके नए रूप को कुटिल लिपि की संज्ञा दी गई है, कुटिल इसलिए कहा गया है क्योंकि इसकी अवस्था में इसके स्वरों की मात्राओं की आकृति में कुटिलता का समावेश हो गया था। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार इसी कुटिल लिपि से नागरी और शारदा लिपि– जो कश्मीर की प्राचीन लिपि है का विकास हुआ है। जबकि दक्षिण भारत में इस नागरी लिपि को 'नंदी नागरी' लिपि के रूप में जाना जाता है। हिंदी लिखावट में शिरोरेखा का उपयोग होता है जबकि गुजराती लिखावट में इसका प्रयोग नहीं होता है। उदाहरण के लिए नीचे चित्र में हिंदी और गुजराती वर्तनी दी गई है।

गुजराती – हिन्दी वर्णमाला

ક क	ખ ख	ગ ग	ઘ घ	ચ च	છ छ	જ ज	ઝ झ	ટ ट
ઠ ठ	ડ ड	ણ ण	ત त	થ थ	દ द	ધ ध	ન न	પ प
ફ फ	બ ब	ભ भ	મ म	ય य	ર र	લ ल	વ व	શ श
સ स	હ ह	ષ ष	ક્ષ क्ष	ત્ર त्र	જ્ઞ ज्ञ	શ્ર श्र	ઢ ढ	ળ अऽ
અ अ	આ आ	ઇ इ	ઈ ई	ઉ उ	ઊ ऊ	એ ए	ઐ ऐ	ઓ ओ
ઔ औ	અં अं	અઃ अः						

हिंदी के ग, घ, छ, ट, ठ, ड, त, थ, द, ध, न, प, म, य, र, व, श, स, ह, ष, क्ष, त्र, ज्ञ, श्र, ढ हैं वह गुजराती लिखावट में भी समान ही हैं, बस अंतर है शिरोरेखा का जो गुजराती में देखने के नहीं मिलती है। जैसे हिंदी में हम क, ख, ग आदि बोलते हैं वैसे ही गुजराती में अधिकतर ध्वनियां इसी प्रकार से हैं। हिंदी के स्वर अ, आ, आदि हैं वैसे ही गुजराती ध्वनियां भी हैं। यहाँ तक की इसकी मात्राएँ भी समान हैं। आ की मात्रा हो या इ की मात्रा, इनका उपयोग जैसे हम हिंदी में करते हैं उसी प्रकार से गुजराती भाषा में भी होता है। इसी प्रकार हिंदी और गुजराती के वाक्य संरचना तथा उसमें उपयोग में आने वाले शब्द काफी हद तक समान हैं, उदाहरण के लिए:

–मैं खाना खा रही हूं– હું ભોજન કરી રહ્યો છું

इसमें देखा जा सकता है कि हूं ध्वनि जो आती है वह हम का रूप लिए हुए है। खाना यानि भोजन करना, यह सब लगभग हिंदी और गुजराती के एक रूप से साम्य होने का उदाहरण देते हैं।

भाषाविदों का मत है कि देवनागरी लिपि गुजराती ध्वनियों से प्रभावित है। अंत में भाषा के व्यापक अर्थ की सीमाएं अत्यन्त विस्तृत हैं। भाषाएं किसी सीमा के अंतर्गत बंध नहीं सकती हैं। इसमें केवल इंसानी भाषा ही नहीं शामिल है, बल्कि पशु–पक्षियों की ऐसे अनेकों ध्वनियाँ शामिल हैं जिनके स्वरों को निर्थक समझा जाता है। भाषा के अभाव में मनुष्य संकेतों के द्वारा अपने विचारों तथा भावों को अभिव्यक्त कर सकता है। गुजराती और हिंदी की समानता को दरकिनार नहीं किया जा सकता है क्योंकि ये भाषाएं एक ही माता की संतान है जिसने साथ मिलकर विकास यात्रा के क्रम को देखा है और उसमें परिवर्तन के साक्षी बने हैं। यदि दोनों भाषाओं का गहन अध्ययन किया जाए तो यह अपने में अधिक एकता को दर्शाएगी।

संदर्भः

1. https://ebooks.inflibnet.ac.in
2. e-adhayan
3. गुजराती साहित्य का इतिहास (श्री जयन्तकृष्ण हरिकृष्ण दवे)
4. हिंदी भाषा एवं व्याकरण (डॉ. आर.पी. वर्मा)
5. हिंदी भाषा और लिपि का इतिहास (डॉ. देवी प्रसाद कुँवर)

गुजरात में हिंदी का विकास और प्रसार

– विकास कुमार
सहायक प्रबंधक (राजभाषा)
सेन्ट्रल बैंक ऑफ़ इंडिया, उत्तर मुंबई क्षेत्रीय कार्यालय

भारत विविध भाषाओं का देश है, परंतु राष्ट्रीय एकता की भावना को पल्लवित करने के लिए एक सेतुभाषा की आवश्यकता सदैव महसूस की जाती रही है। इस भूमिका में हिंदी ने स्वतंत्रता संग्राम के समय से लेकर आज तक अपनी सार्थकता सिद्ध की है। हिंदी के प्रचार–प्रसार में गुजरात जैसे हिंदीतर भाषी प्रदेश ने जो सक्रिय भूमिका निभाई है, वह अत्यंत प्रेरणादायक रही है। गुजरात न केवल साहित्यिक दृष्टिकोण से हिंदी के प्रति अनुरागी रहा है, अपितु वहाँ के अनेक मनीषियों ने इस भाषा को जीवन–दृष्टि और राष्ट्र निर्माण का सशक्त माध्यम मानते हुए इसके प्रचार–प्रसार में अपना सर्वस्व समर्पित किया।

गुजरात ने कभी भी हिंदी को पराई भाषा नहीं माना। 18वीं शताब्दी के मध्य से ही गुजरात के प्रबुद्ध साहित्यकारों, विचारकों, बुद्धिजीवियों और भाषाविदों ने हिंदी को न केवल स्वीकार किया बल्कि उसमें सृजन कार्य को भी अपनाया। हेमचन्द्राचार्य जैसे महान वैयाकरण ने जहां भारतीय भाषाओं के समन्वय की नींव रखी, तो वहीं दयानन्द सरस्वती और नरसिंह मेहता जैसे महान संतों ने हिंदी को आध्यात्मिक और नैतिक चेतना का माध्यम बनाया। कच्छ–भुज क्षेत्र में ब्रजभाषा की कव्य–पाठशालाएँ इस बात की साक्षी हैं कि हिंदी साहित्यिक संस्कृति गुजरात की मिट्टी में रच–बस चुकी थी।

गुजरात में हिंदी के प्रचार की सबसे प्रभावशाली ध्वजा महात्मा गाँधी ने उठाई। गाँधीजी हिंदी को केवल भाषा नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चेतना और आत्मबल का प्रतीक मानते थे। उनका मानना था– 'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।' उनके विचारों में स्पष्ट था कि भारत जैसे बहुभाषी देश को एकजुट करने के लिए हिंदी जैसी सर्व समावेशी भाषा आवश्यक है। इन्दौर हिंदी साहित्य सम्मेलन में गाँधीजी द्वारा हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' घोषित करना केवल एक भाषायी वक्तव्य नहीं, बल्कि एक क्रांतिकारी उद्‌घोषणा थी। इसने न केवल हिंदी भाषा के महत्त्व को स्थापित किया, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। साल 4 जुलाई 1936 में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा की स्थापना गाँधीजी के इन्हीं विचारों की परिणति थी। गाँधीजी की 'एक राष्ट्र, एक भाषा' के आदर्श वाक्य को केंद्र में रखकर इस समिति ने हिंदीतर भाषी क्षेत्रों में हिंदी प्रचार का कार्य आरंभ किया। गाँधीजी के इस स्वप्न को साकार करने हेतु देश के अनेक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों और राष्ट्र निर्माताओं ने सहभागिता की। इनमें डॉ. राजेंद्र प्रसाद, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन, पं. जवाहरलाल नेहरू, नेताजी सुभाष चंद्र बोस, आचार्य नरेंद्र देव, आचार्य काका कालेलकर, सेठ जमनालाल बजाज, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, बाबा राघव दास तथा श्री वियोगी हरि जैसे महान व्यक्तित्वों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का प्रमुख उद्देश्य भारत एवं विदेशों में हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार और विकास करना था। साथ ही हिंदी को प्रशासनिक, शैक्षणिक तथा साहित्यिक क्षेत्रों में कार्यकारी भाषा के रूप में स्थापित करना तथा उसके माध्यम से देश की एकता और सहयोग को सुदृढ़ करना भी समिति की प्राथमिकताओं में सम्मिलित था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समिति ने हिंदी के लिए एक अनुकूल वातावरण निर्मित करने की दिशा में सतत कार्य किया। वर्तमान में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के भारत के 20 से अधिक राज्यों में क्षेत्रीय कार्यालय सक्रिय हैं, जो हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार और उसके सांस्कृतिक सशक्तिकरण के कार्य में निरंतर योगदान दे रहे हैं। समिति का कार्यक्षेत्र सौराष्ट्र से लेकर दक्षिण भारत तक फैला है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित संस्थाओं ने हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। वर्धा की राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, काशी की नागरी प्रचारिणी सभा, दक्षिण भारत की हिंदी प्रचार सभा तथा गुजरात विद्यापीठ इन संस्थाओं में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। गुजरात विद्यापीठ की स्थापना स्वयं महात्मा गाँधी ने 18 अक्टूबर, 1920 को अहमदाबाद में की थी। यह संस्था हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में एक सशक्त आधारस्तंभ के रूप में उभरी। गाँधीजी की परिकल्पना थी कि यह विद्यापीठ युवाओं को राष्ट्र निर्माण के लिए तैयार करे और 'हिंद स्वराज' की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करे अर्थात् उस आत्मनिर्भर और मूल्यनिष्ठ भारत का निर्माण, जिसका स्वप्न उन्होंने देखा था।

गुजरात विद्यापीठ एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के रूप में अस्तित्व में आया, जिसे आरंभ में सरकार की विधिक मान्यता (चार्टर) प्राप्त नहीं थी। गाँधीजी इसके आजीवन कुलपति रहे। प्रोफेसर ए. टी. गिडवानी को इसका प्रथम कुलपति नियुक्त किया गया। गाँधीजी के पश्चात सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. राजेंद्र प्रसाद और मोरारजी देसाई जैसे महान राष्ट्रनायकों ने भी विद्यापीठ के कुलपति पद को गरिमा प्रदान की। समय के साथ कई महाविद्यालय, विद्यालय और संस्थाएं इस विद्यापीठ से संबद्ध होती गईं।

1930 तक विद्यापीठ में स्नातक स्तर पर गुजराती, मराठी, बांग्ला, संस्कृत, फ़ारसी और अंग्रेज़ी भाषाओं के साथ–साथ इतिहास, गणित, दर्शनशास्त्र, अर्थशास्त्र, लेखांकन, संगीत, राजनीति शास्त्र, औषधि विज्ञान, पुरातत्त्व और भारतीय अध्ययन जैसे विविध विषयों का अध्ययन–अध्यापन किया जाता था। किंतु 1930 से 1935 तक सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान विद्यापीठ का कार्य अस्थायी रूप से बाधित हुआ, क्योंकि शिक्षक और विद्यार्थी स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से सम्मिलित हुए और अनेक ने स्वेच्छा से कारावास स्वीकार किया। इसी प्रकार 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान भी विद्यापीठ की गतिविधियाँ स्थगित हो गईं। स्वतंत्रता संग्राम की इन महत्त्वपूर्ण घटनाओं के उपरांत 1945 से विद्यापीठ ने पुनः अपने शैक्षिक कार्यों को गति प्रदान की।

आज गुजरात विद्यापीठ भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय है, जो गाँधीजी के सेवा–प्रधान और मूल्य–आधारित शिक्षा के आदर्शों को आगे बढ़ाने हेतु निरंतर प्रयासरत है। विशेष रूप से राष्ट्रभाषा हिंदी के क्षेत्र में इस विद्यापीठ का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। इसने हिंदी भाषा के प्रशिक्षण, परीक्षाओं के संचालन, प्रकाशन कार्य तथा विद्यालय संचालन के माध्यम से जनसामान्य में हिंदी के प्रति अभिरुचि और सम्मान का भाव उत्पन्न किया। इसका प्रभाव विशेष रूप से सौराष्ट्र, राजकोट, भावनगर और अमरेली जैसे क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

सौराष्ट्र में राष्ट्रभाषा प्रचार का सूत्रपात स्व. जेठालाल जोशी और जयंतीलाल मालधारी ने किया। भावनगर में प्रमुख गाँधीवादी कार्यकर्ता श्री वजुभाई शाह ने आचार्य काका कालेलकर की प्रेरणा से 'काठियावाड राष्ट्रभाषा प्रचार संस्था' की स्थापना की। 1939 में सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा हिंदी वर्ग का उद्घाटन कर हिंदी प्रचार की औपचारिक शुरुआत की गई। कालांतर में यह संस्था वर्धा समिति से जुड़ी, फिर गाँधीजी की नीति के अनुसार 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' से और अंततः गुजरात विद्यापीठ से संबद्ध हो गई। इस प्रकार सौराष्ट्र में हिंदी प्रचार एक संस्थागत परंपरा का रूप ले चुका था।

भावनगर में राष्ट्रभाषा प्रचार का इतिहास गौरवशाली रहा है। स्व. जयेन्द्रभाई त्रिवेदी इस क्षेत्र के हिंदी प्रचारक परंपरा के उज्ज्वल नक्षत्र थे। वे एक ओजस्वी वक्ता, कुशल शिक्षक और हिंदी के समर्पित सेवक थे। उन्होंने भावनगर महिला महाविद्यालय में अध्यापन करते हुए हिंदी शिक्षा और स्त्री शिक्षा के समन्वय का कार्य किया। उनकी प्रेरणा से भावनगर में प्रति वर्ष हजारों विद्यार्थी वर्धा की प्राथमिक, माध्यमिक और रत्न परीक्षाओं में भाग लेते थे। उनका स्थापित पुस्तकालय 'जयेन्द्र त्रिवेदी पुस्तकालय' साहित्य और अध्ययनशीलता की मिसाल बना।

1994 के बाद हिंदी प्रचार की गतिविधियों में थोड़ी शिथिलता आई, परंतु राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, अहमदाबाद के संचालक श्री अरविन्दभाई जोशी के प्रयासों से पुनः भावनगर में केन्द्र स्थापित किया गया। श्री विजयभाई इन्दुलाल भट्ट की नियुक्ति से नये जोश के साथ प्रचार कार्य आरंभ हुआ। उल्लेखनीय है कि के.पी.ई.एस. स्कूल की छात्रा रोज़ी रत्नानी ने वर्धा की परीक्षा में भारत में प्रथम स्थान प्राप्त कर यह सिद्ध किया कि हिंदी प्रचार की जड़ें पुनः मजबूत हो रही हैं। कम्प्यूटराइज्ड परिणाम प्रणाली, निःशुल्क मार्गदर्शन वर्ग और महिला शिक्षकों की सहभागिता ने हिंदी प्रचार को नवीन आयाम दिए।

हिंदी के संवर्धन में गुजरात के जिन मनीषियों का योगदान अविस्मरणीय है, उनमें महात्मा गाँधी, काका कालेलकर, मोरारजी देसाई, वल्लभभाई पटेल, कन्हैयालाल मुंशी, जेठालाल जोशी, अमृतलाल नानावटी, रामलाल परीख, विष्णु विराट और जयेन्द्र त्रिवेदी जैसे नाम अग्रणी हैं। इन सभी ने अपने–अपने स्तर पर हिंदी को राष्ट्रीय चेतना की भाषा बनाया। प्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार और विचारक श्री कालीदास निवेदी के अनुसार–"स्वतंत्रता संग्राम के समय गुजरात में राष्ट्रीय दृष्टिकोण का जो विकास हुआ, उसने हिंदी को जनमानस में स्थापित कर दिया। राज्य की राजभाषा नीति भी इस सुदृढ़ विचारधारा का प्रतिफलन है।" इस ऐतिहासिक भूमिका का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह रहा कि गुजरात की जनता और नेतृत्व में एक सुदृढ़ राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ तथा राष्ट्रीय एकता के संस्कार समाज में गहराई से प्रवाहित होने लगे। यही चेतना गुजरात की राजभाषा नीति और हिंदी भाषा के प्रति उसके दृष्टिकोण में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हुई दिखती है।

गुजरात राज्य की स्थापना 1 मई, 1960 को हुई। इसके तुरंत पश्चात् गुजरात विधानसभा ने जिस विषय पर सर्वप्रथम निर्णय लिया, वह था राज्य की राजभाषा नीति। यह निर्णय इस बात का प्रमाण है कि गुजरात की जनता न केवल भाषिक दृष्टि से सजग है, बल्कि भाषा के सांस्कृतिक और राष्ट्रीय मूल्य के प्रति भी जागरूक है। यदि भाषायी व्यवहार की दृष्टि से देखा जाए तो गुजरात मूलतः एक हिंदीतर भाषी राज्य है। इसके बावजूद हिंदी को यहां व्यावहारिक भाषा के रूप में व्यापक स्वीकृति प्राप्त है। प्रशासनिक कार्यों से लेकर साहित्यिक अभिव्यक्ति और

जनसंपर्क तक हिंदी को जो स्थान मिला है, वह गुजरात की दूरदर्शी भाषा नीति का परिचायक है। यह गुजरात राज्य द्वारा उठाया गया एक गौरवपूर्ण प्रशासनिक कदम है, जो अन्य राज्यों के लिए अनुकरणीय बना।

गुजरात विधानसभा द्वारा पारित गुजरात राजभाषा अधिनियम के अंतर्गत देवनागरी लिपि में लिखी गई हिंदी को द्वितीय राजभाषा के रूप में मान्यता दी गई। इस प्रकार हिंदी को न केवल संविधान सम्मत दर्जा प्राप्त हुआ, बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से भी उसे विशेष महत्त्व प्रदान किया गया। विशेष रूप से यह निर्णय भारतीय संविधान की धाराओं – अनुच्छेद 345, 346 और 347 की भावना के अनुरूप था, जिससे यह सिद्ध होता है कि गुजरात ने राजभाषा नीति के क्षेत्र में राष्ट्रीय एकता को साकार करने का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

हिंदी को राजभाषा का दर्जा देने के साथ–साथ गुजरात सरकार ने इसके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए। राज्य सरकार ने संविधान की धारा 346 के आलोक में भारत सरकार तथा अन्य हिंदी भाषी राज्यों – जैसे राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, मध्य प्रदेश, बिहार और महाराष्ट्र आदि के साथ पत्राचार हिंदी में करने का निर्णय लिया। यह निर्णय न केवल प्रशासनिक सरलता को बढ़ावा देने वाला था, बल्कि राष्ट्रीय भाषिक एकता की दिशा में भी एक ठोस पहल थी।

इस नीति के तहत यह प्रस्तावित किया गया कि भारत सरकार और हिंदी भाषी राज्यों को भेजे जाने वाले पावती–पत्र, अधिसूचनाएँ, स्मृति पत्र आदि हिंदी में प्रेषित किया जाए। साथ ही राज्य हिंदी समिति की सहायता से यह सुनिश्चित किया गया कि हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर भी हिंदी में ही दिया जाए, जिससे पत्राचार में भाषिक एकरूपता बनी रहे और आम नागरिकों को संवाद में सहजता प्राप्त हो। इस तरह गुजरात राज्य ने हिंदी को न केवल राजभाषा के रूप में मान्यता दी, बल्कि उसकी संवैधानिक मर्यादा का पूर्ण पालन करते हुए व्यावहारिक स्तर पर भी उसे प्रतिष्ठित किया। यह एक ऐसा उदाहरण है, जो अन्य हिंदीतर भाषी राज्यों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन सकता है।

इस प्रकार गुजरात ने हिंदी को कभी भी पराई भाषा नहीं माना, बल्कि उसे अपने सांस्कृतिक और राष्ट्रीय दायित्व का एक प्रमुख अंग माना। यहाँ के मनीषियों ने अपने विचार, कर्म और संगठनात्मक प्रयासों से हिंदी को जन–जन तक पहुंचाया। महात्मा गाँधी की राष्ट्रभाषा की कल्पना को साकार करने में गुजरात की भूमि और वहाँ के विचारकों का योगदान अमिट है। आज जब भारत विविधता के साथ एकता के स्वरूप को पुनः परिभाषित कर रहा है, तब गुजरात की हिंदी साधना हमें यह सिखाती है कि भाषायी सहिष्णुता और समर्पण से ही राष्ट्र की आत्मा को बल मिलता है। हिंदी केवल एक भाषा नहीं, बल्कि एक चेतना है और उस चेतना को स्वर देने वाले मनीषियों का इतिहास कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता।

अनेकता में एकता की सूत्रधार – हिंदी

– बिक्रम सिंह
उप प्रबंधक (राजभाषा), मेकॉन लिमिटेड, रांची

भारत विविधताओं का देश है और इसकी सबसे सुंदर विशेषता इसकी भाषाई विविधता है। हिंदी भारतीय समाज का अभिन्न अंग है, परन्तु इसके विकास और अस्तित्व में अन्य भारतीय भाषाओं का व्यापक योगदान रहा है। हिंदी और भारतीय भाषाओं के पारस्परिक रिश्ते, उनके सहयोग, सामंजस्य और एकता की कहानी भारत की गौरवशाली परंपरा को दर्शाती है। हिंदी का इतिहास संस्कृत, पालि, अपभ्रंश, ब्रज, अवधी, भोजपुरी जैसे भाषाई स्रोतों से जुड़ा है। हिंदी न सिर्फ स्वयं में विकसित हुई, बल्कि अन्य स्थानीय भाषाओं से शब्द, व्याकरण, कहावतें और सांस्कृतिक भाव ग्रहण करती रही है। दक्षिण की द्रविड़ भाषाएं, पूर्व की असमिया, बंगला, ओड़िया, उत्तर की पंजाबी, कश्मीरी और पश्चिम की गुजराती, मराठी, इन सबका हिंदी पर प्रभाव रहा है। हिंदी नित्य नए रूप धारण कर भारतीय जनता की संवाद की भाषा बनी हुई है।

प्राचीन एवं मध्यकाल में संस्कृत, प्राकृत और क्षेत्रीय भाषाओं का विकास

कई उत्तर भारतीय भाषाओं की तरह हिंदी की जड़ें प्राचीन भारत की धार्मिक और विद्वत्तापूर्ण भाषा वैदिक संस्कृत से जुड़ी हैं। सदियों से संस्कृत विभिन्न प्राकृत भाषाओं और फिर 7वीं–10वीं शताब्दी तक अपभ्रंश बोलियों में विकसित हुई। ये बोलियाँ क्षेत्रीय रूप से विविध होती गईं और द्रविड़, तिब्बती–बर्मी और ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवारों के साथ मिलकर देश की विशाल भाषाई विविधता की नींव रखी।

सांस्कृतिक संगम के माध्यम से हिंदी का उदय

- **अपभ्रंश से हिंदी तकः** 10वीं–13वीं शताब्दी तक पश्चिमी हिंदी बोलियाँ (विशेषकर खड़ी बोली) प्रमुख हो गईं। जैसे–जैसे दिल्ली एक राजनीतिक और सांस्कृतिक केंद्र बनती गई, खड़ी बोली अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के साथ घुल–मिल गई। यह दिल्ली सल्तनत और मुगल काल के दौरान फ़ारसी, अरबी और तुर्की भाषाओं से प्रभावित हुई।

- **हिंदुस्तानी का जन्मः** हिन्दुस्तानी एक समन्वित भाषा थी जिसमें संस्कृत–आधारित शब्दावली फ़ारसी और स्थानीय शब्दों का मिश्रण था। इसका विकास अन्य भारतीय भाषाओं के साथ–साथ फ़ारसी, अरबी और अंग्रेजी से निरंतर उधार लेने और उनके साथ घुलने–मिलने से होता रहा है। इससे इसकी शब्दावली सुदृढ़ हुई और इसका सांस्कृतिक आधार समृद्ध हुआ। हिंदुस्तानी उत्तर भारतीय समुदायों के साथ–साथ दक्षिणी, पूर्वी और पश्चिमी भारतीय क्षेत्रों के साथ बातचीत विशेष रूप से व्यापार, कविता, भक्ति साहित्य (जैसे भक्ति और सूफी परंपराएं) और प्रशासन के लिए एक आम भाषा बन गई।

- **साहित्यिक परंपराओं का एकीकरण:** क्षेत्रीय भाषाओं और हिंदी की एक–दूसरे को प्रभावित करने की एक लंबी परंपरा रही है। तुलसीदास की रामचरितमानस (हिंदी), तिरुवल्लुवर की तिरुक्कुरल (तमिल) और बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय की आनंदमठ (बंगाली) जैसी रचनाएँ विभिन्न भाषाओं में मौलिक विचारों के अनुवाद को दर्शाती हैं।

उपनिवेश काल और आधुनिक युग

- **उपनिवेश काल में भाषाई विकास:** ब्रिटिश शासन के तहत हिंदुस्तानी (उर्दू और हिंदी दोनों लिपियों में) को प्रशासन, शिक्षा और साहित्य के लिए मान्यता प्राप्त थी। हिंदी को उर्दू के साथ मानकीकृत करने के प्रयासों ने कभी–कभी सांप्रदायिक तनाव को जन्म दिया, लेकिन अधिकांशतः, दोनों अस्तित्व में रहे और एक–दूसरे के पूरक रहे। यह भारतीय समाज की एकता को दर्शाता है।
- **स्वतंत्रता और राजभाषा नीति:** वर्ष 1947 के बाद भारत ने हिंदी (देवनागरी लिपि में) को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया, जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को मान्यता दी गई। त्रि–भाषा सूत्र (1968 में औपचारिक रूप दिया गया) ने स्कूलों में हिंदी, अंग्रेजी और एक क्षेत्रीय भाषा सीखने को प्रोत्साहित किया जिससे सभी भाषाओं के सम्मान को बढ़ावा मिला।
- **आधुनिक भाषाई सद्भाव:** हिंदी आज क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभावों को प्रतिबिंबित करती है, ठीक उसी प्रकार जैसे क्षेत्रीय भाषाएं लगातार हिंदी से शब्दों, शैलियों और मुहावरों को अपनाती रहती हैं। यह विशेष रूप से जनसंचार माध्यमों, लोकप्रिय साहित्य और डिजिटल प्लेटफार्मों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। भारत की राजभाषा नीति "विविधता में एकता" को मानती है। आधिकारिक कार्यक्रम, सांस्कृतिक उत्सव और भारतीय शिक्षा प्रणाली प्रत्येक भाषाई विरासत के पारस्परिक मूल्यांकन, संवाद और संरक्षण को प्रोत्साहित करती है।
- **साझा मंच:** काव्य और लोकगीत उत्सव, धार्मिक आयोजन और बाद में भारतीय सिनेमा, ऐसे संगम स्थल रहे हैं जहां हिंदी और विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं की अभिव्यक्तियां एक–दूसरे में समाहित होकर राष्ट्रीय स्तर पर गूंजती हैं।

हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का सकारात्मक प्रभाव

हिंदी ने भारत की भाषाई विविधता को आकार देने में व्यापक और बहुआयामी भूमिका निभाई है। इसके प्रभाव को सकारात्मक रूप से देखा जा सकता है। इसने विविध समुदायों के बीच सेतु के रूप में कार्य किया है।

- **भाषाई भूमिका:** हिंदी भारत की 40% से अधिक आबादी द्वारा बोली जाती है और विशेष रूप से उत्तरी और मध्य भारत में एक भाषा के रूप में कार्य करती है। यह विभिन्न भाषाई पृष्ठभूमि के लोगों के बीच संचार का सेतु है। सैकड़ों भाषाओं वाले देश में यह सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक एकीकरण को सक्षम बनाता है। यह लाखों लोगों के लिए विशेष रूप से उत्तरी और मध्य क्षेत्रों में एक भाषा के रूप में कार्य करती है जिससे विभिन्न भाषाई पृष्ठभूमि के लोग प्रभावी ढंग से संवाद कर पाते हैं। यह कार्य विभाजन को पाटने और अंतर–क्षेत्रीय संवाद को बढ़ावा देने में मदद करता है।

- **सांस्कृतिक माध्यम:** साहित्य, सिनेमा (बॉलीवुड), संगीत और मीडिया में हिंदी की व्यापकता इसे राष्ट्रीय और वैश्विक उपस्थिति प्रदान करती है। यह व्यापक सांस्कृतिक मंच क्षेत्रीय कहानियों, परंपराओं और कलात्मक अभिव्यक्तियों को अखिल भारतीय स्तर पर दर्शकों तक पहुंचाने में मदद करता है।

- **प्रशासनिक और शैक्षिक उपयोग:** भारत की राजभाषा होने के नाते हिंदी का उपयोग शासन, शिक्षा और सार्वजनिक संवाद में किया जाता है, जिससे लाखों लोगों के लिए प्रमुख सरकारी कार्य सुलभ हो जाते हैं। यह साझा राष्ट्रीय पहचान की भावना को भी बढ़ावा देती है।

- **अंतर–क्षेत्रीय संपर्क:** ऐसी स्थितियों में जहां किसी भी पक्ष की मातृभाषा साझा नहीं होती (उदाहरण के लिए, एक तमिल भाषी और एक पंजाबी भाषी), हिंदी अक्सर सीधी बातचीत के लिए पसंदीदा भाषा बन जाती है, जिससे आंतरिक संचार के लिए अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओं पर निर्भरता कम हो जाती है।

- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 :** राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 त्रिभाषा सूत्र पर बल देती है। राज्यों और विद्यार्थियों के पास तीन में से कम से कम दो भाषाएं भारतीय होनी चाहिए। यह बहुभाषावाद और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देते हुए भाषाई पहचान का सम्मान करती है। इस नीति में विशेष रूप से प्रारंभिक वर्षों (कक्षा 5 तक और मुख्यतः कक्षा 8 तक) के दौरान स्थानीय भाषा/ मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में शिक्षण को प्राथमिकता दी गई है। यह दृष्टिकोण बच्चों की समझ, बहुमुखी विकास और भावनात्मक जुड़ाव को बढ़ाता है। 2025–26 शैक्षणिक सत्र से सीबीएसई स्कूल यथासंभव "मातृभाषा पहले" नीति की ओर बढ़ रहे हैं।

- **अनुवाद और प्रौद्योगिकी:** हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं में डिजिटल रिसोर्स और शैक्षिक सामग्री विकसित करने की पहल ज्ञान तक व्यापक पहुंच सुनिश्चित करती है और एक ऐसा वातावरण तैयार करती है जहां हिंदी सहित कई भाषाएं एक साथ फल–फूल सकें।

- **विविधता का सम्मान:** जहां हिंदी आम समझ को बढ़ावा देती है, वहीं भारत का संविधान 22 आधिकारिक भाषाओं को मान्यता देता है, जो इस बात पर ज़ोर देता है कि हिंदी की भूमिका क्षेत्रीय भाषाओं का स्थान लेने की नहीं, बल्कि उनके साथ सह–अस्तित्व में रहने की है। भाषा संबंधी नीतियां समावेशिता पर केंद्रित हैं, जिससे प्रत्येक भारतीय को स्थानीय भाषाओं और पहचान को कमज़ोर किए बिना, हिंदी सहित, कई भाषाओं में दक्षता विकसित करने का अवसर मिलता है।

भाषाओं के प्रोत्साहन हेतु संतुलन कार्यपद्धति

- **भाषाई संघवाद:** भारत का संवैधानिक मॉडल प्रत्येक राज्य को प्रशासन और शिक्षा के लिए अपनी आधिकारिक भाषा या भाषाएं चुनने की अनुमति देता है, जिससे हिंदी और अंग्रेजी के साथ–साथ क्षेत्रीय भाषा की पहचान को संरक्षित और बढ़ावा देने में मदद मिलती है। भारत की बहुभाषी शिक्षा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देते हुए भाषाई विविधता को अपनाने के लिए एक वैश्विक मॉडल के रूप में कार्य करती है। देश का दृष्टिकोण

मज़बूत संवैधानिक प्रावधानों, प्रमुख नीतिगत सुधारों और सांस्कृतिक विरासत की रक्षा और समानता को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन की गई नवीन शैक्षिक पद्धतियों पर आधारित है।

- **गतिशील आदान–प्रदानः** चुनौतियों के बावजूद, हिंदी शब्दावली, मुहावरों और लोकप्रिय संस्कृति के माध्यम से क्षेत्रीय भाषाओं को प्रभावित करती रही है और उनसे प्रभावित होती रही है। इस प्रकार के आदान–प्रदान ने भारतीय भाषाई विविधता को समृद्ध किया है, हालांकि इसके लिए स्थानीय और संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण के लिए निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है।

संक्षेप में कहें तो हिंदी "अनेकता में एकता" की सूत्रधार के रूप में कार्य करती है। भारत के विभिन्न भाषाई समुदायों के बीच हिंदी संचार, समझ और सांस्कृतिक आदान–प्रदान को बढ़ावा देती है। भारत में बहुभाषी एकता को बढ़ावा देने में हिंदी की भूमिका देश की विशाल भाषाई विविधता के बीच एक सेतु भाषा और एक सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में इसके कार्य में निहित है। बहुभाषी नीतियां क्षेत्रीय भाषाओं के लिए अवसर और चुनौतियां दोनों पैदा करती हैं। उनकी प्रभावशीलता, प्रतिबद्ध कार्यान्वयन, स्थानीय वास्तविकताओं के प्रति संवेदनशीलता और शिक्षक प्रशिक्षण, संसाधन विकास और डिजिटल समावेशन में निरंतर निवेश पर निर्भर करती है। इसकी प्रभावशीलता सक्षमकर्ता और सेतु के रूप में है, जो यह सुनिश्चित करती है कि राष्ट्रीय एकता सभी भारतीय भाषाओं के पारस्परिक सम्मान और समृद्ध अस्तित्व पर आधारित हो।

संदर्भ :

- https://www.wikipedia.org/
- http://google.com/
- https://www-drishtiias-com/daily-news-editorials/one-nation-one-language

भाषा : लोकतंत्र और सहकारिता की संवाहक शक्ति

– आशीष भवनानी
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय स्टेट बैंक, मुंबई

भाषा, सहकारिता और लोकतंत्र– ये तीनों ऐसे स्तंभ हैं जो भारत के समावेशी, न्यायपूर्ण और सहभागी ढांचे को मजबूत आधार प्रदान करते हैं। हमारे देश में, जहां भाषा संप्रेषण और संस्कृति का माध्यम है, वहीं सहकारिता एक ऐसा संगठनात्मक तंत्र है जो लोकतांत्रिक मूल्यों को धरातल पर लागू करता है। जब सहकारिता का संचालन आमजन की मातृभाषा में होता है, तब सहभागिता अधिक प्रभावी होती है और लोकतंत्र पल्लवित होता है। यही कारण है कि 'भाषा से समृद्ध सहकारिता और सहकारिता से सशक्त लोकतंत्र' बहुभाषी भारतीय समाज के लिए केवल एक वाक्य नहीं, बल्कि एक विकास दर्शन है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जहां 140 करोड़ से अधिक लोग अनेक भाषाओं, संस्कृतियों और सामाजिक पहचान के साथ एक–दूसरे के साथ निवास करते हैं। यहाँ लोकतंत्र की आत्मा संसदीय व्यवस्था से लेकर ग्राम पंचायतों तक और सहकारी समितियों से लेकर आम जनता की सहभागिता और संवाद में बसती है। भारतीय लोकतंत्र केवल मतदान तक सीमित नहीं है, अपितु यह एक निरंतर प्रक्रिया है जिसमें जन–भागीदारी, संवाद, पारदर्शिता और सहभागिता की आवश्यकता होती है। इसलिए भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में भाषा और सहकारिता दोनों ही जनसामान्य की सहभागिता सुनिश्चित करने के प्रभावशाली माध्यम रहे हैं।

सहकारिताः एक परिचय

सहकारिता का अर्थ है– मिलकर कार्य करना। यह एक ऐसी सामाजिक एवं आर्थिक प्रणाली है जिसमें लोग स्वेच्छा से एकजुट होकर समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्य करते हैं। सहकारी संस्थाओं का संचालन लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित होता है जहां प्रत्येक सदस्य की भागीदारी, मताधिकार और निर्णय प्रक्रिया में सुनिश्चित भूमिका होती है। दूसरे शब्दों में, सहकारिता एक सामाजिक–आर्थिक संगठन प्रणाली है जिसमें व्यक्ति स्वेच्छा से एकत्र होकर सामूहिक प्रयास से अपने आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हितों की पूर्ति करते हैं। सहकारिता न केवल एक आर्थिक संगठनात्मक ढांचा है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समानता और लोकतांत्रिक भागीदारी का एक सशक्त माध्यम भी है। वर्तमान समय में जब वैश्विक स्तर पर असमानताएं बढ़ रही हैं और पूंजीवाद की अंधी दौड़ में कमजोर वर्ग हाशिए पर जा रहा है, सहकारिता की अवधारणा एक न्यायपूर्ण और सहभागी मॉडल के रूप में उभरकर सामने आ रही है। सहकारिता का मूल मंत्र "सभी के लिए एक और एक के लिए सभी" हैं। अंतरराष्ट्रीय सहकारिता दिवस 2025 की थीम 'सहकारिताः लोकतांत्रिक भागीदारी का सशक्त माध्यम' एक वैश्विक अनिवार्यता को भी इंगित करती है।

सहकारिता की अवधारणा की शुरुआत औद्योगिक क्रांति के समय इंग्लैंड में हुई जब श्रमिकों और आम नागरिकों ने आर्थिक असमानताओं के खिलाफ संगठन बनाने शुरू किए। वर्ष 1844 में इंग्लैंड के रोचडेल शहर में बने 'रोचडेल इक्विटेबल पायनियर्स सोसाइटी' को आधुनिक सहकारी आंदोलन का जनक माना जाता है। इस संस्था ने पारदर्शिता, सदस्य हित, गुणवत्ता और मूल्य आधारित व्यापार के सिद्धांतों को अपनाया और आगे चलकर वैश्विक सहकारिता आंदोलन की नींव रखी।

भारत में सहकारिता का प्रवेश औपनिवेशिक काल में हुआ। 1904 में ब्रिटिश सरकार द्वारा सहकारी ऋण समितियों से इसकी औपचारिक शुरुआत हुई। स्वतंत्रता–पश्चात इसे संविधान की समवर्ती सूची में स्थान मिला और पंचवर्षीय योजनाओं ने सहकारिता को व्यापक आधार प्रदान किया। सहकारिता को आर्थिक लोकतंत्र का आधार मानते हुए भारत सरकार ने इसे पंचायती राज की तरह ही विकेन्द्रीकृत शासन का अभिन्न अंग माना है। भारत के सहकारिता आंदोलन की जड़ें देश के सांस्कृतिक और सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में गहराई से समाई हुई हैं, जो समावेशी विकास, सामुदायिक सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास के लिए एक शक्तिशाली साधन के रूप में विकसित हुआ है। आज देश में सहकारिता मंत्रालय की स्थापना और नवीनतम पहलों के माध्यम से सरकार ने एक सहकारिता–संचालित मॉडल को बढ़ावा देने की अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की है जो देश के हर कोने तक पहुंचे, उपेक्षित समुदायों के लिए स्थायी आजीविका और वित्तीय समावेशन की सुविधा प्रदान करे।

सहकारिता, छोटे किसानों, महिला स्वयं–सहायता समूहों, काश्तकार एवं उपभोक्ता समूहों के लिए, सिर्फ एक आर्थिक मॉडल नहीं, अपितु लोकतांत्रिक सशक्तिकरण का प्रमुख अंग है। भारत में सहकारिता ने सामाजिक–आर्थिक समानता के मार्ग को व्यावहारिक रूप से साकार किया है। यह संसाधनों के न्यायपूर्ण वितरण सुनिश्चित करने के साथ ही निर्णय प्रक्रिया में जनभागीदारी को भी मजबूती प्रदान करता है। इस संदर्भ में भारत सरकार का कथन 'सहकार से समृद्धि' केवल एक नारा नहीं, बल्कि विकास का एक व्यावहारिक मॉडल है, जहां सहकारिता के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक सम्मान और लोकतांत्रिक सशक्तिकरण सब एक साथ प्राप्त हो रहे हैं।

इस यात्रा में भारतीय भाषाएं एक पुल की तरह कार्य करती हैं। जब सहकारी समितियां अपनी भाषाई पहचान यथा हिंदी, तमिल, गुजराती अथवा अन्य किसी भारतीय भाषा के माध्यम से संवाद करती हैं, तो वह संवाद केवल सूचना नहीं बनता, बल्कि उस भाषा के जानने वाले व्यक्तियों के बीच विश्वास, सहभागिता व आत्मीयता का निर्माण करता है। अतः यह अपरिहार्य है कि इस विकास यात्रा में भाषा, विशेष रूप से भारतीय भाषाओं को केंद्र में रखा जाए, जिससे सहकारिता हर गाँव–मोहल्ले तक पहुंचे तथा भारत का लोकतंत्र जन.जन की बोलचाल, भाषा एवं सहभागिता से अधिक समृद्ध बने।

भाषाः जनसंचार और सहभागिता की संवाहिका

भारत जैसे बहुभाषी देश में भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक–सांस्कृतिक पहचान और भागीदारी का भी आधार है। भाषा न केवल विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि यह सामाजिक चेतना और जागरूकता को भी आकार देती है। लोकतंत्र में जब तक संवाद जनभाषा में नहीं होता, तब तक सहभागिता केवल औपचारिक रह जाती है। अपनी भाषा में किया

गया संवाद अधिक सहज होता है, अधिक जुड़ाव लाता है और आत्मीयता महसूस कराता है। सहकारी संस्थाओं की सफलता का बड़ा कारण यही है कि उन्होंने स्थानीय भाषाओं में संवाद और सहभागिता को प्राथमिकता दी है। जब सहकारिता संस्थाओं की कार्यप्रणाली, योजनाएं और संचार जनभाषा में होता है, तब ही वह प्रभावशाली और समावेशी बनती है।

देश की सबसे बड़ी और प्रतिष्ठित अमूल डेयरी की बैठकों व प्रशिक्षण में गुजरात की स्थानीय भाषा का उपयोग होता है, जिससे किसान सहजता से जुड़ते हैं। ऐसा ही स्वयं सहायता समूहों के साथ भी है, जहां ग्रामीण भारत में इनकी बैठकों का संचालन प्रायः स्थानीय बोलियों में होता है, जिससे महिलाएं खुलकर इनकी कार्रवाई में भाग लेती हैं। बैंकों की शाखाओं में हिंदी और स्थानीय भाषाओं में कार्य से ग्राहकों का विश्वास बढ़ता है। सहकारिता की मूल भावना ही 'एकजुट होकर कार्य करना' है। इसमें न तो पूंजी का भेद होता है, न ही भाषा या जाति का। यदि कोई सदस्य कम पढ़ा–लिखा है, परंतु यदि संवाद उसकी मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में होता है, तो वह भी संगठन की प्रक्रिया में भाग ले सकता है। इस प्रकार भाषा, सहकारिता को सभी के लिए सुलभ बनाती है।

सहकारिता की सफलता इस पर निर्भर करती है कि वह अपने सदस्यों के साथ कितना प्रभावी संवाद स्थापित कर पाती है। ग्राम स्तरीय सहकारी संस्थाओं में जब स्थानीय भाषा या मातृभाषा का प्रयोग किया जाता है, तो सदस्य अधिक आत्मविश्वास से संवाद करते हैं और संस्थागत गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं। उदाहरण के रूप में महाराष्ट्र की वारणा सहकारी संस्था को देखा जा सकता है, जिसने मराठी भाषा में प्रशिक्षण सामग्री और संवाद के माध्यम से ग्रामीणों को जोड़ने का काम किया है। तमिलनाडु में लिटिल कडाई परियोजना ने तमिल भाषा में स्वयं सहायता समूहों को प्रशिक्षित कर महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया है। देश के साथ विदेशों में भी सहकारिता में भाषायी समावेशिता के व्यावहारिक उदाहरण देखे जा सकते हैं।

अंतरराष्ट्रीय सहकारिता में भाषाई विविधता

विश्व स्तर पर सहकारिता आंदोलन ने भी भाषाई विविधता को मान्यता दी है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित 'अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष' (2012) के दौरान, यह विशेष रूप से रेखांकित किया गया था कि भाषा की भूमिका केवल अनुवाद तक सीमित नहीं, बल्कि यह सहभागिता और आत्मीयता का आधार बनती है। अंतरराष्ट्रीय सहकारी संघ (ICA) का आदर्श वाक्य है– "सहयोग की शक्ति से बेहतर दुनिया की ओर" (Towards a Better World through Cooperation)। यह संस्था दुनिया के अलग–अलग देशों की सहकारी संस्थाओं को एक मंच पर लाती है, जहां भाषाई विविधता को आदान–प्रदान और ज्ञान–साझा का साधन माना जाता है। कनाडा की द्विभाषी सहकारी संस्थाएं (अंग्रेज़ी और फ्रेंच) अपने सदस्यों की भाषाई पहचान को सम्मान देकर समावेशिता सुनिश्चित करती हैं। केन्या की सहकारी क्रेडिट यूनियनें स्थानीय बोली 'किकुयू' और 'स्वाहिली' में वित्तीय साक्षरता अभियान चलाती हैं। लैटिन अमेरिका में स्पेनिश के साथ–साथ स्वदेशी भाषाओं में सहकारिता शिक्षा को प्रोत्साहित किया जा रहा है। यूरोपीय संघ में सहकारी दस्तावेज़ कई भाषाओं में उपलब्ध होते हैं जिससे सीमा–पार सहकारिता को बढ़ावा मिला है।

वैश्विक सहकारी आंदोलन में भाषाई विविधता को बाधा नहीं, बल्कि सहयोग की शक्ति के रूप में देखा जाता है। भाषा वह सेतु है जो विविध सांस्कृतिक और भौगोलिक परिवेश में भी सहकारिता

को फलने–फूलने का अवसर देती है। आज इस वैश्विक मॉडल को भारत में लागू करने का उचित समय व अवसर है।

भाषा, लोकतंत्र और सहकारिता

"जनता की, जनता के लिए, जनता द्वारा सरकार", यह लोकतंत्र का मूलमंत्र है। इस मूलमंत्र का सफल होना तभी संभव है जब जनता को अपनी भाषा में संवाद, समझ और भागीदारी का अवसर मिले। यदि योजनाएं, नीतियां व संस्थाएं जनता की भाषा में संवाद नहीं करतीं, तो लोकतंत्र अधूरा रह जाता है। इसलिए भाषा केवल साहित्य या प्रशासन का विषय नहीं, यह लोकतांत्रिक अधिकार है। जब सहकारिता संस्थाएं क्षेत्रीय भाषाओं में कार्य करती हैं, तब वे लोकतांत्रिक मूल्यों को सशक्त करती हैं।

साथ ही, सहकारिता लोकतंत्र को कई स्तरों, यथा ग्राम सभा स्तर पर निर्णय लेना, महिलाओं एवं कमजोर वर्गों की भागीदारी, वित्तीय पारदर्शिता व उत्तरदायित्व आदि के संबंध में क्रियाशील बनाती है। जब सहकारिता के माध्यम से लोग निर्णय प्रक्रिया में भाग लेते हैं, योजनाएं बनाते हैं, संसाधनों का प्रबंधन करते हैं तो वे लोकतंत्र के सक्रिय अंग बनते हैं। जब यह सब उनकी भाषा में होता है, तो लोकतंत्र केवल संविधान में सीमित नहीं रहता, बल्कि जीवन में घटित होता है। ऐसे में स्थानीय भाषाओं के माध्यम से संवाद को सरल बनाकर सहकारिता आंदोलन को न केवल जनसुलभ बनाया जा सकता है, बल्कि इसे लोकतांत्रिक सशक्तिकरण का आधार भी बनाया जा सकता है।

चुनौतियां और समाधान

हालांकि यह आदर्श स्थिति है, परंतु कुछ चुनौतियां भी हैं, जिनमें डिजिटल उपकरणों का एक–भाषीय होना, अंग्रेज़ी अथवा राजकीय जटिल भाषा का आधिपत्य, क्षेत्रीय भाषाओं में सहकारी प्रशिक्षण सामग्री की कमी आदि प्रमुख हैं। हालांकि, बहुभाषी डिजिटल प्लेटफॉर्म की उपलब्धता, हिंदी व क्षेत्रीय भाषाओं में प्रशिक्षण मॉड्यूल का विकास और सहकारी शिक्षा में भाषा को रणनीतिक तत्व के रूप में शामिल करके इसका समाधान किया जा सकता है। डिजिटल इंडिया के दौर में सहकारी संस्थाओं के डिजिटल प्लेटफॉर्म, मोबाइल ऐप और वेबसाइटें बहुभाषी बनाने से तकनीकी पहुंच और सहभागिता दोनों बढ़ेंगी। डिजिटल भुगतान ऐप यदि स्थानीय भाषा में होंगे तो ग्रामीण क्षेत्रों में भी इनका प्रयोग बढ़ेगा। सहकारी समितियों की वोटिंग, ऋण आवेदन, लाभांश वितरण जैसी प्रक्रियाएं यदि हिंदी व स्थानीय भाषा में हों, तो पारदर्शिता और सहभागिता दोनों में वृद्धि होगी।

भाषा, सहकारिता और लोकतंत्र– तीनों एक–दूसरे के पूरक हैं। यदि संवाद अपनी भाषा में हो, तो संगठन में आत्मीयता बढ़ती है। यदि संगठन सहभागिता आधारित हो, तो लोकतंत्र सशक्त होता है। इन अर्थों में, "भाषा से समृद्ध सहकारिता और सहकारिता से सशक्त लोकतंत्र", यह सूत्र केवल विचार नहीं, बल्कि व्यवहार का भी मार्गदर्शन करता है। जब सहकारिता में संवाद स्थानीय भाषा में होता है, तो उसमें आत्मीयता, समझ और सहभागिता की गहराई जुड़ जाती है। भाषा और सहकारिता, दोनों मिलकर लोकतंत्र की जड़ों को और भी मजबूत करते हैं। इसलिए आज आवश्यकता है कि हम भाषा के सामर्थ्य को केवल साहित्य और कला तक सीमित न रखें, बल्कि इसे लोकतांत्रिक उपक्रमों और सहकारी आंदोलन का केंद्र बनाएं। यही सच्चे अर्थों में समावेशी विकास और भागीदारीपूर्ण लोकतंत्र की दिशा में हमारी सार्थक पहल होगी।

सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन में स्वभाषा और भाषा प्रौद्योगिकी की भूमिका

– संजय चौधरी
हिंदी अधिकारी
केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

एक लोकतंत्र में, सरकार का उद्देश्य सभी नागरिकों का समावेशी विकास करना होता है। इसमें वे लोग भी शामिल हैं जो शिक्षा से वंचित हैं या जो केवल अपनी मातृभाषा ही जानते हैं। इन लोगों को विकास की मुख्यधारा में लाने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी को जनता की भाषा में तैयार किया जाए। केवल तभी हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि कोई भी व्यक्ति केवल भाषा की बाधा के कारण सरकारी लाभों से वंचित न रहे। एक बहुभाषिक और समावेशी दृष्टिकोण ही कल्याणकारी योजनाओं की वास्तविक सफलता सुनिश्चित कर सकता है।

सरकारी योजनाओं का कार्यान्वयन और स्वभाषा

भारत की बहुभाषिकता को भारतीय लोकतंत्र के लिए ताकत भी माना जाता है और चुनौती भी। सरकार जब अपनी बात और जनहित की योजनाओं की जानकारी जनता के सामने उनकी भाषा में रखती है, तभी आम जनता सरकार से जुड़ पाती है। यह जुड़ाव लोकतंत्र की नींव को मजबूत करता है और सरकार को लोगों के प्रति अधिक जवाबदेह बनाता है।

जनता की भलाई के लिए सरकारी योजनाओं का जनता तक पहुंचना महत्वपूर्ण है जिसके लिए भाषा का प्रयोग सटीक, सरल और स्पष्ट होना आवश्यक है। यदि सरकारी दस्तावेज़ों, विज्ञापनों या योजनाओं की जानकारी जटिल या तकनीकी भाषा में दी जाती है, तो इसका लाभ समाज के कमजोर वर्गों तक नहीं पहुंच पाता। उदाहरण के लिए, यदि ग्रामीण इलाकों में कोई योजना लागू की जा रही है, तो वहां की स्थानीय भाषा या बोली में जानकारी देना आवश्यक होता है ताकि लोगों को योजना के लाभ समझ में आए और वे इसका सही तरीके से उपयोग कर सकें। उदाहरण के लिए, प्रधानमंत्री आवास योजना का प्रचार जब हिंदी, अंग्रेजी के अलावा स्थानीय भाषाओं में किया गया, तो ग्रामीण और दूरदराज क्षेत्रों में इसकी प्रभावशीलता बढ़ी। इससे योजना के लाभार्थी सही तरीके से आवेदन कर पाए।

अगर सरकारी योजनाओं को केवल एक या दो भाषाओं में प्रस्तुत किया जाता है, तो इससे कई क्षेत्रों और अन्य भाषायी समुदायों में उन योजनाओं के प्रति उदासीनता की भावना आ जाती है। इस प्रकार, योजनाओं के सफल कार्यान्वयन के लिए विभिन्न भाषाओं में सहज अनुवाद और जानकारी उपलब्ध कराना जरूरी होता है। यहां स्वच्छ भारत मिशन का उदाहरण लिया जा सकता है। इस मिशन की जानकारी तमिल, कन्नड़, तेलुगु, हिंदी, पंजाबी आदि भाषाओं में उपलब्ध कराई गई। इसी का परिणाम है कि शुरुआत में केवल 73 शहरों के साथ आरंभ हुए राष्ट्रीय स्वच्छ

सर्वेक्षण ने 2024–25 तक आते आते भारत के विभिन्न भाषायी प्रदेशों में स्थित 4,589 शहरी स्थानीय निकायों को पुरस्कार योजना में समाहित कर लिया है।

भारत भौगोलिक भिन्नताओं के साथ–साथ भाषायी विविधताओं का देश है। भारत में कई ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्र हैं, जहां लोग अपनी स्थानीय बोलियों और भाषाओं में ही संवाद करते हैं। इन क्षेत्रों में सरकारी योजनाओं का असर तभी बढ़ता है जब उसे स्थानीय भाषा में समझाया जाता है। यह उनकी सोच को सकारात्मक रुप से प्रभावित करता है और योजनाओं के प्रति जागरूकता लाने में मदद करता है। हम सभी जानते हैं कि आधार योजना और जन धन योजना के प्रचार–प्रसार के लिए स्थानीय भाषाओं में शिक्षात्मक वीडियो और होर्डिंग्स का उपयोग किया गया। स्वभाषा के इस प्रयोग ने जनता को इन योजनाओं की उपयोगिताओं के प्रति आश्वस्त किया और लोग इन योजनाओं का सही लाभ उठा सके।

कल्याणकारी योजनाओं के संबंध में समाज के हर वर्ग तक जानकारी का प्रसार होना जरुरी है। आम तौर पर सरकार यह सुनिश्चित करती है कि किसी भी भाषाई समुदाय को योजनाओं के लाभ से वंचित न रखा जाए। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना की सफलता इसका उदाहरण है। योजना की जानकारी का प्रसार कई भाषाओं में किया गया जिससे विभिन्न प्रांतों में स्व–रोजगार को बढ़ावा मिल सका है। इसी प्रकार, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) को कई भाषाओं में उपलब्ध कराना भी सार्थक रहा है जिसके कारण सभी क्षेत्रीय समुदायों को योजना का लाभ मिल रहा है।

योजनाओं के सफल कार्यान्वयन के लिए जरुरी जन जागरूकता लाने में स्वभाषा की सबसे सकारात्मक भूमिका होती है। योजनाओं का कुशल क्रियान्वयन तभी संभव है जब जानकारी को सही और आसानी से समझी जाने वाली भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। स्थानीय भाषाओं में प्रशिक्षण सामग्री और दस्तावेज़ उपलब्ध होने से सरकारी कर्मचारियों और लाभार्थियों की क्षमता में वृद्धि होती है। योजनाओं के लाभ, आवेदन प्रक्रिया, पात्रता, और समय सीमा की जानकारी यदि सरल और सामान्य भाषा में दी जाती है, तो लोग इसे जल्दी समझते हैं और इसका फायदा उठाते हैं।

आयुष्मान भारत योजना या प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के प्रभावी कार्यान्वयन तथा इन योजनाओं की अखिल भारतीय सफलता से सिद्ध होता है कि भारतीय लोकतंत्र में भाषाई विविधता का सम्मान करते हुए योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करना नितांत संभव है। इस योजना का सबसे बड़ा लाभ यह है कि बिना किसी भेदभाव के देश के हर वर्ग को स्वास्थ्य सुविधा मिल रही है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, लगभग 60,000 मरीज प्रतिदिन इस योजना के तहत मुफ्त इलाज पा रहे हैं। आयुष्मान भारत योजना के अंतर्गत अब तक 55 करोड़ से अधिक लोग लाभान्वित हो चुके हैं। देश के 18 राज्यों ने आयुष्मान भारत योजना को अपनी राज्य योजनाओं के साथ जोड़ा है, जिससे यह योजना और अधिक प्रभावी हो गई है।

सरकार की कई योजनाएं विशेष रुप से सुविधाहीन एवं वंचित वर्ग के लिए चलाई जा रही हैं। राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम का उदाहरण लिया जा सकता है। केंद्र सरकार की इस योजना का उद्देश्य देश के वृद्ध, विधवा और विकलांग व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना है। यह योजना राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों के माध्यम से लागू की जाती है। एक अन्य

योजना 'प्रधानमंत्री किसान मानधन योजना' एक स्वैच्छिक और अंशदायी पेंशन योजना है जो छोटे और सीमांत किसानों के लिए है। इसी प्रकार, 'अंत्योदय अन्न योजना' गरीबों को रियायती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराती है। इन योजनाओं के कार्यान्वयन के दौरान विभिन्न भारतीय भाषाओं के प्रयोग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

सरकारी योजनाएं और भाषा प्रौद्योगिकी द्वारा प्रदत्त सुविधाएं

डिजिटल इंडिया के युग में भाषा प्रौद्योगिकी का उपयोग करके सरकारी योजनाओं के सफल कार्यान्वयन को नए आयाम दिए जा सकते हैं। भाषा प्रौद्योगिकी ने ई–गवर्नेंस, ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल सामग्री तैयार करने के लिए बहुभाषी समाधान सुलभ कर दिया है। सरकारी योजनाओं के ब्यौरे को जनता तक पहुंचाने से लेकर ऑनलाइन आवेदन करने तक की प्रक्रिया को भाषा प्रौद्योगिकी सरल से सरलतर बना रही है। घर बैठे बैठे न केवल योजनाओं में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित हो रही है, बल्कि हितार्थियों तक इन योजनाओं के लाभ भी पहुंच रहे हैं।

भारत सरकार के आधिकारिक पोर्टल – डिजिटल इंडिया प्लेटफार्म पर सरकारी योजनाओं के बारे में हिंदी, अंग्रेजी और स्थानीय भाषाओं में जानकारी तथा योजनाओं के स्वरुप में परिवर्तन एवं सुधार आदि की सूचना दी जाती है। भाषा प्रौद्योगिकी के उपयोग से निर्मित ये पोर्टल सुनिश्चित करते हैं कि देश के हर कोने में रहने वाले नागरिक, चाहे वे किसी भी भाषा को बोलते हों, योजनाओं के बारे में सही और पूरी जानकारी प्राप्त कर सकें। पोर्टल की बहुभाषिकता संबंधी इस विशेषता को प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण की तकनीक ने संभव किया है। एनएलपी के नाम से प्रचलित इस तकनीक का उपयोग करके किसी भी भाषा में लिखी गई जानकारी का स्वतः अनुवाद किया जा सकता है।

भाषा प्रौद्योगिकी की आधुनिक तकनीक ने योजनाओं के संदर्भ में सरकार के प्रयासों को प्रभाविता दी है। स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि लाने के लिए भारत सरकार की राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन योजना को एक शानदार पहल माना जाता है। इस मिशन के अंतर्गत सभी नागरिकों के स्वास्थ्य की जानकारी ऑनलाइन दर्ज की जा रही है। साथ ही सभी नागरिकों को विशेष स्वास्थ्य पहचान पत्र (आभा कार्ड) जारी किए गए हैं। लोगों को आवंटित किये गए विशेष पहचान नंबर के जरिए मरीज की सारी जानकारी इलेक्ट्रॉनिक रूप से सुरक्षित रखी जाएगी। आधार कार्ड की तर्ज पर नेशनल डिजिटल हेल्थ मिशन को देशभर में लागू करने में सरकार सफल रही है।

स्पष्ट है कि डेटा के संग्रहण और इसके विश्लेषण के संदर्भ में भाषा प्रौद्योगिकी की चमत्कारिक युक्तियों का प्रयोग करके सरकारी योजनाओं में सुधार करने या इनके बेहतर कार्यान्वयन का अवसर सरकार के पास रहता है। भाषा की ताकत है कि यह सरकारी योजनाओं में लोगों की भागीदारी बढ़ाती है जबकि भाषा प्रौद्योगिकी की पहुंच पारदर्शिता को बढ़ावा देती है। प्रौद्योगिकी जब सरकारी दस्तावेजों, नीतियों और योजनाओं को क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध कराती है, तो नागरिक अपने अधिकारों को बेहतर समझ पाते हैं और सरकार से जवाबदेही की मांग कर सकते हैं। इससे भ्रष्टाचार कम होता है और योजनाओं की बेहतर निगरानी संभव होती है।

सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन की चुनौतियां और भाषा प्रौद्योगिकी के समाधान

अक्सर सरकारी योजनाओं को उन लोगों तक पहुंचाना एक चुनौती होती है जो साक्षर नहीं हैं या

टाइप करने में सहज नहीं हैं। ऐसे लोगों के लिए वॉयस–आधारित सेवाएं बहुत प्रभावी होती हैं। वॉयस कमांड पर चलने वाली सेवाओं यथा हेल्पलाइन या वॉयस–असिस्टेंट की मदद से नागरिक अपनी भाषा में बोलकर योजनाओं के लिए आवेदन कर सकते हैं और जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान देने वाली बात है कि 'उमंग' एवं 'डिजिलॉकर' जैसे मोबाइल ऐप्स अब बहुभाषी इंटरफ़ेस के साथ उपलब्ध हैं, जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगों को सरकारी योजनाओं के साथ जोड़ा जा सकता है।

आज जब भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मोबाइल निर्माता बन गया है तो भारतीय भाषाओं और बोलियों के संदर्भ में भाषा प्रौद्योगिकी की आधुनिक तकनीक का प्रयोग करके मोबाइल ऐप्स को अधिक उपभोक्ता हितैषी बनाना समय की मांग है। यह इसलिए आवश्यक हो गया है क्योंकि सोशल मीडिया, मोबाइल ऐप्स, वेबसाइट्स और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध बहुभाषी सेवाओं ने योजनाओं की पहुंच को व्यापक बनाया है। लेकिन घरेलू महिलाओं, दिहाड़ी मजदूर, श्रमिक वर्ग आदि के लिए सरकारी योजनाओं की भाषा को समझना आसान नहीं होता। ऐसे तमाम लोगों के लिए विशेष मोबाइल ऐप्स बनाए जा सकते हैं जो योजनाओं का स्थानीयकरण करके तकनीकी शब्दावली, कानूनी भाषा और नीतिगत जटिलताओं को सरल और सुलभ भाषा में प्रस्तुत कर सकें।

मोबाइल ऐप्स में बहुभाषी चैटबॉट और वर्चुअल असिस्टेंट की सुविधा देकर इन्हें अधिक प्रभावी बनाया जा रहा है। प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण की मदद से ये ऐप जटिल प्रश्नों के सरल उत्तर दे सकते हैं। स्मार्ट डॉक्यूमेंट प्रोसेसिंग से आवेदन प्रक्रिया सरल हो सकती है। ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकॉग्निशन (ओसीआर) और इंटेलिजेंट फॉर्म फिलिंग से कागजी कार्रवाई को कम करना संभव होगा। आज हम सभी आधार से जुड़ी सेवाओं में भाषा प्रौद्योगिकी का सफल उपयोग होता देख रहे हैं। सरकारी योजनाओं को लागू करने में डिजिटल इंडिया मिशन का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है क्योंकि डिजिटल साक्षरता बढ़ने के साथ सरकारी योजनाओं की पहुंच भी अपने आप बढ़ जाएगी।

जेनरेटिव आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस और भाषा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र ऐसे संभावनापूर्ण क्षेत्र हैं जो स्वभाषा के माध्यम से सरकारी योजनाओं का सफल कार्यान्वयन सुनिश्चित करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। भारत में एक मज़बूत सूचना प्रौद्योगिकी पारिस्थितिकी तंत्र है। यह 250 अरब डॉलर से अधिक का वार्षिक राजस्व उत्पन्न करता है और 60 लाख से अधिक लोगों को रोज़गार प्रदान करता है। एआई कौशल, क्षमताओं और एआई उपयोग नीतियों के मामले में स्टैनफोर्ड एआई रैंकिंग जैसी वैश्विक रैंकिंग में भारत को शीर्ष देशों में रखा गया है। जरुरत है कि जनहित के उद्देश्य से सरकार एआई कौशल और एआई क्षमताओं का सदुपयोग अपने सभी कार्यक्रमों में सुनिश्चित करे।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स से योजनाओं की प्रभावशीलता बढ़ाई जा सकती है जबकि ब्लॉकचेन तकनीक से पारदर्शिता सुनिश्चित हो सकती है। भाषा की समस्या को दूर करते हुए सरकारी योजनाओं के उपयोगकर्ताओं एवं लाभार्थियों के प्रश्नों का उनकी अपनी भाषा में तुरंत जवाब देने में बहुभाषी चैटबॉट और वर्चुअल असिस्टेंट पूरी तरह सक्षम हैं। लेकिन यदि रोबोटिक्स का उपयोग भी सुनिश्चित किया जाए तो परिणाम अधिक उत्साहवर्द्धक हो सकते हैं। जिन क्षेत्रों में लोग इंटरनेट का उपयोग नहीं करते, वहां वॉयस टेक्नोलॉजी के जरिए योजनाओं

की जानकारी दी जा सकती है। इससे सरकार की योजनाओं तक पहुंच आसान हो जाएगी, खासकर ग्रामीण इलाकों में जहां डिजिटल उपकरणों की कमी होती है।

भारत का डिजिटल इंडिया 'भाषिणी' एक लैंग्वेज ट्रांसलेशन प्लेटफॉर्म है जो भारतीय भाषाओं में इंटरनेट और डिजिटल सेवाओं तक आसान पहुंच को सक्षम करने के लिए डिज़ाइन किया गया है, जिसमें वॉयस–आधारित एक्सेस और भारतीय भाषाओं में सामग्री का निर्माण शामिल है। यह सब सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन को गति देने में सहायक हो सकते हैं।

इतना तो निश्चित है कि भाषा प्रौद्योगिकी के तकनीकी समाधान और उन्नत साधनों का व्यापक प्रयोग करके सरकारी योजना से संबंधित किसी भी समस्या का त्वरित निदान किया जा सकता है। इससे नागरिकों को लंबी लाइनों में लगने की परेशानी से तो बचाया ही जा सकता है, दलालों एवं बिचौलियों से सहायता लिए बिना आम लोग योजनाओं का लाभ उठा सकते हैं। पूरी संभावना है कि निकट भविष्य में वर्चुअल रियेलिटी की मदद से आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित तंत्र ही लाभार्थियों के लिए सरकारी योजनाओं से संबंधित सारी औपचारिकताओं को पूरा करेगा तथा उन्हें लाभ दिलाएगा। इसकी उम्मीद भी की जा रही है कि भाषा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नवीन तकनीक के विकास से भारत की बहुभाषिकता और भी समृद्ध होगी।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर, स्वभाषा और भाषा प्रौद्योगिकी का समुचित उपयोग, सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन की पूरी प्रक्रिया के दौरान न केवल योजना के प्रचार को बढ़ावा देता है, बल्कि यह समाज के हर वर्ग तक योजनाओं के लाभ पहुंचाने में भी सहायक सिद्ध होता है। सरकारी योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए स्वभाषा का उपयोग केवल एक विकल्प नहीं बल्कि आवश्यकता है। भारत में सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन के क्षेत्र में स्वभाषा के प्रयोग और भाषा प्रौद्योगिकी के उपयोग से एक नई क्रांति का सूत्रपात संभव है। यह तकनीकी संयोजन सरकारी योजनाओं की औपचारिकताओं को सरल बनाने, बेहतर सेवा देने और नागरिकों को त्वरित लाभ पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। भाषा प्रौद्योगिकी इस दिशा में एक सेतु का कार्य करती है जो सरकार की कल्याणकारी योजनाओं के लोकतंत्रीकरण को संभव बनाती है।

गुजरात के मनीषियों का उत्कृष्ट प्रयास
– हिंदी का गौरवपूर्ण विकास

हिंदी और गुजरात : भाषा एवं संस्कृति का अटूट संगम

– प्रीति अग्रवाल
अध्यक्षा, आईईटीई, अहमदाबाद

भारत की विविध भाषाओं में हिंदी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिंदी के विकास में जहां उत्तर भारत के राज्यों का योगदान रहा है, वहीं गुजरात के मनीषियों का योगदान अत्यंत उल्लेखनीय रहा है। गुजराती और हिंदी दोनों भाषाओं में लेखन करने वाले कई विद्वान हुए हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। उन्होंने अपने–अपने क्षेत्र में कार्य करते हुए हिंदी को लोकप्रिय और समृद्ध बनने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुजरात के संत, राजनेता, धर्म प्रचारक, समाज– सुधारक, स्वतंत्रता सेनानी, साहित्यकार और अनुवादकों ने हिंदी के प्रचार–प्रसार में अद्वितीय भूमिका निभाई।

हिंदी और गुजरात का ऐतिहासिक संबंध

यद्यपि गुजरात की मुख्य भाषा गुजराती है, परन्तु ऐतिहासिक रूप से पंद्रहवीं शताब्दी से ही हिंदी और गुजरात के मध्य सांस्कृतिक व भाषायी संपर्क के प्रमाण मिलते हैं। हिंदी भाषी राजस्थान और मध्यप्रदेश पड़ोसी होने के कारण भी गुजरात में हिंदी का बहुत प्रभाव रहा, वैसे भी हिंदी और गुजराती भाषा में बहुत साम्य है। हिंदी का प्रभाव गुजरात के धार्मिक आंदोलनों, स्वतंत्रता संग्राम और सामाजिक सुधार आंदोलनों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म 1824 में मोरबी (गुजरात) में हुआ था। वे आर्य समाज के संस्थापक थे और वैदिक धर्म की पुनर्स्थापना के लिए आजीवन कार्य करते रहे। उन्होंने हिंदी में 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक प्रसिद्ध ग्रंथ लिखा, जिसमें उन्होंने वेदों और हिन्दू धर्म की वैज्ञानिक व्याख्या की। उन्होंने वेदों की हिंदी में व्याख्या कर आम जन को धर्म की मूल शिक्षाओं से जोड़ा और आर्य समाज के माध्यम से हिंदी को धर्म और समाज सुधार की भाषा बनाया।

महात्मा गांधी

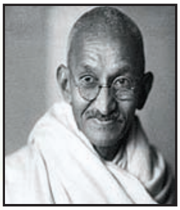

महात्मा गांधी का जन्म 1869 में पोरबंदर, गुजरात में हुआ था। वे भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के सबसे प्रमुख नेता थे। वे हिंदी को भारत की राष्ट्रीय एकता की भाषा मानते थे।

उन्होंने कहा था – "हिंदी देश की जनता की भाषा है और वही राष्ट्रभाषा होनी चाहिए।" उन्होंने 1936 में 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य पूरे देश में सरल हिंदी और उर्दू का प्रचार करना था। आज भी यह हिंदी और उर्दू दोनों भाषाओं के प्रचार में कार्यरत है। गांधीजी अपने लेखों (जैसे हिन्द स्वराज), भाषणों

और आंदोलनों में सरल हिंदी का प्रयोग करते थे, जिससे जनसाधारण तक उनके विचार सरलता से पहुंचते थे। वे यह मानते थे कि शिक्षा, प्रशासन और जनसंपर्क में हिंदी को अपनाना राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है। उनका यह दृष्टिकोण था कि यदि भारत को एक सूत्र में बाँधना है, तो हिंदी ही सबसे उपयुक्त माध्यम हो सकती है।

रविशंकर महाराज

रविशंकर व्यास, जिन्हें रविशंकर महाराज के नाम से जाना जाता है, का जन्म 25 फरवरी 1884 को गुजरात के खेड़ा जिले के राधू गांव में हुआ था। वे गुजरात के प्रसिद्ध गाँधीवादी नेता थे। वे स्वतंत्रता आंदोलन के साथ–साथ ग्राम सेवा और समाज सुधार में अग्रणी रहे और संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग किया। उनका मानना था कि हिंदी के माध्यम से ही जनजागरण संभव है। उन्होंने हिंदी भाषा को ग्राम विकास, शिक्षा और सामाजिक चेतना का माध्यम बनाया। हिंदी को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंचाने में योगदान दिया। वे गाँधीजी के उस दृ ष्टिकोण को अपनाते थे जिसमें हिंदी जनसंवाद की सबसे प्रभावी भाषा मानी गई।

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

श्री के एम मुंशी का जन्म 1887 में गुजरात में हुआ। वे एक स्वतंत्रता सेनानी, संविधान निर्माता, शिक्षाविद और लेखक थे। उन्होंने भारतीय विद्या भवन की स्थापना की और हिंदी को राष्ट्र निर्माण का एक सशक्त साधन माना। उन्होंने हिंदी में कई ऐतिहासिक उपन्यास और लेख लिखे जैसे 'जयसोमनाथ', 'भगवान परशुराम', 'कृष्णावतार' आदि और भारतीय संस्कृति के प्रचार में हिंदी का प्रयोग किया। भारतीय साहित्य परिषद और भारतीय ज्ञानपीठ जैसी संस्थाओं से जुड़े रहकर हिंदी साहित्य के संरक्षण और विकास में योगदान दिया। वे मानते थे कि हिंदी भारत की आत्मा को अभिव्यक्त करने वाली भाषा है। वे भारतीय संस्कृति और इतिहास को हिंदी साहित्य के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाना चाहते थे।

इन्दुलाल याज्ञनिक

श्री इन्दुलाल याज्ञनिक का जन्म गुजरात 22 फरवरी 1892, नडियाड, गुजरात में हुआ। वे एक प्रखर स्वतंत्रता सेनानी, समाज–सुधारक, लेखक, पत्रकार और राजनेता थे। वे हिंदी और गुजराती भाषाओं में समान रूप से पारंगत थे। उन्होंने अपनी पत्रकारिता और भाषणों में हिंदी का प्रयोग कर देशभक्ति और सामाजिक चेतना का प्रचार किया। उनके लेखों में सामाजिक चेतना, राष्ट्रीयता, किसानों की समस्याएं और स्वतंत्रता का स्वर था। उनका दृढ रूप से मानना था कि भारत की बहुभाषी जनता को एक–दूसरे से जोड़ने के लिए हिंदी जैसी सरल और स्वाभाविक भाषा का उपयोग आवश्यक है।

प्रारंभिक दिनों में गांधी जी द्वारा शुरू किए गए हिंदी और अंग्रेज़ी पत्रों 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में उन्होंने लेखन किया। साथ ही उन्होंने गुजराती मासिक पत्रिका 'सारथी' का संपादन किया, जिसमें हिंदी भाषा से संबंधित लेख भी प्रकाशित होते थे। सारथी में वे शिक्षा, महिला

सशक्तिकरण, राष्ट्रभक्ति और भाषा पर केंद्रित लेखों को प्रमुखता देते थे।

उन्होंने गुजरात में किसान आंदोलनों (खेडा सत्याग्रह, बोरसद आंदोलन) का नेतृत्व करते हुए हिंदी भाषा में भाषण देकर व्यापक जनजागरण किया, जिससे उत्तर भारत के किसान संगठनों से भी जुड़ाव बना।

स्वतंत्रता के बाद वे संसद सदस्य बने। उन्होंने संसद में हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने का समर्थन किया और भाषायी विवादों में हिंदी की भूमिका को स्पष्ट रूप से रखा। वे यह मानते थे कि हिंदी जनभाषा है, न कि किसी विशेष वर्ग की भाषा। उनके हिंदी में लेख और भाषण संकलन हैं : भारत की आज़ादी और नव निर्माण, भाषायी एकता, किसान आंदोलन और ग्रामीण भारत, शिक्षा का माध्यमः मातृभाषा और हिंदी, गांधीवादी दृष्टिकोण और आत्मनिर्भरता

प्रमुख स्वामी महाराज

गुजरात की भूमि बहुत विशाल संत समाज की पावन भूमि रही है, अलग अलग पंथ के संतों ने अपने धार्मिक प्रवचन और विचार गुजराती के साथ साथ हिंदी में भी दिए जिससे हिंदी के संवर्धन में बहुत वेग आया। विशेष रूप से स्वामीनारायण सम्प्रदाय के अनेक संतों ने हिंदी में प्रवचन और धार्मिक पुस्तकें तैयार कीं, जिससे हिंदी भाषी राज्यों में भी इस संप्रदाय का विस्तार हुआ।

हिंदी साहित्य में योगदान

सूफी साहित्यः

गुजरात के सूफ़ी कवियों ने हिन्दवी, गूजरी–हिंदी और दकनी भाषा में सुंदर साहित्य का सृजन किया है, जो हिंदी साहित्य का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

ब्रजभाषा साहित्यः

सदियों से गुजरात के वैष्णव कवियों ने ब्रजभाषा में भी रचनाएँ की हैं। जिससे न केवल ब्रजभाषा बल्कि हिंदी भाषी लोगों को उनकी रचनाओं का बहुत लाभ मिला।

लोक साहित्यः

गुजरात के लोक साहित्य में भी हिंदी का प्रभाव देखा जा सकता है। गुजरात के विद्वानों ने हिंदी भाषा और साहित्य को विभिन्न तरीकों से समृद्ध किया है। इनके योगदानों ने हिंदी साहित्य को एक नई दिशा दी है और इसे और अधिक व्यापक बनाया है। कई गुजराती साहित्यकारों ने हिंदी भाषा में लेखन किया है या उनके गुजराती साहित्य का हिंदी में अनुवाद हुआ है। इनमें कुछ साहित्यकार ऐसे भी हैं जिन्होंने स्वयं हिंदी में रचना की, जबकि कुछ की रचनाएं हिंदी में इतनी लोकप्रिय हुईं कि वे हिंदी पाठकों के बीच भी प्रसिद्ध हो गए। गुजराती साहित्यकारों का हिंदी में योगदान केवल अनुवाद तक सीमित नहीं है, बल्कि उन्होंने स्वयं हिंदी में लेखन कर साहित्यिक समृद्धि में भागीदारी निभाई है। यह साहित्यिक जुड़ाव राष्ट्र की भाषायी एकता और सांस्कृतिक आदान–प्रदान का प्रमाण है।

निम्नलिखित प्रमुख गुजराती साहित्यकारों ने हिंदी भाषा में रचनात्मक योगदान दियाः

नर्मदाशंकर दवे 'नर्मद' (साहित्यकार) (1833–1886)

नर्मद (1833–1886) गुजरात के पहले आधुनिक कवि और विचारक माने जाते हैं। उन्होंने सामाजिक सुधारों और राष्ट्रभक्ति का स्वर गुजराती साहित्य में लाया। यद्यपि वे मूलतः गुजराती कवि थे, लेकिन वे हिंदी को भारत की संपर्क भाषा मानते थे। उन्होंने कई लेखों में हिंदी की वकालत की और इसे राष्ट्रीय एकता का सेतु बताया। वे हिंदी को राष्ट्र की आवश्यकता मानते थे और उसके प्रचार के पक्षधर थे।

झवेरचंद मेघाणी

'लोककवि' के नाम से प्रसिद्ध, झवेरचंद मेघाणी ने गुजरात की लोककथाओं और लोकगीतों को संग्रहित किया। उनकी रचनाएँ जैसे 'સોનાનાં તો ડુંગરિયાં'(सोनाने तो डूंगरिया) का हिंदी में अनुवाद हुआ और बहुत लोकप्रिय हुआ। उन्होंने गांधीजी के अनुरोध पर भी हिंदी में कुछ लेखन किया। उनकी गुजराती से हिंदी में अनूदित प्रमुख कृतियाँ हैं: गुजरात की लोकगाथाएं, सोनाने तो डूंगरिया (अनुवादः सोने के पहाड़), राणा की बात, भारत के वीर पुत्र, भावगीतों का संकलन (गुजरात के लोकगीतों का हिंदी अनुवाद) मेघाणी की रचनाएं भारतीय संस्कृति, वीरता और लोक परंपराओं का चित्र प्रस्तुत करती हैं।

उमाशंकर जोशी

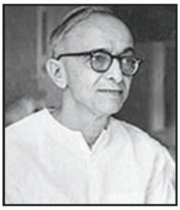

उमाशंकर जोशी जी ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कवि और लेखक हैं। यद्यपि उनका मुख्य कार्य गुजराती में था, उन्होंने हिंदी साहित्य के लिए अनुवाद और संवाद की दिशा में योगदान दिया। उनकी कविताओं का हिंदी में अनुवाद हुआ और वह हिंदी जगत में भी पढ़े गए। हिंदी में अनूदित उनके काव्य संकलन हैं: आदित्य स्तुति, कविता के स्वर, प्रार्थना, (कविताओं का संग्रह), अनुभूति, जन्मभूमि (देशप्रेम पर आधारित कविता संकलन) उमाशंकर जोशी की कविताएं दर्शन, राष्ट्रप्रेम, और मानवता के विषयों को छूती हैं।

काका कालेलकर

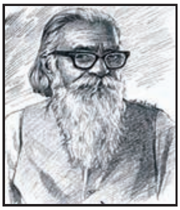

काका कालेलकर (पूरा नामः डॉ. धर्मानंद दामोदर कालेलकर) एक प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी, समाज सुधारक, शिक्षाविद् और बहुभाषी लेखक थे। मूल रूप से गुजराती भाषी होते हुए भी उन्होंने हिंदी भाषा में अत्यंत सुंदर, विचारपूर्ण और प्रभावशाली लेखन किया। उन्हें 1965 में उनके निबंध संग्रह "जीवन–व्यवस्था" के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। काका कालेलकर ने अपने हिंदी लेखन के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना, गांधीवाद, संस्कृति, यात्रा और शिक्षा जैसे विषयों पर बहुत कुछ लिखा। उनकी प्रमुख हिंदी रचनाओं की सूची निम्नलिखित हैः

पुनश्च, जैसे–जैसे दिन बीतते गए, साधना के पथ पर, आत्मगाथा, समाज और संस्कृति पर निबंध, पत्र–साहित्य (गांधीजी और अन्य महापुरुषों से पत्राचार)–उनके कई हिंदी पत्र गांधीजी, नेहरू, विनोबा भावे आदि को लिखे गए पत्रों के संकलन के रूप में संग्रहित हैं। यह पत्र–साहित्य भी हिंदी गद्य का मूल्यवान हिस्सा माना जाता है।

काका कालेलकर की हिंदी शैली सरल, आत्मीय, दार्शनिक और भावनात्मक है। वे गूढ़ विषयों को भी सहज भाषा में प्रस्तुत करते थे। उनकी रचनाएँ हिंदी साहित्य को गंभीरता, गरिमा और दिशा प्रदान करती हैं। हिंदी में उनके योगदान को गहराई से सराहा गया है और यह आज भी प्रासंगिक है।

नगीनदास संघवी

राजनीतिक विश्लेषक, लेखक और प्रोफेसर रहे हैं। उन्होंने हिंदी अखबारों और पत्रिकाओं में निबंध, लेख और स्तंभ लिखे। गुजराती के साथ–साथ हिंदी में भी पत्रकारिता की। उनके हिंदी लेख और स्तंभ (पुस्तक रूप में संकलित) हैं: गुजरात का सामाजिक परिवर्तन, भारतीय राजनीति की दशा और दिशा, महात्मा गांधी: विचार और व्यवहार, वे हिंदी अखबारों और पत्रिकाओं में राजनीतिक विश्लेषण और समसामयिक विषयों पर लिखते थे।

दिनकर जोशी

दिनकर जोशी गुजरात के प्रसिद्ध उपन्यासकार, जीवनी लेखक और निबंधकार हैं। वे गुजराती के साथ–साथ हिंदी में भी साहित्य लेखन करते रहे। उन्होंने **महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद, रामकृष्ण परमहंस, सुभाषचंद्र बोस** जैसे महापुरुषों पर **आधारित जीवनियाँ हिंदी में भी लिखीं** और अनेक **ऐतिहासिक उपन्यासों** का हिंदी में रूपांतरण किया। उन्होंने इतिहास और संस्कृति को आधार बनाकर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। उनकी हिंदी लेखनी ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित, शोधपरक, सरल और रोचक होती है। जिससे हिंदी पाठक उनसे जुड़ पाते हैं। हिंदी में उनकी रचनाएँ हैं : महात्मा गांधी: एक जीवनगाथा, स्वामी विवेकानंद: ओजस्वी संन्यासी, सुभाषचंद्र बोस: देशनायक, रामकृष्ण परमहंस: जीवन और दर्शन, सरदार पटेल: लौह पुरुष, मीरा: प्रेम और भक्ति की देवी, कबीर: स्वर और संदेश, श्रीकृष्ण के 108 नाम (धार्मिक विचार आधारित रचना)।

डॉ. रघुवीर चौधरी

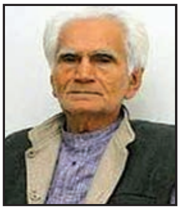

वे एक प्रसिद्ध गुजराती लेखक और ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता थे। उन्होंने हिंदी में भी लिखा और हिंदी साहित्य को समृद्ध किया, इनके द्वारा रचित एक उपन्यास उपरवास कथात्रयी के लिये उन्हें सन् 1977 में साहित्य अकादमी पुरस्कार (गुजराती) से सम्मानित किया गया। राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने उन्हें 2015 के लिए 51वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया। उनकी अब तक 80 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

पद्मश्री डॉ. भोलाभाई पटेल

पद्मश्री डॉ. भोलाभाई पटेल एक प्रसिद्ध गुजराती लेखक और शिक्षाविद थे। उन्होंने हिंदी सहित अनेक भाषाओं का अध्यापन किया और विभिन्न भाषाओं के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया। उन्होंने व्यापक अनुवाद किया और निबंध एवं यात्रा वृत्तांत लिखे और हिंदी साहित्य में योगदान दिया। उन्होंने 52 से ज़्यादा किताबें प्रकाशित की थीं। उन्होंने उमाशंकर जोशी की काव्य पुस्तकों प्राचीन (1968) और निशिथ (1968) का हिंदी में अनुवाद किया साथ ही अन्य कई भाषाओं में विभिन्न कृतियों का अनुवाद कार्य किया।

हरिन्द्र दवे

हरिन्द्र दवे सुप्रसिद्ध पत्रकार, लेखक और निबंधकार थे। उन्होंने हिंदी में कई लेख, व्यंग्य और सामाजिक विषयों पर निबंध लिखे। उनकी भाषा में ताजगी और सोचने की क्षमता थी, जो हिंदी पाठकों को भी पसंद आई। हिंदी में साहित्यिक लेखन कर इन्होंने **भाषायी सेतु का निर्माण** किया। उनकी हिंदी में रचनाएँ: दहलीज़ पर दीप (निबंध संकलन), सामाजिक झरोखे, वर्तमान का व्यंग्य, बोलती हुई चुप्पी (लेखों का संग्रह) उन्हें अपने कविता संग्रह हयाती के लिए 1978 में साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। उन्हें 1982 में रणजीतराम सुवर्ण चंद्रक, कबीर पुरस्कार (मध्य प्रदेश सरकार से), गुजराती साहित्य परिषद पुरस्कार और पत्रकारिता के लिए गोयनका पुरस्कार भी मिला।

श्यामल भट्ट

श्यामल भट्ट विशेषकर सामाजिक मुद्दों पर कुछ कहानियाँ और लेख हिंदी में भी लिखे। गुजराती और हिंदी दोनों में लेखन कर उन्होंने भाषायी सेतु की भूमिका निभाई। उन्होंने हिंदी को केवल संवाद की भाषा नहीं, बल्कि सृजन की भाषा भी बनाया। इनके लेखन में भारतीय मूल्य और संस्कारों की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। हिंदी में कहानियाँ/लेखः सामाजिक रिश्तों की पहचान, मध्यम वर्ग की चुनौतियां, व्यक्तित्व और समाज उनकी हिंदी रचनाएं सामाजिक जीवन, पारिवारिक रिश्तों और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित होती हैं।

अनुवादकों और शिक्षाविदों का योगदान

हिंदी के संवर्धन में गुजरात के अनुवादकों और शिक्षाविदों का योगदान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। झवेरचंद मेघाणी की लोककथाएं, पन्नालाल पटेल के *उपन्यास*, '*सारसविलाप*', '*मनवंतर*' जैसी कई गुजराती कृतियाँ हिंदी में अनूदित हुईं। गुजरात के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में हिंदी विभाग की स्थापना की गई जिससे हिंदी शोध और पठन–पाठन को बल मिला तथा हिंदी को उच्च शिक्षा, प्रतियोगिता परीक्षाओं और प्रशासनिक कार्यों की भाषा के रूप में प्रस्तुत किया गया।

गुजरात विद्यापीठ जैसे संस्थानों ने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वहां के विद्वानों ने हिंदी में लेखन, शिक्षण और अनुसंधान में योगदान दिया है। गुजरात विश्वविद्यालय, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय आदि में हिंदी विभाग सक्रिय रूप से कार्यरत हैं।

सिनेमा और रंगमंच का योगदान

गुजराती कलाकारों, लेखकों और निर्देशकों ने हिंदी सिनेमा और थिएटर में हिंदी भाषा के प्रचार में सहायता की। संजीव कुमार, परेश रावल, बमन ईरानी इत्यादि जैसे कलाकारों तथा तारक मेहता का उल्टा चश्मा, खिचड़ी, सास भी कभी बहु थी जैसे सीरियलों ने हिंदी को मंच, सिनेमा और टीवी के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाया।

निष्कर्ष

हिंदी के प्रचार–प्रसार में गुजरात के मनीषियों का योगदान केवल भाषायी नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक एकता और सामाजिक सुधार के स्तर पर भी अत्यंत मूल्यवान और बहुआयामी रहा है। चाहे वह गांधीजी की राष्ट्रभाषा की कल्पना हो, दयानंद सरस्वती का धार्मिक जागरण हो, मुंशीजी का साहित्य सृजन हो या आधुनिक साहित्यकारों और अनुवादकों का योगदान – सभी ने हिंदी को एक जीवंत, सशक्त और जनप्रिय भाषा बनाने में सहयोग दिया है। राजनीति, धर्म, साहित्य और शिक्षा – इन सभी क्षेत्रों में गुजराती महानुभावों ने हिंदी को राष्ट्र की आवाज़ बनाने में भूमिका तथा हिंदी को भारत की आत्मा से जोड़ने का कार्य किया। गुजरात की भूमि ने हिंदी भाषा को केवल स्वीकार ही नहीं किया, बल्कि उसे सम्मान, विस्तार और विकास भी दिया।

हमारे वर्तमान यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, गुजराती भाषी होते हुए भी राष्ट्र एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी में संवाद करते हैं, जिससे हिंदी अब वैश्विक मंच पर सुनाई देने लगी है। हमारे माननीय गृह मंत्री श्री अमित शाह भी गुजराती होते हुए भी देश विदेश के मंचों से हिंदी में ही अपने विचार रखते हैं। गुजरात के मनीषियों का योगदान यह प्रमाणित करता है कि हिंदी सिर्फ उत्तर भारत की नहीं, समस्त राष्ट्र की भाषा है और गुजरात इसका सशक्त स्तंभ है।

संदर्भ

1 गांधी, मो. "हिन्द स्वराज", नवजीवन प्रकाशन

2 सत्यार्थ प्रकाश – स्वामी दयानंद सरस्वती

3 भारतीय साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल

4 हिंदी का सामान्य इतिहास – डॉ. नामवर सिंह

5 गुजरात विश्वविद्यालय हिंदी विभाग की वार्षिक रिपोर्ट

6 गुजराती से हिंदी में अनूदित कृतियाँ – साहित्य अकादमी प्रकाशन

7 इन्टरनेट की विभिन्न वेबसाइट

गांधीनगर की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत

– पद्मा कुलकर्णी
सहायक प्रबंधक (राजभाषा),
राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लिमिटेड, मुंबई

गुजरात की सोची–समझी योजना के तहत बसी राजधानी गांधीनगर, एक ऐसा शहर है जो शहरी परिष्कार को शांति और प्राकृतिक सौंदर्य के गहन एहसास के साथ बखूबी जोड़ता है। इसके चौड़े, पेड़ों से घिरे रास्ते, बारीकी से बनाए गए पार्क और हरे–भरे बगीचे एक शांत और सुकून भरे माहौल का एहसास कराते हैं। साबरमती नदी के तट पर खूबसूरती से बसा गांधीनगर, सिर्फ़ गुजरात का राजनीतिक केंद्र ही नहीं है–यह संस्कृति, अध्यात्म और प्रकृति का एक समृद्ध केंद्र है। गांधीनगर को चंडीगढ़ के बाद भारत का दूसरा नियोजित शहर माना जाता है। इसे 'हरित नगर' (ग्रीन सीटी) कहा जाता है। सचिवालय और मंत्रियों के निवास भी यहाँ पर हैं। साबरमती नदी के पश्चिमी तट पर स्थित गुजरात की राजधानी गांधीनगर का नाम राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नाम पर रखा गया है।

यह शहर हर तरह के यात्रियों के लिए एक स्वर्ग है। इतिहास प्रेमी इसके अतीत में खो सकते हैं, जबकि प्रकृति प्रेमी इसके हरे–भरे परिदृश्यों में डूब सकते हैं। आध्यात्मिक यात्रा पर निकले लोगों के लिए, गांधीनगर शांति का केंद्र है और जिज्ञासु यात्रियों के लिए, कला और स्थानीय जीवन का समृद्ध ताना–बाना हर मोड़ पर खुलता है।

कला, संस्कृति और विरासत का ताना–बाना गांधीनगर एक जीवंत सांस्कृतिक केंद्र है जहां परंपराओं का बड़े उत्साह से पालन किया जाता है। शहर की समृद्ध विरासत विभिन्न त्योहारों, पारंपरिक कला रूपों और कुशल कारीगरी के माध्यम से प्रदर्शित होती है।

गुजरात अपने पारंपरिक वस्त्रों और हस्तशिल्प के लिए प्रसिद्ध है और पटोला साड़ियाँ निस्संदेह इसका मुकुटमणि हैं। पारंपरिक रूप से पाटन में बुनी जाने वाली ये शानदार हाथ से बुनी रेशमी साड़ियाँ, अपने पैटर्न और जीवंत, सममित डिज़ाइनों के साथ, गांधीनगर के स्थानीय बाज़ारों में उपलब्ध हैं। इन महंगी और जटिल साड़ियों में से एक खरीदना एक कलाकृति में निवेश करने जैसा है। यह राज्य बांधनी (टाई–डाई), सिल्क साड़ियों और जटिल कच्छ कढ़ाई के लिए भी प्रसिद्ध है। ये अनूठी और पारंपरिक वस्तुएं उत्कृष्ट स्मृति चिन्ह और उपहार हैं, जो गुजरात की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को दर्शाती हैं। यहां की कढ़ाई और शीशे के काम वाली पारंपरिक घाघरा–चोली,

ऑक्सीकृत धातु और चाँदी से बने गुजराती सामान और आभूषण, बांधनी, पटोला साड़ियाँ और कढ़ाई वाले जूते–चप्पल बहुत प्रसिद्ध हैं। इस क्षेत्र के कुशल कारीगर विभिन्न प्रकार के पारंपरिक हस्तशिल्प तैयार करते हैं जो सुंदर और उपयोगी दोनों हैं। जटिल लकड़ी के हस्तशिल्प, नाजुक मनके और हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तन स्थानीय बाज़ारों में मिल जाते हैं, जो उन्हें शहर की कलात्मक विरासत का सार समेटे हुए एक आदर्श स्मृति चिन्ह बनाते हैं।

गांधीनगर का त्यौहारी कैलेंडर ऐसे आयोजनों से भरा पड़ा है जो इसकी विविध और जीवंत संस्कृति को दर्शाते हैं। दिवाली की जगमगाती रोशनी से लेकर होली की रंगीन धूम–धाम तक, यह शहर ऊर्जा और सांप्रदायिक उल्लास से गुलज़ार रहता है। नवरात्रि सबसे ज़्यादा मनाया जाने वाला महत्वपूर्ण त्यौहार है, जो स्थानीय लोगों और पर्यटकों को नृत्य, संगीत और भक्ति के साझा उत्सव में एकजुट करता है और नौ दिन तक चलने वाला एक शानदार आयोजन है, जिसमें पूरा शहर सचमुच जीवंत हो उठता है। इस दौरान, वातावरण पारंपरिक लोक संगीत की लयबद्ध धुनों से गूंज उठता है और लोग मनमोहक गरबा और ऊर्जावान दांडिया रास नृत्य करने के लिए एक साथ आते हैं। रास एक ऐसा नृत्य है जो बेहद रंगीन और साथ ही ऊर्जावान होता है और इसमें भाव, आँखों का संपर्क, लय और शारीरिक हाव–भाव बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन जीवंत समारोहों में भाग लेने से गुजरात की उत्सवी भावना की एक सच्ची झलक मिलती है। त्योहारों के अलावा, ज़िले के कारीगर अपने जटिल हस्तशिल्प के लिए भी प्रसिद्ध हैं, जो पर्यटकों के लिए लोकप्रिय स्मृति चिन्ह हैं। इन शिल्पों में सुंदर वस्त्र, लकड़ी की बारीक कलाकृतियाँ और रंग–बिरंगे मनकों की कारीगरी शामिल है, जो सदियों पुरानी कलात्मक परंपरा को दर्शाती है।

गुजरात साहित्य अकादमी भवन गांधीनगर के साहित्यिक जीवन की आधारशिला है। पारंपरिक भारतीय डिज़ाइन से प्रेरित यह वास्तुशिल्पीय चमत्कार सिर्फ़ एक इमारत नहीं है; यह साहित्यिक और कलात्मक अभिव्यक्ति का एक गतिशील केंद्र है। साहित्य अकादमी भवन में नियमित रूप से साहित्यिक सम्मेलन और सेमिनार कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, जहां लेखक, कवि और विद्वान साहित्य पर चर्चा करने, विचारों का आदान–प्रदान करने और समकालीन मुद्दों पर बहस करने के लिए एकत्र होते हैं। यह लेखन की विभिन्न विधाओं पर कार्यशालाएं और प्रदर्शनियां आयोजित करके तथा स्थापित और उभरते कलाकारों की कृतियों को प्रदर्शनियों के माध्यम से नई प्रतिभाओं को पोषित करने के लिए एक मंच के रूप में कार्य करता है। भाषा और संस्कृति के संवर्धन हेतु साहित्यिक गतिविधियों के लिए एक औपचारिक मंच प्रदान करके, अकादमी गुजराती भाषा और इसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह संस्थान एक जीवंत साहित्यिक वातावरण बनाने में सहायक है तथा यह सुनिश्चित करता है कि शहर न केवल एक राजनीतिक राजधानी बने, बल्कि एक सांस्कृतिक राजधानी भी बने।

गुजराती साहित्यिक परंपरा की निरंतरता को ध्यान में रखते हुए गांधीनगर व्यापक गुजराती साहित्यिक परिदृश्य का एक अभिन्न अंग बना है। शहर के लेखक और विचारक एक समृद्ध परंपरा से प्रेरणा लेते हैं जिसमें विविध विधाएँ शामिल हैं: गुजराती कविता का इतिहास बहुत समृद्ध है, नरसिंह मेहता के मध्ययुगीन भक्ति छंदों से लेकर आज के आधुनिक, प्रयोगात्मक रूपों तक। उपन्यास और लघु कथाएँ कथा कथन की परंपरा यहां बहुत मजबूत है, गोवर्धनराम त्रिपाठी और के.एम. मुंशी जैसे प्रसिद्ध उपन्यासकारों ने लेखकों की नई पीढ़ी के लिए आधार तैयार किया है।

गुजराती नाटककारों और निबंधकारों ने भी सामाजिक मुद्दों, दार्शनिक विचारों और ऐतिहासिक

घटनाओं का पता लगाने के लिए अपने कार्यों का उपयोग करते हुए महत्वपूर्ण योगदान दिया है। गांधीनगर का साहित्यिक समुदाय इस विरासत को जारी रखता है तथा गुजरात के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक हृदय से जुड़े रहते हुए समकालीन विषयों की खोज के लिए अपने आधुनिक परिवेश का उपयोग करता है।

विविध आवाज़ों के लिए एक मंच को बढ़ावा देने के लिए यह शहर साहित्यिक अभिव्यक्ति के लिए एक उपजाऊ भूमि है, जो अनुभवी लेखकों और महत्वाकांक्षी लेखकों, दोनों के लिए अवसर प्रदान करता है। गुजरात साहित्य अकादमी जैसी संस्थाओं की उपस्थिति यह सुनिश्चित करती है कि नई आवाज़ों को सुनने का अवसर मिले। यह सहयोगी वातावरण उपन्यासों और नाटकों से लेकर अकादमिक शोध और आलोचना तक, रचनात्मक कार्यों के निरंतर प्रवाह को प्रोत्साहित करता है।

इसके अलावा, गांधीनगर का साहित्यिक परिदृश्य केवल गुजराती तक ही सीमित नहीं है। यह विविध भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टिकोण को समेटे हुए है। हिंदी पखवाड़ा (हिंदी पखवाड़ा) जैसे आयोजन बड़े उत्साह के साथ मनाए जाते हैं, जिनमें कहानी लेखन और निबंध प्रतियोगिताओं जैसी गतिविधियाँ शामिल होती हैं जो हिंदी भाषा और उसके साहित्य को बढ़ावा देती हैं।

गांधीनगर एक ऐसा गंतव्य है जो सचमुच एक गहन और समृद्ध अनुभव प्रदान करता है। चाहे आप अक्षरधाम मंदिर की स्थापत्य कला की भव्यता का आनंद ले रहे हों, सरिता उद्यान की हरी–भरी शांति में शांति पा रहे हों, या आधुनिक दांडी कुटीर संग्रहालय में इतिहास की गहराई में उतर रहे हों, यह शहर अतीत और वर्तमान का एक आदर्श मिश्रण प्रस्तुत करता है। यह एक ऐसी जगह है जहां आप समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं को देख सकते हैं, स्थानीय कलात्मकता की बारीकियों पर अचंभित हो सकते हैं और प्रकृति की शांति का आनंद ले सकते हैं–यह सब एक ही मनोरम और खूबसूरती से नियोजित शहर में। गांधीनगर भारत का सबसे हरा–भरा शहर होने के साथ–साथ अडालज बावड़ी जैसे ऐतिहासिक स्थलों के लिए भी प्रसिद्ध है। यह अपनी सुनियोजित संरचना, स्वच्छ पर्यावरण और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के लिए जाना जाता है।

गांधीनगर की साहित्यिक विरासत एक सुनियोजित आधुनिक शहर के रूप में इसकी पहचान और गुजरात की प्राचीन साहित्यिक परंपराओं में इसकी गहरी जड़ों का एक आकर्षक संश्लेषण है। साहित्यिक केंद्रों के इतिहास वाले पुराने शहरों के विपरीत, गांधीनगर के साहित्यिक परिदृश्य को जानबूझकर विकसित किया गया है, मुख्यतः सांस्कृतिक आधार के रूप में कार्य करने वाली प्रमुख संस्थाओं की स्थापना के माध्यम से।

डॉ॰ द्वारिका प्रसाद सक्सेना के अनुसार सर्वप्रथम देवनागरी लिपि का प्रयोग गुजरात के नरेश जयभट्ट के शिलालेख में मिलता है। आठवीं शताब्दी में चित्रकूट, नवीं में बड़ौदा के ध्रुवराज ने भी अपने राज्यादेशों में इस लिपि का उपयोग किया हैं। देश के अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग भाषाएं विकसित हुईं लेकिन हिंदी सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। देवनागरी लिपि बहुत महत्वपूर्ण हैं और इसमें बहुत समृद्ध साहित्य की रचना भी हुई है। राष्ट्र भाषा हिंदी सम्पूर्ण देश में सांस्कृतिक और भावात्मक एकता स्थापित करने का प्रमुख साधन है। भारत का परिपक्व लोकतंत्र, प्राचीन सभ्यता, समृद्ध संस्कृति तथा अनूठा संविधान विश्व भर में एक उच्च स्थान रखता है, उसी तरह भारत की गरिमा एवं गौरव की प्रतीक राष्ट्र भाषा हिंदी को हर कीमत पर विकसित करना हमारी प्राथमिकता होनी ही चाहिए। हमारा देश संस्कृति से जुड़ा हुआ है। भारत बहुत प्राचीन देश है। हमारी भौगोलिक स्थिति कश्मीर से कन्याकुमारी तक, गुजरात से अरुणाचल तक अलग अलग संस्कृति में भी एकता का दर्शन होता है।

स्वामीनारायण संप्रदाय द्वारा संचालित अक्षरधाम मंदिर यहाँ का मुख्य आकर्षण है। गांधीनगर का अक्षरधाम मंदिर भारत के सबसे बड़े मंदिरों में से एक है, और यह एक प्रमुख तीर्थ स्थल हैं। स्वामीनारायण को समर्पित यह मंदिर समकालीन वास्तुकला और शैली का सबसे अच्छा उदाहरण है। हर साल 20 लाख से अधिक लोग इस मंदिर में आते है। मंदिर के प्रमुख आकर्षण स्वामीनारायण की 10 मंजिल लंबी सुनहरी मूर्ति है। इस मंदिर का उद्घाटन 30 अक्टूबर 1992 को किया गया था। अक्षरधाम मंदिर 23 एकड़ परिसर के केंद्र में स्थित है, जो राजस्थान से 6,000 मीट्रिक टन गुलाबी बलुआ पत्थर से बनाया गया है। अक्षरधाम मंदिर का मुख्य परिसर 108 फीट ऊंचा है, 131 फीट चौड़ा और 240 फीट लंबा है। अक्षरधाम गांधीनगर, भारत के गुजरात राज्य के सबसे बड़े मंदिरों में से एक है। यह मंदिर परिसर भक्ति, कला, वास्तुकला, शिक्षा, प्रदर्शनियों और अनुसंधान को एक ही स्थान पर समेटे हुए है।

यहाँ के प्रमुख दर्शनीय स्थल अदालज, राधेजा, दभोदा आदि हैं। ज़िले के रूपल गाँव में मनाया जाने वाला पल्ली पर्व बड़ी संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करता है। यहां कई आकर्षित स्थल है जैसे टीपू सुल्तान पैलेस, जवाहरलाल नेहरू तारामंडल, सी. कब्बन पार्क और धर्मराय स्वामी मंदिर, जिनके कारण गांधी नगर की संपत्तियां अत्यधिक मूल्यवान हैं।

एक और आकर्षण मकर संक्रांति पर आयोजित होने वाला एक शानदार आयोजन, अंतरराष्ट्रीय पतंग महोत्सव है। आसमान एक जीवंत कैनवास में बदल जाता है जब हर आकार और आकृति की पतंगें ऊपर उड़ती हैं और दुनिया भर से प्रतिभागियों और दर्शकों को आकर्षित करती हैं। यह जीवंत कार्निवल का माहौल सचमुच शहर के उत्साहपूर्ण चरित्र को दर्शाता है। गांधीनगर में मनाए जाने वाला यह त्यौहार, जिसे उत्तरायण भी कहते है, पतंग उड़ाने का त्यौहार है जो प्रतिवर्ष जनवरी में मनाया जाता है। गुजराती नव वर्ष, दिवाली और होली गांधीनगर के लोगों द्वारा बड़े उत्साह और धूमधाम से मनाई जाती है। गुजरात स्थापना दिवस भी गांधीनगर में एक उत्सव की तरह मनाया जाता है। यह हर साल 1 मई को मनाया जाता है। इस दिन सचिवालय और विधानसभा के आसपास का क्षेत्र और महात्मा मंदिर तक का पूरा क्षेत्र रोशनी से जगमगा उठता है। सर्दियों के दौरान वसंत उत्सव मनाया जाता है।

गुजरात की राजधानी होने के नाते, गांधीनगर की योजना बहुत ही बारीकी से बनाई गई है, जहां चौड़ी सड़कें, हरियाली और शांत वातावरण है। शहर का शांत स्वभाव और सुव्यवस्थित लेआउट इसे उन लोगों के लिए आदर्श बनाता है जो एक सुकून भरे, परिवार के अनुकूल वातावरण की तलाश में हैं। यह प्राकृतिक सुंदरता के साथ–साथ सांस्कृतिक और धार्मिक आकर्षणों का एक बेहतरीन मिश्रण प्रस्तुत करता है।

"गुजरात इंटरनेशनल फाइनेंस टेक–सिटी" (गिफ्ट) है। "गुजरात" शब्द पश्चिमी भारतीय राज्य को संदर्भित करता है जहां यह शहर स्थित है।

गुजरात राज्य की राजधानी गांधीनगर अपने आतिथ्य और पर्यटन के लिए प्रसिद्ध है। औद्योगीकरण और वाणिज्यिक विकास के साथ, गांधीनगर अहमदाबाद और सूरत के बाद सबसे तेज़ी से बढ़ते शहर के रूप में उभर रहा है।

गुजराती भोजन स्वादिष्ट शाकाहारी व्यंजनों का एक रंगीन मिश्रण है जो इसकी संस्कृति में गहराई से समाया हुआ है। यह ढोकला और फाफड़ा जैसे नाश्ते और जलेबी व बासुंदी जैसी मिठाइयों के लिए प्रसिद्ध है। जैन, हिंदू और मुस्लिम परंपराओं से प्रभावित ये व्यंजन गुजरात के इतिहास और विविध परिदृश्यों की कहानियाँ बयां करते हैं। गांधीनगर के विशेष व्यंजनों में खाखरा, थेपला, खांडवी, ढोकला, छोलाफली, मुठिया, फाफड़ा, सेव टमेटा शाक, उंधियू, खिचू, सुखड़ी और मोहन थाल शामिल हैं।

गांधीनगर अपनी महत्वपूर्ण कलाकृतियों, शिल्प कौशल और लकड़ी की नक्काशी सहित कलाओं के माध्यम से गुजरात की शानदार सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करता है। लकड़ी की नक्काशी के बेहतरीन उदाहरण मंदिरों और स्मारकों में देखे जा सकते हैं। दैनिक उपयोग के बर्तनों और वस्तुओं पर कारीगरों की कारीगरी देखने लायक है। गांधीनगर की मूल जनजातियां विशिष्ट जातीय आभूषण और टेराकोटा कलाकृतियाँ बनाने में माहिर हैं।

गांधीनगर के पुरुषों के पारंपरिक परिधानों में कुर्ता, धोती, केड़िया और यहाँ तक कि बंडी भी शामिल हैं। केड़िया लंबी आस्तीन वाला एक चुस्त कोट होता है। इसमें कमर पर झालरदार चुन्नटें होती हैं। इस कोट के किनारों और कंधों पर कढ़ाई की जाती है। महिलाएँ त्योहारों और अन्य विशेष अवसरों पर चनिया–चोली पहनती हैं। हालांकि मुख्य शहर में लोग आधुनिक पोशाक पहनते हैं, लेकिन ग्रामीण इलाकों में भी लोग ये पारंपरिक परिधान पहनते हैं। महिलाएँ दुपट्टा या ओढ़नी भी पहनती हैं जो पूरे परिधान को अंतिम रूप देता है। गुजरात की राजधानी गांधीनगर, आधुनिकता, सांस्कृतिक विरासत और शांत सौंदर्य का एक जीवंत मिश्रण है। भारत के सबसे हरे–भरे शहरों में से एक के रूप में जाना जाने वाला गांधीनगर अपनी चौड़ी सड़कों, प्रचुर उद्यानों, ऐतिहासिक स्थलों और आध्यात्मिक तीर्थस्थलों के साथ एक ताज़गी भरा विश्राम प्रदान करता है। साबरमती नदी के तट पर स्थित यह शहर न केवल गुजरात का राजनीतिक केंद्र है, बल्कि एक सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और प्राकृतिक स्थल भी है।

गांधीनगर का नाम भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन के नेता मोहनदास करमचन्द गांधी के नाम पर रखा गया था। गांधीनगर जिनके नाम से यह नाम दिया गया है उनके द्वारा किए गये हिंदी के प्रचार प्रसार की वजह से आज हिंदी दुनिया में तीसरे स्थान की बोली जानी वाली भाषा बन गई है। अहमदाबाद की जगह राजधानी बनाने के लिए बनाए गए इस शहर का निर्माण 1966 में शुरू हुआ था। 1970 में राज्य सरकार के कार्यालय गांधीनगर स्थानांतरित कर दिए गए और इसके बाद यह शहर गुजरात का एक वाणिज्यिक और सांस्कृतिक केंद्र बन गया।

गांधीनगर में राष्ट्र की समृद्ध संस्कृति को प्रदर्शित करने के लिए संस्कृति कुंज मेले का आयोजन किया जाता है जिसे वसंतोत्सव मेला भी कहा जाता है और यह फरवरी के महीने में हर्षोल्लास का केंद्र बन जाता है। इसे वसंत ऋतु के आगमन के उपलक्ष्य में 'वसंत महोत्सव' कहा जाता है।

गुजरात साहित्य अकादमी की स्थापना 24 सितंबर 1981 को अकादमी द्वारा की गई थी जोकि भारत में बोली जाने वाली भाषाओं और उनके साहित्य के विकास के लिए समर्पित है। गुजराती, गुजरात की आधिकारिक भाषा है। अन्य प्रमुख भाषाओं में हिंदी, संस्कृत, कच्छी, सिंधी और उर्दू शामिल है। गुजरात अकादमी पाँच अन्य अकादमियों का संचालन करती है जैसे संस्कृत भाषा के लिए संस्कृत साहित्य अकादमी, कच्छी भाषा के लिए कच्छी साहित्य अकादमी, सिंधी भाषा के लिए सिंधी साहित्य अकादमी और उर्दू भाषा के लिए उर्दू साहित्य अकादमी। रजिस्ट्रार सभी पाँचों अकादमियों का प्रशासनिक प्रमुख होता है। लोक साहित्य, संस्कृत भाषा और साहित्य, तथा अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के लिए तीन स्थायी समितियां हैं, जिनमें से प्रत्येक में दस सदस्य होते हैं, जिनमें पाँच आधिकारिक सदस्य भी शामिल हैं। भारत न केवल सांस्कृतिक रूप से, बल्कि भाषाई रूप से भी विश्व मानचित्र पर एक महाशक्ति बनकर उभर रहा है। दुनिया के भाषाई मानचित्र पर हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं की सशक्त उपस्थिति यह दर्शाती है कि भारत की भाषाई विरासत सिर्फ जीवित ही नहीं है बल्कि वैश्विक मंच पर लगातार प्रभाव बढा रही है।

गांधीनगर की साहित्यिक विरासत के विविध पहलु है जैसे साहित्यिक कार्यक्रम और उत्सव जिसमें साहित्यिक क्लबों और संगठनों द्वारा नियमित रूप से साहित्यिक कार्यक्रम जैसे कि हिंदी पखवाड़ा, कवि सम्मेलन और कार्यशालाएं आयोजित की जाती हैं। कला और संस्कृति जहां नवरात्रि जैसे त्योहारों को पारंपरिक गरबा नृत्य के साथ उत्साहपूर्वक मनाया जाता है। इसके अतिरिक्त, शहर में हस्तशिल्प जैसे कि कपड़ा, लकड़ी के काम और पारंपरिक मनके का काम भी लोकप्रिय है। वास्तुकला जहां वास्तुशिल्प, ली कोर्बुसिए द्वारा परिकल्पित शहरी नियोजन के सिद्धांतों पर आधारित है, जो कार्यात्मक ज़ोनिंग, हरित स्थानों और परस्पर जुड़ाव पर जोर देता है। गांधीनगर में साहित्यिक संस्थाएं है जैसे गुजरात साहित्य अकादमी का भवन स्थित है, जो साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गांधीनगर में साहित्यकारों का योगदान मिला है यहां कई प्रसिद्ध साहित्यकार रहते हैं, जैसे रघुवीर चौधरी, जिन्हें साहित्य अकादमी और ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

महात्मा गांधी के नाम से जिस शहर की पहचान है वो पवित्र भूमि बन गई है और इस पावन भूमि की सांस्कृतिक और साहित्यिक विरासत भारत देश के लिए बहुत ही गर्व की बात है। गांधीनगर की साहित्यिक विरासत, शहर के सांस्कृतिक और साहित्यिक जीवन को समृद्ध करती है और इसे एक ओजस्वी और महत्वपूर्ण केंद्र बनाती है।

निष्कर्षतः गांधीनगर की साहित्यिक विरासत इसकी दूरदर्शी सोच का प्रमाण है। यह कोई आकस्मिक परिणाम नहीं, बल्कि एक सावधानीपूर्वक पोषित सांस्कृतिक धरोहर है, जिसमें आधुनिक शहरी नियोजन और गुजरात की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रति गहरी प्रतिबद्धता का सम्मिश्रण है।

महर्षि दयानंद सरस्वती का हिंदी भाषा – कार्याचरण

– डॉ. निशा शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गुरुकुल कांगड़ी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार

यह मानी हुई बात है कि भाषा, धर्म और संस्कृति किसी देश की राष्ट्रीय एकता के लिए अति महत्वपूर्ण धरोहर होती है। देश के विकास व समृद्धि के मूल में भाषा का योगदान सर्वोपरि होता है। यदि यह अपने को मानव मूल्यों के अनुरूप श्रेष्ठ बनाती रहती हैं तो उस देश के प्रथम नागरिक से लेकर आम जनता तक गर्व का अनुभव करते हैं। इसलिए वेदों में राष्ट्रीय यज्ञ के संदर्भ में मातृभाषा, मातृभूमि तथा मातृ संस्कृति के रूप में तीन देवियों की कल्पना की गई है। यजुर्वेद 20.43 तथा वेदों के अन्य मंत्रों में कई स्थलों पर तीन देवियों इड़ा, भारती और सरस्वती का वर्णन मिलता है, यहाँ हम इड़ा का अर्थ धरती तथा वाणी, भारती को राष्ट्रमाता के रूप में तथा सरस्वती को ज्ञान और विद्या की देवी के रूप में मान सकते हैं। जिनकी कृपा महर्षि दयानंद जी पर प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर होती है। स्वामी दयानंद जी का जन्म गुजरात राज्य के काठियावाड़ क्षेत्र के मोराबी के टंकारा में सन् 1824 को हुआ था। स्वामी जी के बचपन का नाम मूल शंकर था। बालक मूल शंकर ने बाल्यावस्था में गृह त्याग के बाद स्वामी पूर्णानंद से दीक्षा लेकर दयानंद सरस्वती नाम से देश–विदेश में विद्वता का परचम लहराया। उल्लेख मिलता है कि मथुरा में स्वामी बिरजानंद द्वारा अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेदादि का अध्ययन करके वैदिक धर्म और आर्य ग्रंथों के प्रचार–प्रसार के पुरोधा रूप में विख्यात हुए।

स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 के अंतर्गत जिसे संघ की राजभाषा कहा गया उसे महर्षि दयानंद सरस्वती ने आर्य भाषा कहा है। वेद, शास्त्र, मनुस्मृति, उपनिषद, रामायण, महाभारत आदि सभी प्राचीन ग्रंथो में आर्य शब्द का वर्णन मिलता है। "संस्कृत शब्द कोष 'कल्पद्रुम, में आर्य शब्द का अर्थ – "पूज्य, श्रेष्ठ, धार्मिक, उदर, न्यायकारी, मेहनत करने वाला आदि है। 'आर्यव्रता विसृजन्तो अधि क्षमि'। (ऋग्वेद) अर्थात जो सत्य, न्याय, अहिंसा, पवित्रता, परोपकार, पुरुषार्थ आदि शुभ काम करते हैं, आर्य कहलाते हैं। सारे संसार को आर्य बनाने की बात भी ऋग्वेद में है "कृण्वंतो विश्वमार्यम"। 'वाल्मीकि रामायण' में कहा गया है 'अनार्य इति मामार्याः पुत्र विक्रायकं धुर्वम'। (राजा दशरथ राम को वनवास नहीं देना चाहते थे वह कहते हैं कि आर्य लोग (सज्जन) मुझ पुत्र बेचने वाले को निश्चय ही अनार्य (दुष्ट) कहेंगे)।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने आर्यावर्त (देश) में रहने वाले आर्यों की भाषा को आर्य भाषा कहा है। आर्य भाषा का विकसित रूप हिंदी है जो हिंदुस्तान का प्रतिनिधित्व करती है। यह ब्राह्मी लिपि की वंशजा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। भारतीय शिलापट्टों व अन्य मिले हुए साहित्यिक प्रमाणों के अनुसार इस भाषा का जन्म ईशा की नवीं शताब्दी तक हो गया था।

मुनियों और ऋषियों की परम्पराएं भारतीय धर्म–दर्शन और संस्कृति के मूल में रही है जो आज भी अनवरत है। मुनि परम्परा स्थिर और अचल मानी जाती है अर्थात ये एक स्थान पर रहकर अपने कर्म को गति देने वाले रहे जबकि ऋषि परम्परा जंगम या चल कहलाती है ये भ्रमणशील होकर अपने दायित्व और कर्तव्य का निर्वहन करने वाले हुए। इनको परिव्राजक भी कहा गया।

"महर्षि दयानंद सरस्वती परिव्राजक थे। गायत्री और सावित्री में उन्होंने गायत्री का वरण किया था। भारत की ऋषि परंपरा की धरित्री पर जिन दो विभूतियों ने ब्रह्मचर्य के बाद सीधा सन्यास ग्रहण किया वह हैं आदि शंकराचार्य और महर्षि दयानंद। शंकराचार्य ने केवल संस्कृत भाषा के माध्यम से देश को जगाया लेकिन महर्षि दयानंद ने संस्कृति तथा हिंदी के माध्यम से देश में जागरण का शंखनाद किया।

कहा गया है कि इंद्रियों से श्रेष्ठ चित्त है, चित्त से श्रेष्ठ मन और मन से श्रेष्ठ बुद्धि है।(महाभारत) इसलिए मनीषियों द्वारा इन सभी को अपने नियंत्रण में रखने की बात सदैव की जाती रही है। इतिहास गवाह है कि ऐसा करने वाले यश के भागी रहे हैं। महर्षि दयानंद भी ऐसे ही दिव्य पुरुष हुए। ज्ञान और विज्ञान के लिए उन्होंने वेद को श्रेष्ठ मानते हुए "वेदों की ओर लौटो" का संदेश दिया उनके अनुसार मनुष्य को ज्ञान की जितनी आवश्यकता है वह सब वेदों में है। स्वामी जी ने आमजन की सुगमता के लिए वेदों का अनुवाद संस्कृत से हिंदी में किया, जिससे ज्ञान का भंडार सभी हिंदी जानने वालों तक पहुंच सके। वेद का अर्थ ही ज्ञान है, ऐसा माना गया। महर्षि स्वभाव से आशान्वित थे। वे मतिमान और मनीषावान विशिष्ट पुरुष थे। "भारतीय हिंदू समाज और हिंदी भाषा को महर्षि दयानंद ने जो स्वरूप प्रदान किया उसी से प्रेरणा लेकर भारतेंदु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी और महात्मा गाँधी ने अपनी कर्म भूमियों को सुधारा, संवारा और उर्वरा बनाया। जिस हिंदी भाषा को भारतेंदु ने निज भाषा कहा जिसका परिष्कार, प्रसार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया और जिसे महात्मा गाँधी ने राष्ट्रभाषा कहा उसके प्रथम समर्थक और प्रचारक महर्षि दयानंद थे। महर्षि दयानंद ने हिंदी के महत्व का अनुभव किया और अपने उपदेशों और ग्रंथों द्वारा उसका व्यापक रूप से प्रचार किया।"[1]

गुजराती मातृभाषा में पोषित स्वामी जी ने जिस भाषा का अर्जन किया वह संस्कृत और हिंदी रही। उल्लेख मिलता है कि हिंदी भाषा की तरफ उनका आकर्षण तब बढ़ा जब वह बंगाल के विचारक केशव चंद्र सेन से सन् 1872 में मिले, तब स्वामी जी अपने विचारों को संस्कृत भाषा में सहजता से प्रकट करते थे। श्री केशव चंद्र सेन जी संस्कृत नहीं जानते थे और अंग्रेजी भाषा में भाषण करते थे, जो दयानंद जी को प्रिय नहीं थी और ये इस अंग्रेजी भाषा ज्ञान से विहीन थे। केशव जी संस्कृत न जानने के कारण दयानंद जी के भाषण और विचारों को समझ नहीं पाते थे। श्री सेन स्वामी जी की विचारधारा से परिचित होना चाहते थे। अतः दोनों मनीषियों के मध्य परस्पर भाषा ज्ञान न होने के कारण एक दूसरे के लिए विचारों को सुगमता से प्रेषित ना कर पाने की विवशता भी थी। श्री सेन का स्वामी जी के प्रति कथन था कि, "शोक है वेदों का अद्वितीय विद्वान अंग्रेजी नहीं जानता अन्यथा इंग्लैंड जाते समय वह मेरा इच्छा अनुकूल साथी होता।" इस पर स्वामी दयानंद जी ने जो भाव प्रकट किए थे उसने भी श्री सेन को हतप्रभ कर दिया था। स्वामी जी ने कहा था "शोक है कि ब्रह्म समाज का नेता संस्कृत नहीं जानता और लोगों को उसे भाषा में उपदेश देता है जिसे वे नहीं समझते।"[2]

इसी स्नेह संपर्क से स्वामी जी को हिंदी सीखने की प्रेरणा मिली और उन्होंने हिंदी को आत्मसात करते हुए "सत्यार्थ प्रकाश" जैसे महत्वपूर्ण ग्रंथ की रचना हिंदी भाषा में की। "हिंदी हिंदू हिंदुस्तान" के लिए राजा राममोहन राय तथा श्री केशव चंद्र सेन बराबर आवाज उठाते रहे। इस तरह उन्होंने स्वामी जी को हिंदी भाषा में लेखन और भाषण की ओर उन्मुख किया। श्री सेन की राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति कितनी निष्ठा थी उसका परिचय उनके "सुलभ समाचार" नामक बांग्ला पत्र से प्रकाशित इन शब्दों से भली भांति प्राप्त कर सकते हैं –"बिना एकता के भारत वर्ष का उद्धार नहीं हो सकता। भारतवर्ष की उस एकता का उपाय क्या है? इस समय भारत वर्ष में जितनी भाषाएं प्रचलित हैं उनमें हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो सर्वत्र प्रचलित है। सबसे अधिक बोली और समझी जाती है इसलिए यदि हिंदी को सारे भारत की एकमात्र भाषा बना दिया जाए तो सारे देश की एकता संपन्न हो सकती है। एक भाषा के बिना एकता नहीं हो सकती"।[3]

स्वामी दयानंद सरस्वती ने 7 अप्रैल, सन् 1875 में मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की तथा हिंदी को आर्य भाषा कह कर उसे सम्मान दिया। उन्होंने "आर्य समाज के 35वें उपनियम में अपनी हिंदी निष्ठा इस प्रकार अभिव्यक्त की थी, ''सब आर्यों और आर्य समाजियों को संस्कृत व आर्य भाषा (हिंदी) जाननी चाहिए"।[4] स्वामी जी ने यह अनुभव किया कि जो भाषा देश के अधिकांश भागों में बोली और समझी जाती है उसे अपनाकर ही लोगों में स्वराज प्रेम और सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। "सत्यार्थ प्रकाश" के द्वितीय संस्करण की भूमिका में उन्होंने अपनी मान्यता को स्वयं सिद्ध करते हुए लिखा कि "जिस समय मैंने यह ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश बनाया था उस समय और उससे पूर्व संस्कृत भाषण करने, पठन–पाठन में संस्कृत ही बोलने और जन्मभूमि की भाषा गुजराती होने के कारण मुझको इस भाषा का विशेष परिज्ञान नहीं था, इससे भाषा अशुद्ध बन गई थी। अब भाषा बोलने और लिखने का अभ्यास हो गया है इसलिए इस ग्रंथ को भाषा–व्याकरणानुसार शुद्ध करके दूसरी बार छपवाया है"।[5] स्वामी जी हिंदी भाषा को आत्मसात कर चुके थे,यह उनके हृदय की भाषा बन गई थी। स्वामी जी के हिंदी प्रेम का परिचय हमें उसे पत्र से भी मिल जाता है जो उन्होंने प्रख्यात थियोसोफिस्ट मैडम ब्लेवेटस्की को लिखा था। उस पत्र में स्वामी जी ने यह स्पष्ट संकेत दिया था कि "जिस पत्र का हमसे उत्तर चाहिए उसकी नागरी कराकर हमारे पास भेजा करें। इसी प्रकार एक बार 13 जुलाई, सन् 1879 को अपने एक विदेशी मित्र कर्नल अल्काट को अपनी भावनाएं इस प्रकार लिखी थी– मुझे सुनकर खुशी हुई कि आपने नागरी पढ़ना आरंभ कर दिया है"।[6]

इससे यह विदित होता है कि स्वामी जी के संपर्क में जो भी आया उसे उन्होंने हिंदी भाषा लिखने, पढ़ने और जानने की तरफ प्रेरित किया। स्वामी जी द्वारा जिस आर्य समाज की स्थापना हुई उसका उद्देश्य सुधारवादी था, इसलिए उनके समकालीन बुद्धिजीवियों, सुधारकों, नेताओं और साहित्यकारों पर प्रभाव पड़ना निश्चय ही हिंदी भाषा के लिए सुखद रहा। उनकी प्रेरणा या छाप ऐसी थी कि कई लोगों ने हिंदी प्रसार को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। भारतेंदु जी तो स्वामी जी से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने उनका नाम अपनी 'कवि वचन सुधा' नामक पत्रिका के संपादक मंडल में भी समाविष्ट कर लिया था"।[7]

स्वामी दयानंद जी की दूसरी जन्मशती गत वर्ष पूरे देश में जोश और उत्साह से मनाई गई। उनके जन्म काल के 200 वर्ष बाद भी भाषा संबंधी उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। "जब

स्वामी दयानंद ने अपने ग्रंथों को हिंदी में लिखना शुरू किया उस समय हिंदी और उर्दू का तीव्र विवाद चल रहा था। आजकल हिंदी का प्रमुख केंद्र माने जाने वाले उत्तर प्रदेश में उस समय सर्वत्र सरकारी कार्यालयों, न्यायालयों, शिक्षणालयों में उर्दू भाषा का प्रचार था। उस समय उर्दू भाषा के नेता सर सैयद अहमद थे और उनका तथा उनके साथियों का पूरा प्रयास यह था कि हिंदी को किसी भी प्रकार पनपने ना दिया जाए। सर सैयद जैसे नेता हिंदी को गँवारी बोली कहकर बदनाम कर रहे थे। उसे सरकारी तंत्र की उपेक्षा का शिकार होना पड़ा क्योंकि वह सरकारी कामकाज के लिए भी उपयुक्त नहीं लगी। हिंदी भाषा के लिए दुष्प्रचार का ये हाल था कि शैक्षणिक भाषा के लिए भी हिंदी की स्वीकारोक्ति सहज न रही। "तत्कालीन संयुक्त प्रांत के शिक्षा विभाग के अध्यक्ष हैवल ने सन् 1868 ईस्वी में हिंदी के विषय में यह कहा था कि– अधिक अच्छा होता यदि हिंदू बच्चों को उर्दू सिखाई जाती ना कि एक ऐसी बोली में विचार प्रकट करने का अभ्यास कराया जाता जिसे अंत में एक दिन उर्दू के सामने सिर झुकाना पड़ेगा"।[8]

1872 ईस्वी में बंगाली नेताओं के संपर्क में आने के बाद स्वामी जी के प्रयासों से हिंदी की दिशा और दशा दोनों उन्नति की ओर बढ़ी। देश के विभिन्न भागों में भ्रमण करते हुए उन्होंने यह अनुभव किया कि हिंदी सर्वत्र समझी जाने वाली भाषा है और अपने विचारों के प्रचार का सर्वोत्तम साधन है। अतः इसे उन्होंने प्रत्येक आर्यसमाजी के लिए पढ़ना आवश्यक बना दिया और यह भी घोषणा की कि हिंदी ही आर्यभाषा है और कन्या कुमारी से पेशावर तक बोली और व्यवहार की जाने वाली समस्त देश की राष्ट्र भाषा है। आर्य समाज का समस्त साहित्य हिंदी में प्रकाशित होना चाहिए और हिंदी को इसके प्रचार–प्रसार का प्रमुख माध्यम बनाना चाहिए"।[9] आर्य समाज के सिद्धांतों को व्यापक बनाने के लिए ऐसी भाषा का आश्रय लिया जाना स्वभाविक था जिससे उत्तर, पश्चिम, पूर्व सभी जगह अपनी बात समझाने में सरलता हो। उन्होंने यह भी निर्णय लिया कि आर्य समाज के समस्त साहित्य का प्रकाशन हिंदी भाषा में हो। सभी आर्य समाजियों ने इसे स्वीकार करने में तनिक भी हिचक नहीं दिखाई तथा उत्तरोत्तर के अनेक विद्वान – मनीषी साहित्यकारों ने स्वामी दयानंद से प्रेरणा लेकर हिंदी की पताका हो अक्षुण्ण बनाए रखा। "स्वामी दयानंद का आर्यसमाज इस प्रकार का पहला आन्दोलन था जिसमें हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने का सर्वप्रथम प्रयास किया गया"।[10] हिंदी के प्रति स्वामी जी का अटूट प्रेम और विश्वास इन शब्दों में व्यक्त होता है कि–"एक धर्म, एक भाषा, एक लक्ष्य के बिना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर है। सब उन्नतियों का केंद्र स्थान एक्य है"।[11] अन्य देशी भाषाओं को भी आवश्यकता अनुसार पढ़ने–पढाने के पक्ष में स्वामी जी रहे थे किंतु हिंदी और देवनागरी के प्रति उनका समर्पण और समर्थन अद्वितीय रहा। उन्होंने देवनागरी की श्रेष्ठता को तत्कालीन प्रसिद्ध मौलवियों और पादरियों के आगे भी सिद्ध किया "एक बार लिपि की श्रेष्ठता के ज्ञान हेतु यह शर्त लगी कि अपनी–अपनी भाषा के कठिन से कठिन वाक्य सब बोलें और उन्हें जिस लिपि में ठीक–ठाक लिखा जा सके वही लिपि श्रेष्ठ होगी। मौलवी तथा पादरी द्वारा स्वामी दयानंद को जो भी वाक्य अरबी अथवा अंग्रेजी में सुनाए गए उन्होंने देवनागरी में वैसे ही लिख दिया। परंतु स्वामी जी ने जो शब्द कहे वह अरबी और रोमन लिपि में नहीं लिखे जा सके। वे शब्द थे पाणिनि के प्रत्याहार सूत्र में से एक ''ञ म ङ ण न म।''[12] हिंदी को राजभाषा पद पर आसीन करवाने के लिए उन्होंने जो कार्य किया वह स्तुत्य है। कवि दिनकर की मान्यता रही कि "साकेत के राम तो स्वामी दयानंद के कृष्णवंतो विश्वमार्यम का नारा लगाते हैं अर्थात मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध रचना साकेत में

स्वामी जी के सुधारों और विचारों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है"।[13] महर्षि की हिंदी सेवा यद्यपि मात्र 8 या 9 वर्ष के अल्पकाल तक ही संभव हो सकी तथापि उतने ही समय में महर्षि ने हिंदी को बढ़ाने का जन आंदोलन बना दिया। "महर्षि की हिंदी सेवा के विषय में आर्य 'भाषा सम्मेलन' आर्य समाज, लाहौर के वार्षिकोत्सव पर हिंदी उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने कहा था –स्वामी दयानंद का एक बड़ा उपकार कौमी जबान को है। गुजराती होते हुए भी उन्होंने राष्ट्रभाषा हिंदी की अहमियत को समझा.."।[14] स्वामी जी अपने आर्य समाज के भाई–बंधुओ से नागरी में पत्र व्यवहार करते थे। हिंदी के व्यवहार, प्रचार–प्रसार व समृद्धि के लिए वो बहुत जागरूक थे। "7 अक्टूबर, 1878 को दिल्ली से श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा को लिखा था, अबकी बार भी वेद भाष्य के लिफाफे पर देवनागरी नहीं लिखी गई इसलिए तुम बाबू हरिश्चंद्र चिंतामणि से कहो कि अभी इस पत्र के देखते ही देवनागरी जानने वाला एक मुंशी रख लें जिससे कि काम ठीक–ठाक से हो"।[15]

महर्षि दयानंद जी का यह कथन लगभग डेढ़ शती पूर्व का है जिससे ज्ञात होता है कि वो हिंदी को लेकर कितने सक्रिय रहे। वह एक कर्मयोगी थे। वे वेदों के ज्ञाता और वेद प्रचार के प्रणेता रहे। वेदों के ज्ञान द्वारा समाज को अंधविश्वास से दूर रहने तथा सात्विक जीवन जीने की प्रेरणा देना उनका ध्येय रहा, इसके लिए वेदों का अनुवाद हिंदी में किया। गुजरात वासी महर्षि की पवित्र भावना को देश की जनता ने उन्मुक्त हृदय से स्वीकार किया था चाहे वे हिंदी भाषा अपनाने की बात हो या फिर सामाजिक कुरीतियों के निवारण की। राजनैतिक दूषित वातावरण में हिंदी विरोध का जो स्वर देश के आजाद होने के बाद था, वही स्वर आजादी के 77 वर्षों बाद भी दिखाई दे रहा है। दक्षिण भारत के राज्य हिंदी को हाशिये पर रखने के पक्षधर हैं। जब हिंदी नवजागरण का काल था तो उस समय हिंदी ही एक सधी हुई भाषा के रूप में स्वाधीनता संग्रामियों के लिए संपर्क, भावात्मक एकता बनाने के लिए मजबूत कड़ी बनी थी। पूरब से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक के चिंतकों ने हिंदी को महज़ अपने विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम ही नही बनाया बल्कि संपर्क के साथ राजभाषा और राष्ट्रभाषा बनाने का पुरजोर समर्थन भी किया। श्री केशव चंद्र सेन, सुब्रमण्यम भारती, लोकमान्य तिलक, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, राजा राममोहन राय, महादेव गोविंद रानाडे, पुरुषोत्तम दास टंडन, महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, काका कालेलकर आदि नेताओं ने, जो विभिन्न प्रांतों के रहने वाले थे, हिंदी को कंठहार बनाया। वे भारतीय पहले थे प्रांतीय बाद में, इन सभी के हृदय जो हिंदी भाषा के लिए धड़कते थे उसके मूल में जो शक्ति थी, वह महर्षि दयानंद जी से मिली थी। स्वामी दयानंद जी के अनुसार "जो व्यक्ति जिस देश की भाषा पढ़ता है उसको उसी देश– भाषा का संस्कार हो जाता है। अतः भारतीयों को अपनी मातृभाषा हिंदी का अध्ययन करना चाहिए"।[16]

यह सर्व विदित है कि स्वामी दयानंद सरस्वती न सिर्फ हिंदी भाषा से प्रेम करते थे बल्कि उनके महती उद्देश्य में वह राष्ट्र की तत्कालीन अनेकों समस्याओं से निजात दिलाने का प्रयास भी करते रहे। देश से अंधविश्वास, अविद्या, अंधकार को दूर करने के लिए उन्होंने आर्य समाज जैसी श्रेष्ठ संस्था की स्थापना की थी, जिसमें चरित्र और मूल्यों की प्रधानता सबसे पहले है। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्वामी जी ने जिस हिंदी भाषा को अपने गद्य का माध्यम बनाया उसमें ओज, सरलता, प्रवाह और रोचकता स्पष्ट है। वे स्वदेशी वस्तुओं के प्रति प्रेम, स्वधर्म एवं स्वजाति की भावना और देशाभिमान को जनता में उत्पन्न करना चाहते थे। अतः उनकी भाषा में ओजस्विता और प्रखरता निरंतर बनी रही। वह हिंदी के प्रबल समर्थक रहे, उन्होंने देवनागरी लिपि

का समर्थन खुले शब्दों में किया। कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा महर्षि दयानंद सरस्वती जी की आत्मा की भाषा बनी रही।

संदर्भ ग्रंथ–

1. कृष्ण चंद्र गर्ग, आर्य मान्यताएँ, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट दिल्ली, पृष्ठ–591, संस्करण 10, जुलाई 2016
2. वही, पृष्ठ–45
3. वही, पृष्ठ–457
4. वही, पृष्ठ–457
5. महर्षि दयानंद सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, पृष्ठ–12, 106वां संस्करण, नवंबर 2021
6. विष्णु दत्त राकेश, दीक्षा लोक, श्री स्वामी श्रद्धानंद अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र, हरिद्वार, पृष्ठ–458, द्वितीय संस्करण 2002
7. वही, पृष्ठ–458
8. आर्य समाज का इतिहास, भाग 5, शाहदरा, नई दिल्ली, पृष्ठ–526, प्रथम संस्करण 1986
9. वही, पृष्ठ–525
10. वही, पृष्ठ–528
11. त्रिभुवन नाथ चौबे, तुलसी तरु, तुलसी सत्संग भवन, पृष्ठ–22, अंक 25,1989
12. वही, पृष्ठ–25
13. त्रिभुवन नाथ चौबे, तुलसी तरु, तुलसी सत्संग भवन, पृष्ठ–25, अंक 25,1989
14. वही, पृष्ठ–27
15. विष्णु दत्त राकेश, दीक्षा लोक, श्री स्वामी श्रद्धानंद अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र, हरिद्वार, पृष्ठ–459, द्वतीय संस्करण 2002
16. त्रिभुवन नाथ चौबे, तुलसी तरु, तुलसी सत्संग भवन, पृष्ठ–18, अंक 25,1989

हिंदी के संवर्धन में गुजरात के मनीषियों का योगदान

– रजनीश कुमार यादव
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय स्टेट बैंक, हैदराबाद

"एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" – ऋग्वेद (1.164.46) में उल्लिखित इस श्लोक का अर्थ है: "सत्य एक है, विद्वान उसे विभिन्न नामों और भाषाओं से व्यक्त करते हैं।" सत्य, विचार और ज्ञान की मूल भावना एक होती है–चाहे वह किसी भी भाषा में अभिव्यक्त की जाए। भाषाओं का वैविध्य एकता का विरोध नहीं, बल्कि उसकी अभिव्यक्ति का विस्तार है। यह श्लोक भारतीय भाषाओं के बीच सहिष्णुता, समन्वय और एकात्मता की भावना को दर्शाता है, जो भाषाई एकता की नींव है। उक्त श्लोक के माध्यम से भारत की भाषायी विविधता में भी एकता के भाव को स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है। हिंदी का आधुनिक स्वरूप 18वीं सदी के अंत में तैयार हुआ और यह संपर्क भाषा, व्यापार की भाषा, कामकाज की भाषा से बढ़ते हुए भारतीय संघ की राजभाषा बनी। हिंदी आज विश्व फलक पर अपना परचम लहरा रही है हिंदी के विकास और संवर्धन के इस पड़ाव पर भारतीय भाषाओं और बोलियों का अभूतपूर्व योगदान है। गुजराती भाषा हिंदी की सहोदरी के रूप में अनेक आयामों में हिंदी की पोषक रही है। भाषा किसी भी समाज की संस्कृति, इतिहास, विचारधारा और चेतना की संवाहिका होती है। किसी भी भाषा का संवर्धन अर्थात् उसका विकास, विस्तार, सृजनात्मक उपयोग और वैश्विक प्रतिष्ठा केवल भाषिक प्रयासों से नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और तकनीकी स्तरों पर विविध तत्वों से होता है। भारत विविधताओं का देश है और गुजरात उसकी सांस्कृतिक, धार्मिक और ऐतिहासिक विविधता का गौरवमयी प्रतिनिधित्व करता है। यह राज्य न केवल अपने पर्यटन स्थलों, तीर्थधामों और विरासत स्थलों के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि यहां आने वाले देशभर के पर्यटक और श्रद्धालु हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाकर राष्ट्रीय एकता और भाषा संवर्धन के अभियान को भी सशक्त बनाते हैं। गुजरात के मनीषियों ने विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करते हुए न केवल अपने राज्य और संस्कृति का गौरव बढ़ाया, बल्कि हिंदी भाषा को भी एक अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान करने में योगदान दिया। उनका यह योगदान प्रत्यक्ष लेखन, भाषायी समन्वय, अनुवाद, प्रचार, सामाजिक सुधार और नीति निर्माण के माध्यम से लेकर मनोरंजन जगत तक भी दिखाई देता है। हिंदी के संवर्धन में गुजरात के अनेक मनीषियों (विद्वानों, साहित्यकारों, चिंतकों और समाजसेवियों) ने हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। गुजरात राज्य जो न केवल अपने पर्यटन स्थलों, तीर्थधामों और विरासत स्थलों के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि यहां आने वाले देशभर के पर्यटक और श्रद्धालु हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाकर राष्ट्रीय एकता और भाषा संवर्धन के अभियान को भी सशक्त बनाते हैं। उत्तर भारत के शहरों में बसे व्यापारी वर्ग ने हिंदी को व्यावसायिक भाषा के रूप में अपनाया, हिंदी में लेन–देन, व्यवहार और संवाद को स्वीकृति दी। गुजराती संपादकों और पत्रकारों ने हिंदी भाषी क्षेत्रों में पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से भाषायी संवाद को बढ़ावा दिया।

इसके अलावा गुजरात में हिंदी भाषा का प्रचार स्वतंत्रता संग्राम के दौरान बहुत हुआ, जिसमें गुजराती नेताओं ने हिंदी को संवाद की भाषा बनाया। अनेक गुजराती लेखकों ने हिंदी साहित्य में अनुवाद और मौलिक रचनाओं द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

हिंदी के संवर्धन में अन्य भाषाओं का योगदान

एक अध्ययन के अनुसार हिंदी भाषा को पल्लवित करने में कई भाषाओं की महती भूमिका रही है। हिंदी की जननी माने जाने वाली संस्कृत ने शब्दकोश, व्याकरण, साहित्यिक गहराई दी, तो वहीं दूसरी ओर अन्य भारतीय भाषा सहित अंग्रेजी ने भी विज्ञान, तकनीक, आधुनिक विषयवस्तु देते हुए अपनी भूमिका निभाई है, बंगाली भाषा ने उपन्यास शैली, काव्य अभिव्यक्ति देकर हिंदी को समृद्ध किया है तो द्रविण की भाषाओं ने आध्यात्मिक दर्शन, संगीत–संस्कृति से हिंदी को संवर्धित किया है, इसी परिप्रेक्ष्य में गांधी दर्शन, भक्ति काव्य, नीति साहित्य के माध्यम से गुजराती ने भी हिंदी के वैराट्य को विशालता प्रदान की है। हिंदी और गुजराती में ऐतिहासिक और भाषिक समन्वय देखने के मिलता है क्योंकि हिंदी और गुजराती दोनों का मूल संस्कृत है।

हिंदी का विकसित रूप – प्राकृत > अपभ्रंश > खड़ी बोली और गुजराती का विकसित रूप – शौरसेनी अपभ्रंश > पुरानी गुजराती है। दोनों भाषाओं की मूल, व्याकरणिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों में शब्दावली, ध्वनियाँ और व्याकरण में गहरी साम्यता मिलती है। दोनों ही भाषाओं की शब्दावली तत्सम, तद्भव है तथा तत्सम, तद्भव शब्दों की उत्पत्ति में समानता भी देखी जा सकती है।

भाषा के संवर्धन के मुख्य और मूल तत्व

भाषा का विकास तभी होता है जब वह जनसामान्य की प्राथमिक संप्रेषण भाषा बने। समाज के हर वर्ग में उस भाषा का प्रयोग हो। भाषा मिश्रण (कोड–मिक्सिंग और कोड–स्विचिंग) भी एक आधार है जो कि आधुनिक समाज में लोग कई भाषाओं को एक साथ बोलते हैं। इससे भाषाओं के बीच सहिष्णुता और समरसता बनती है। भाषा का संवर्धन बुनियादी स्कूली और उच्च शिक्षा में उसके समुचित उपयोग पर निर्भर करता है। यदि वह भाषा माध्यम के रूप में पढ़ाई जाती है, तो आने वाली पीढ़ियों में उसका सहज और स्वाभाविक विकास होता है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, पत्रकारिता, तकनीकी लेखन आदि से भाषा का रचनात्मक विस्तार होता है। अनुवाद कार्य किसी भाषा को बहुभाषी संपर्क की शक्ति देता है। अन्य भाषाओं से ज्ञान, साहित्य, तकनीक को अनुवाद के माध्यम से ग्रहण कर, किसी भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता को समृद्ध किया जा सकता है।

आज के युग में कोई भी भाषा तभी टिक सकती है जब वह तकनीकी प्लेटफॉर्म, जैसे मोबाइल एप, वेबसाइट, सोशल मीडिया, एआई, मशीन ट्रांसलेशन आदि के लिए उपयुक्त हो। भाषा का डिजिटलीकरण और मानकीकरण आवश्यक है। राज्य की भाषा नीति, राजभाषा घोषणाएँ, संसदीय प्रयोग, कार्यालयीन उपयोग, ये सब भाषा को आधिकारिक रूप देते हैं। योजनाओं और पुरस्कारों के माध्यम से भाषा सेवियों को प्रोत्साहन भी जरूरी है। संगीत, रंगमंच, चित्रकला, लोकगीत, फिल्में आदि भाषा को भावनात्मक और जनमानस के निकट ले जाते हैं। लोकभाषा और मानक भाषा के बीच सेतु बनाना भाषा की जीवंतता को बनाए रखता है। अन्य भाषाओं के साहित्य,

नाटकों, फिल्मों, त्योहारों और परंपराओं से किसी भाषा को नवीन दृष्टिकोण और सामाजिक सरोकार प्राप्त होते हैं।

गुजरात के मनीषी जिनका हिंदी संवर्धन में योगदान रहाः

नरसिंह मेहता (1414—1481 ई.)

हिंदी के संवर्धन में 'गुजराती भक्ति साहित्य के पितामह' प्रसिद्ध भक्त कवि नरसिंह मेहता जिन्हें 'अद्भुत भावुकता के संत कवि' के रूप में जाना जाता है, का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है, वे भगवान श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे और उनका रचना संसार मुख्यतः भक्तिमार्ग, समरसता और सामाजिक समानता के विचारों से प्रेरित था। हालांकि वे मूलतः गुजराती भाषा के कवि थे, परंतु उनके काव्य और विचारों ने हिंदी साहित्य, विशेषकर भक्ति आंदोलन को समृद्ध किया और हिंदी भाषा को विचार, प्रेरणा एवं भावनात्मक दृष्टि से सुदृढ़ किया। उनके समय भक्ति आंदोलन पूरे उत्तर भारत में प्रखर हो रहा था। हिंदी के तुलसीदास, कबीर, सूरदास जैसे संतों की रचनाओं के समानांतर, नरसिंह मेहता ने गुजरात में उसी भावधारा को बढ़ावा दिया। उनके भक्ति गीतों और पदों में जो सामाजिक समरसता, जातिभेद विरोध और शुद्ध भक्ति का भाव है, वह हिंदी के संत साहित्यकारों को भी प्रेरित किया। नरसिंह मेहता का सबसे प्रसिद्ध पद ***"वैष्णव जन तो तेने कहिए"*** न केवल गुजरात में बल्कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में भी लोकप्रिय है। महात्मा गांधी ने नरसिंह मेहता के पदों से प्रेरणा ली और उन्हें भारत के जन—जन तक पहुंचाया। नरसिंह मेहता के साहित्य का हिंदी में अनुवाद हुआ, जिससे हिंदी पाठकों को उनके साहित्यिक विचारों और भक्ति भावना से परिचित होने का अवसर मिला। इससे दोनों भाषाओं के बीच सांस्कृतिक पुल निर्मित हुआ। उनके भक्ति काव्य ने समाज में सामाजिक समानता और त्याग का संदेश दिया, जो अर्थनीति में नैतिकता का आधार बना। नरसिंह मेहता भले ही गुजरात के कवि रहे हों, किंतु उनकी भक्ति भावना, समाज सुधार की सोच और साहित्यिक सरलता ने हिंदी जगत को भी प्रभावित किया। उन्होंने भारत की भाषायी सीमाओं को लांघकर सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा दिया और हिंदी के संवर्धन में एक अदृश्य लेकिन गहरा योगदान दिया।

महात्मा गांधी (1869–1948)

हिंदी के संवर्धन में महात्मा गांधी का नाम सर्वोपरि है क्योंकि गुजराती भाषी होते हुए भी हिंदी को वे राष्ट्र की आत्मा मानते थे। महात्मा गांधी के माध्यम से हिंदी समाज में उनकी रचनाओं का गहरा प्रभाव पड़ा, उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचारित किया। गांधीजी ने हिंदी अपनाओ आंदोलन को नैतिक समर्थन दिया। वे हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बने और हिंदी सेवियों को प्रोत्साहित किया। उनके लेख, भाषण और "हरिजन" पत्रिका में हिंदी में भी नियमित लेखन होता था। गांधीजी ने कई बार गुजराती साहित्य परिषद के मंच से हिंदी को "राष्ट्र की आत्मा" कहा और इसे राष्ट्रभाषा बनाने का आग्रह किया। इसके अलावा स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी उन्होंने हिंदी के माध्यम से पूरे भारत को जोड़ा। हिंदी जगत उनके अवदान के लिए सदैव कृतज्ञ रहेगा।

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी उपन्यासकार, इतिहासकार, भारतीय संस्कृति और हिंदी के संरक्षक, प्रसिद्ध गुजराती लेखक और स्वतंत्रता सेनानी गुजराती के सुप्रसिद्ध कथाकार, इतिहास और संस्कृति के मर्मज्ञ तथा प्राच्य विद्या के बहुज्ञ विद्वान का जन्म 30 दिसम्बर, 1887 को भड़ौंच, गुजरात में हुआ।

प्रारंभ (1915) में 'यंग इंडिया' के संपादक रहे। सन् 1944 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष और 1951 से मृत्युपर्यंत संस्कृत विश्व परिषद के भी अध्यक्ष रहे। सन् 1957 में उन्होंने भारतीय इतिहास कांग्रेस की अध्यक्षता भी की।

आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं–

लोमहर्षिणी, लोपामुद्रा, भगवान परशुराम, तपोविनी, पृथ्वीनाथ, भगवानदत्त, पाणिनि का प्रभाव, कृष्णावतार के सात खंड – वंशी की धुन, हर्षवर्धन, पाँच पांडव, महाबली भीम, सत्यभामा, महाभारत व्यास, युधिष्ठिर (उपन्यास); वह और यह (नाटक); आधे रास्ते, सीढ़ी चढ़ना, स्वप्नसिद्धि की खोज में (आत्मकथा के तीन खंड)।

गुजराती साहित्य परिषद की वार्षिक बैठकों में उन्होंने हिंदी–गुजराती के साहित्यिक सामंजस्य पर बल दिया और हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कन्हैयालाल मुंशी ने 'भारतीय विद्या भवन' की स्थापना की, जहां हिंदी सहित कई भारतीय भाषाओं के संरक्षण को प्राथमिकता दी गई, जिसने हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रचार–प्रसार में बड़ा योगदान दिया।

महादेव देसाई

महात्मा गांधी के सचिव और शिक्षाविद थे। इन्होंने गांधी जी के गुजराती लेखों का हिंदी में अनुवाद कर उन्हें जनमानस तक पहुंचाया।

झवेरचंद मेघाणी

"गुजराती लोक साहित्य के राजकवि", गुजराती लोक साहित्य के मर्मज्ञ लेखक झवेरचंद मेघाणी तथा गांधीजी के प्रिय मेघाणी जी ने गुजराती लोककथाओं, वीरगाथाओं और लोकगीतों को हिंदी में अनुदित किया। उनके कार्यों से हिंदी पाठकों को गुजरात की संस्कृति, इतिहास और जनमानस से

व्यापक परिचय मिला। उन्होंने गांधीजी के विचारों को सरल हिंदी में प्रस्तुत किया, जिससे जनजागरण संभव हुआ। उनके अनूदित लोकगीतों को राष्ट्रीय आंदोलन में भी अपनाया गया। उदाहरणः "सोनी माटी न संदेसो" जैसे लोकगीतों को हिंदी में प्रस्तुत कर जनचेतना जगाई। हिंदी भाषी समाज को गुजरात की संस्कृति से जोड़ते हुऐ उन्होंने हिंदी जगत को कई रुपों में समृद्ध किया।

रवीशंकर रावल

रवीशंकर रावल कला समीक्षक, पत्रिका संपादक हिंदी लेखों का संपादन और चित्रकला पर हिंदी में लेख लिखने वाले एक महत्वपूर्ण मनीषी रहे हैं। उन्होंने गुजराती साहित्य परिषद की स्थापना की। गुजराती साहित्य परिषद, गुजरात की एक अत्यंत प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था है, जिसका गठन 1905 में हुआ था। इसका उद्देश्य गुजराती भाषा और साहित्य का संरक्षण, संवर्धन और प्रचार करना था, लेकिन समय के साथ इस संस्था ने हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुजराती साहित्य परिषद में अनेक मनीषी ऐसे रहे जिन्होंने गुजराती और हिंदी के बीच सेतु की भूमिका निभाई। उन्होंने हिंदी को राष्ट्रीय एकता, सामाजिक सुधार, शिक्षा और लोक साहित्य के प्रचार में समर्थ भाषा माना। परिषद के माध्यम से उन्होंने ऐसे लेखकों को प्रोत्साहित किया जो हिंदी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचना करते हैं। गुजराती रचनाओं के हिंदी में अनुवाद को भी बढ़ावा दिया गया। परिषद द्वारा हिंदी लेखकों व कवियों को आमंत्रित कर काव्य–पाठ और संवाद कार्यक्रम आयोजित करवाए तथा ऐसी पत्रिकाएं प्रकाशित कीं जिनमें हिंदी लेखकों की रचनाएं शामिल की जाती थीं, जिससे हिंदी साहित्य का प्रभाव बढ़ा। परिषद के माध्यम से उन्होंने कई ऐसे हिंदी साहित्यकारों को सम्मानित किया जो गुजरात में रहकर हिंदी साहित्य सेवा कर रहे थे। गुजराती साहित्य परिषद से जुड़े प्रमुख मनीषीगण (विद्वानों/लेखकों/संपादकों) न केवल गुजराती साहित्य के गौरव हैं, बल्कि इन्होंने हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के आपसी संवाद को भी समृद्ध किया है, श्री रावल उनके प्रेरणास्रोत रहे है।

मोहनलाल पंड्या

स्वदेशी, स्वभाषा और स्वराज की त्रिवेणी में विश्वास करने वाले मोहनलाल पंड्या मूल रूप से गुजराती लेखक थे, लेकिन उन्होंने हिंदी साहित्य को भी प्रोत्साहित किया। वे हिंदी भाषी लेखकों, कवियों और प्रचारकों से जुड़ते और उन्हें मंच देते। उनकी भाषण शैली सरल हिंदी में होती थी ताकि आमजन से संपर्क सीधे जुड़ सके। उन्होंने स्थानीय लोगों को यह समझाया कि हिंदी ही वह भाषा है जो पूरे भारत को एकसूत्र में बांध सकती है। इसके लिए वे हिंदी शिक्षण संस्थानों, हिंदी सभाओं और प्रचार समितियों से जुड़े। उन्होंने संविधान सभा में भी हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने की वकालत की और लोगों में इसके लिए जनचेतना जागृत करने का कार्य किया। वे हिंदी साहित्य सम्मेलन, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा और अन्य हिंदी संस्थाओं के सक्रिय समर्थक और संरक्षक रहे। इन संस्थाओं के माध्यम से उन्होंने दक्षिण और पश्चिम भारत में हिंदी के प्रचार हेतु कार्य किया। उनका स्पष्ट मानना था – "यदि भारत को स्वतंत्र और आत्मनिर्भर बनाना है तो उसकी भाषा भी अपनी होनी चाहिए। हिंदी ही वह भाषा है जो जन–जन की भाषा बन सकती है।"

इसलिए उन्होंने "स्वभाषा" को "स्वराज" के समान महत्व दिया। उन्होंने युवाओं को हिंदी सीखने और उसमें रोजगार, संवाद तथा शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। मोहनलाल पंड्या का

योगदान न केवल स्वतंत्रता संग्राम तक सीमित था, बल्कि उन्होंने भाषा को भी आजादी का माध्यम माना। वे हिंदी के ऐसे संवाहक बने जिन्होंने हिंदी और भारतीयता के गहरे संबंध को समझा और उसे जनमानस तक पहुंचाया। उनका जीवन इस बात का उदाहरण है कि भाषा के प्रति समर्पण, केवल भाषाभाषी होने से नहीं, बल्कि उसके प्रति विचारशील और राष्ट्रभक्त होने से आता है। भारत सेवक समाज और गांधी सेवा मंडल जैसे संगठनों से जुड़े, जहां वे जन–जागरण के लिए हिंदी का ही प्रयोग करते रहे।

दादा भाई नौरोजी

दादाभाई नौरोजी का प्रमुख योगदान भारतीय राष्ट्रवाद, स्वतंत्रता संग्राम, आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाने और भारतीय जनता को ब्रिटिश शासन की सच्चाई बताने में रहा। हालांकि वे मूल रूप से गुजराती भाषी पारसी समुदाय से थे, परंतु उनका दृष्टिकोण समस्त भारतीयता और बहुभाषी राष्ट्रीय एकता का था। राष्ट्रीय चेतना को जगाने वाला विचारों के द्वारा दादा भाई नौरोजी ने जब भारतीयों को एकता के सूत्र में बाँधने की बात की, तब उन्होंने बार–बार कहा कि "भारत को अपनी भाषा और अपनी शिक्षा प्रणाली चाहिए, विदेशी नहीं।" स्वदेशी आंदोलन का समर्थन और हिंदी में अभिव्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करने में नौरोजी का स्वदेशी आंदोलन का मूल अर्थ केवल वस्त्रों या वस्तुओं तक नहीं, भाषा के स्वदेशीकरण से भी था। दादाभाई नौरोजी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक नेताओं में से एक थे। नौरोजी ने देश के आम लोगों के शोषण की बात, भारत से धन का ब्रिटेन में बहाव ("Drain of Wealth") जैसे आर्थिक मुद्दों को जनता तक पहुंचाने के लिए आंदोलन हिंदी में ही किया। उन्होंने हिंदी को आमजन की आवाज़ बनने का प्रेरक वातावरण निर्मित करते हुए राष्ट्रीय एकता, स्वदेशी विचार, शिक्षा के स्वाभाविक माध्यम की वकालत की, जिससे हिंदी के संवर्धन और मानकीकरण को वैचारिक गति मिली। वे उन राष्ट्रनायकों में थे जिनके कार्यों और विचारों ने हिंदी को सिर्फ एक भाषा नहीं, बल्कि 'राष्ट्र की आत्मा' की चेतना को जन्म दिया।

नर्मद (नर्मदाशंकर लालशंकर दवे)

गुजराती में आधुनिक काव्य के जनक, नर्मदाशंकर दवे (नर्मद) यद्यपि वे मुख्यतः गुजराती लेखक थे, लेकिन हिंदी के प्रति भी गहरी आस्था रखते थे। उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की वकालत की।. हिंदी को राष्ट्रभाषा मानने का समर्थन गुजराती, हिंदी गुजराती आधुनिक काव्य के माध्यम से हिंदी को भारत की एकता का माध्यम माना और जन जागृति में अपना अमूल्य योगदान दिया।

डॉ. रमनलाल जानी

हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में सक्रिय रहे। अनेक हिंदी लेखन कार्यों में संलग्न डॉ. रमनलाल जानी साहित्यिक आलोचना और अनुवाद कार्य करने वाले शिक्षाविद है, जिन्होंने हिंदी साहित्य का अनुवाद और आलोचना बखूबी करते हुए अपने कृतित्व से हिंदी संसार को समृद्धता प्रदान की।

हरिभाई काणाभाई 'कोठारी'

आलोचक, भाषाशास्त्री, हिंदी व गुजराती साहित्य पर लेखन तथा दोनों भाषाओं में आलोचनात्मक लेखन व हिंदी–गुजराती तुलनात्मक साहित्य के ज्ञाता माने जाते हैं।

उमाशंकर जोशी

ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता गुजराती कवि और अनुवादक, उन्होंने न केवल हिंदी रचनाओं का गुजराती में अनुवाद किया, बल्कि गुजराती साहित्य का हिंदी में भी अनुवाद कर भाषायी समरसता को बढ़ावा दिया। भारत सरकार की भाषा नीति के समर्थक और कई हिंदी–गुजराती साहित्यिक गोष्ठियों में सक्रिय भूमिका निभायी।

हर्षद त्रिवेदी

साहित्य अकादमी से जुड़े लेखक और अनुवादक उन्होंने हिंदी और गुजराती साहित्य के बीच पुल का कार्य किया। गुजराती कविताओं और कहानियों को हिंदी में अनूदित कर राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाया।

शंकर दान दवे

कवि, राष्ट्रभाषा प्रचारक हिंदी काव्य, खादी आंदोलन में हिंदी का उपयोग कर हिन्दी के महत्व को प्रतिपादित किया।

मणिलाल द्विवेदी

आध्यात्मिक व दार्शनिक लेखन, हिंदी में अनुवाद कार्य काव्य कृतियाँ हिंदी में अनूदित कर हिंदी जगत को नई चेतना देने का प्रयास किया।

मोतीराम भट्ट

हिंदी और गुजराती दोनों भाषाओं के समर्थ साहित्यकार। उन्होंने हिंदी को लोकभाषा के रूप में देखा और उसकी महत्ता को स्थापित किया। मोतीराम भट्ट धार्मिक और सांस्कृतिक साहित्य, हिंदी–गुजराती समन्वय साहित्यकार के रुप मे जाने जाते है, उनके समन्वय की अद्भुत कला ने हिंदी को पुष्पित पल्लवित किया है।

दुला भाई थाकर

दुला भाई थाकर लोक साहित्य और भाषा विज्ञान में योगदान देने वाले मनीषी है, वे हिंदी और गुजराती दोनों भाषाओं में समान रूप से दक्ष थे। भाषा अनुसंधान और लोक साहित्य के क्षेत्र में उनका योगदान उल्लेखनीय है। दुलाभाई थाकर ने हिंदी लोक साहित्य पर तुलनात्मक शोध प्रस्तुत कर दोनों ही भाषाओं को अपना अमूल्य योगदान दिया है।

उषा उपाध्याय

हिंदी मंचों पर गुजराती साहित्य की प्रस्तुति, गुजराती कविताओं का हिंदी मंचों पर प्रसार करने वाली समकालीन गुजराती कवयित्री हैं, जिनकी कविताएँ हिंदी में अनूदित होकर मंचों पर पढ़ी जाती हैं।

डॉ. चंद्रकांत मेहता

डॉ. चंद्रकांत मेहता लेखक, शिक्षाविद हिंदी काव्य व निबंध लेखन, अनुवाद हिंदी, गुजराती आलोचना और काव्य क्षेत्र में योगदान देने वाले तथा कई हिंदी काव्य संग्रहों और समीक्षात्मक

लेखों के रचनाकार हैं। आपने कई गुजराती नाटकों, कहानियों और आत्मकथाओं का हिंदी में अनुवाद किया। उनके प्रयासों से द्विभाषीय मंचन और साहित्यिक संवाद संभव हुआ।

प्रो. रमेश पटेल

गुजरात में हिंदी के शिक्षण और प्रचार में अग्रणी भूमिका निभाई। हिंदी की कई पुस्तकों के लेखक और संपादक रहे हैं।

प्रो. रमाकांत शुक्ल

वे मूलतः संस्कृतज्ञ लेकिन हिंदी साहित्य में भी उनका विशद योगदान है। गुजरात विश्वविद्यालय से जुड़े रहे।

हिंदी संवर्धन में योगदान देने वाले राजनैतिक क्षेत्र के गुजराती मनीषीगण

सरदार वल्लभभाई पटेल

भारत के प्रथम गृह मंत्री तथा विश्व प्रसिद्ध व्यक्तित्व, उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी में संवाद किया और जनजागरण हेतु हिंदी का उपयोग किया। भारत की एकता के प्रतीक के रूप में, उन्होंने हिंदी को जोड़ने वाली भाषा माना। इनके अवदानो से परिचय किसी साक्ष्य की दरकार नहीं रखती है। उनके प्रयोग और प्रयासों के लिए अखिल भारतवर्ष उनका ऋणी है।

नरेंद्र मोदी: हिंदी के वैश्विक प्रतिनिधि

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी संयुक्त राष्ट्र महासभा, G20, BRICS और अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी में भाषण देकर हिंदी भाषा को वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठा दिलाई। इससे हिंदी न केवल एक राष्ट्रीय भाषा के रूप में बल्कि एक वैश्विक संवाद भाषा के रूप में भी स्वीकार की जाने लगी। रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' कार्यक्रम द्वारा हिंदी का विस्तार कर हिंदी भाषा को आम जनमानस से जोड़ा। उन्होंने सरल, सहज और प्रामाणिक हिंदी में संवाद करके करोड़ों हिंदीभाषियों के बीच भाषाई जुड़ाव मजबूत किया। डिजिटल माध्यमों में हिंदी को प्राथमिकता देते हुए उनके प्रयाासों से सरकारी वेबसाइटों, मोबाइल एप्स, योजनाओं और घोषणाओं में हिंदी को अग्रता दी गई (जैसेः उमंग, माईगॉव, पीएम–किसान पोर्टल इत्यादि)। सोशल मीडिया पोस्टिंग में हिंदी का निरंतर उपयोग कर एक नया डिजिटल हिंदी संवाद खड़ा किया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में मातृभाषा और हिंदी पर ज़ोर तथा प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में देने की बात की गई, जिससे हिंदी माध्यम को पुनः बल मिला।

अमित शाह

देश के गृह मंत्री जी के हिंदी दिवस 2019 का ऐतिहासिक वक्तव्य, जिसमें शाह जी ने हिंदी दिवस के अवसर पर कहा "भारत की एकता के लिए एक भाषा होना आवश्यक है और वह भाषा हिंदी हो सकती है।" इस बयान ने पूरे देश में हिंदी भाषा को राष्ट्रीय विमर्श के केंद्र में ला दिया। केंद्रीय गृह मंत्री के रूप में उन्होंने राजभाषा विभाग की गतिविधियों को सक्रिय करते हुए राजभाषा के रूप में हिंदी का विस्तार किया। कार्यालयों, मंत्रालयों और शिक्षण संस्थानों में हिंदी के उपयोग की निगरानी और प्रोत्साहन को सशक्त किया।

अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र के मनीषियों का योगदान

आर्थिक क्षेत्र के दिलीप संघवी, अजॉय मेहता (आधुनिक संदर्भ में) गुजराती उद्योगपतियों और उद्यमियों ने हिंदीभाषी क्षेत्रों में रोजगार, शिक्षा और व्यापार के माध्यम से हिंदी भाषा के प्रयोग को बढ़ावा दिया।

आध्यात्मिक क्षेत्र के मोरेश्वर उपाध्याय, रवींद्रनाथ शर्मा (गुजराती संत परंपरा से जुड़े) संत परंपरा के माध्यम से हिंदी में भक्ति काव्य का प्रचार, संतों के पद हिंदी में अनूदित हुए और उत्तर भारत में लोकप्रिय बने तथा हिंदी को नई चेतना दी।

दार्शनिक और बौद्धिक क्षेत्र में अरविंद घोष (गुजरात में जन्म, दर्शन के क्षेत्र में कार्य) ने दर्शनशास्त्र की अनेक बातें हिंदी में प्रस्तुत की। उनके विचारों पर आधारित हिंदी में अनुवाद हुए, जिससे हिंदी बौद्धिक विमर्श समृद्ध हुआ।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र के गुजराती मनीषी डॉ. विक्रम साराभाई भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान के जनक रहे। यद्यपि विज्ञान में अंग्रेज़ी प्रमुख भाषा रही, फिर भी उनके नेतृत्व में हिंदी में वैज्ञानिक संप्रेषण के प्रयास हुए, जैसे इसरो के प्रसार दस्तावेजों का हिंदी अनुवाद। ग्रामीण भारत और विद्यालयों तक विज्ञान पहुँचाने हेतु हिंदी भाषायी सामग्री का सुझाव दिया।

डॉ. नागेंद्र सिंह पटेल (विज्ञान लेखक) वैज्ञानिक विषयों को सरल हिंदी में प्रस्तुत करने वाले गुजराती लेखक। उनकी विज्ञान विषयक किताबें हिंदी माध्यम के छात्रों में लोकप्रिय हैं।

कला क्षेत्र के गुजराती मनीषी मृणालिनी साराभाई प्रसिद्ध नृत्यांगना और रंगमंच कलाकार। नृत्य प्रस्तुतियों में हिंदी गीतों और कथात्मक संवाद को शामिल किया। हिंदी संवादों व गीतों के साथ नृत्य प्रस्तुतियों के माध्यम से हिंदी की सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति को मंच प्रदान किया।

अन्य मनीषीगण जैसे कि सुरेश दलाल, राजेंद्र शाह (ज्ञानपीठ विजेता) इन गुजराती साहित्यकारों की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद हिंदी भाषी पाठकों को गुजराती संवेदना से परिचय कराया। हरिन पाठक (राजनीतिक–साहित्यिक) ने गुजराती साहित्य को हिंदी मंचों पर प्रस्तुत किया। हिंदी के प्रचार–प्रसार में लगातार सक्रिय भूमिका का निर्वहन किया।

निष्कर्ष : गुजराती मनीषियों ने न केवल अपनी भाषा और क्षेत्र में कार्य किया, बल्कि हिंदी भाषा को एक राष्ट्रीय कड़ी के रूप में मानते हुए उसके विकास में रचनात्मक योगदान दिया। शिक्षा से लेकर विज्ञान, कला और संस्कृति तक, उनका योगदान भारतीय भाषाई एकता और हिंदी संवर्धन की दिशा में बहुमूल्य रहा है। इन विद्वानों ने न केवल गुजराती साहित्य को हिंदी में प्रस्तुत किया, बल्कि दोनों भाषाओं के बीच सेतु बनकर सांस्कृतिक आदान–प्रदान को भी सशक्त किया। अनुवाद करने वाले मनीषियों ने न केवल साहित्यिक अनुवाद किए, बल्कि वे हिंदी को एक समावेशी भाषा के रूप में विकसित करने में सहायक बने। उनके प्रयासों से हिंदी पाठकों को गुजराती जनजीवन, संस्कृति और विचारधारा का समृद्ध परिचय मिला। उन्होंने यह सिद्ध किया कि भाषाएं जब साथ चलती हैं, तो संस्कृति और राष्ट्र दोनों मजबूत होते हैं। गुजराती धारावाहिकों और हिंदी टीवी उद्योग में गुजराती योगदान को भी हिन्दी के संवर्धन के लिए नकारा नहीं जा सकता है। कई गुजराती मूल के कलाकार हिंदी धारावाहिकों के प्रसिद्ध चेहरे बने जैसे– परेश

रावल, सुप्रिया पाठक, राजीव मेहता, दिलीप जोशी (तारक मेहता) जैसे कलाकारों ने हिंदी टीवी में अपनी पहचान बनाई। तारक मेहता का 'उल्टा चश्मा' जो गुजराती लेखक तारक मेहता की साहित्यिक रचना पर आधारित है जिसमें गुजराती परिवार, संस्कृति और बोलियों को दिखाया गया इससे गुजराती भाषा की कई कहावतें, शैली और व्याकरण हिंदी में समाहित हुए। गुजराती फ़िल्मों और धारावाहिकों ने केवल मनोरंजन नहीं किया, बल्कि हिंदी भाषा को क्षेत्रीय सीमाओं से उठाकर एक सर्वस्वीकृत संवाद भाषा बनाने में मदद की। गुजराती सिनेमा के प्रारंभिक दौर में कई फ़िल्में हिंदी–गुजराती मिश्रित संवादों के साथ बनाई गईं तथा गुजराती धार्मिक और सामाजिक फ़िल्मों को हिंदी में डब कर पूरे भारत में प्रदर्शित किया गया, जिससे हिंदी दर्शकों को गुजराती संस्कृति से जोड़ने में मदद मिली। गुजराती फ़िल्म, धारावाहिक और हिंदी भाषा के विकास का आपस में गहरा संबंध रहा है। हिंदी ने गुजराती माध्यमों से व्यापक दर्शक वर्ग पाया। वहीं, गुजराती रचनात्मकता ने हिंदी को सांस्कृतिक विविधता और हास्य–रस से समृद्ध किया।

गुजरात के प्रमुख पर्यटन और धार्मिक स्थल सोमनाथ मंदिर, द्वारका, अंबाजी, पालनपुर, गिरनार, शंकराचार्य पीठ, सांस्कृतिक कच्छ का रण उत्सव, अहमदाबाद हेरिटेज वॉक, सिद्दी सैयद जाली ऐतिहासिक पावागढ़, चंपानेर, साबरमती आश्रम, लोथल, धोलावीरा पर्यावरणिक गिर जंगल, ब्लैकबक अभयारण्य, कच्छ मरुस्थल, नर्मदा तट आदि ने हिंदी को केवल संपर्क भाषा नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समरसता का सेतु बना दिया है। यहाँ तीर्थ, विरासत, व्यापार और संस्कृति सभी क्षेत्रों में हिंदी का जीवंत प्रयोग यह प्रमाणित करता है कि जब क्षेत्रीय पहचान और राष्ट्रभाषा मिलते हैं, तो राष्ट्रीय एकता को एक नई ऊर्जा मिलती है। गुजराती व्यापारी वर्ग, जो अपने व्यापारिक चातुर्य, उद्यमशीलता और विश्वव्यापी प्रवास के लिए प्रसिद्ध है, ने हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में एक मजबूत और स्थायी भूमिका निभाई है न केवल भारत में, बल्कि विदेशों में भी, ये व्यापारी जहां भी गए, उन्होंने वहां के स्थानीय लोगों के साथ संपर्क के लिए हिंदी का प्रयोग किया। हिंदी, जो सरल और व्यापक संपर्क भाषा रही, व्यापार की व्यवहारिक भाषा बन गई। प्रवासी व्यापारियों ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी का प्रसार कर हिंदी का संवर्धन किया है, खाड़ी देश, अफ्रीका (केन्या, युगांडा, तंज़ानिया) यूनाइटेड किंगडम, अमेरिका और कनाडा लंदन, न्यू जर्सी, टोरंटो जैसे नगरों में बसे व्यापारियों द्वारा हिंदी में व्यवसाय, सेवा, दुकानदारी होती है, जिससे हिंदी को स्थायी सामाजिक आधार मिला। इन्होंने हिंदी भाषा में मंदिरों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों, रेडियो और न्यूज़लेटर के माध्यम से प्रचार किया। गुजराती व्यापारियों के सहयोग से हिंदी स्कूल, मंच और संस्थान संचालित हैं। हिंदी साहित्य, मीडिया और फिल्म जगत में सहयोग गुजराती व्यापारियों ने हिंदी पुस्तकों के प्रकाशन, वितरण और बिक्री में निवेश के माध्यम से किया। हिंदी फिल्मों की वित्तीय सहायता, वितरण और थिएटर संचालन में अग्रणी भूमिका निभाई। कई हिंदी समाचार पत्रों में विज्ञापन देकर भाषा की आर्थिक स्थिरता को बल दिया। गुजराती व्यापारियों ने यह सिद्ध किया कि भाषा व्यवसाय की दीवार नहीं, बल्कि सेतु हो सकती है। उन्होंने हिंदी को सामाजिक, धार्मिक, व्यावसायिक और सांस्कृतिक संवाद की भाषा के रूप में सम्मान दिया। साहित्य, भक्ति, संत परंपरा, लेखन, कला, विज्ञान, व्यापार सभी क्षेत्र के गुजराती मनीषियों का हिंदी परिवार सदैव ऋणी रहेगा, क्योंकि इन मनीषियों ने हिंदी का संवर्धन ही नहीं किया है, 'भारत की आत्मा' का संरक्षण भी किया है।

हिंदी के प्रचार–प्रसार में गुजरात के विद्वानों का अविस्मरणीय योगदान

– दिव्या शुक्ला
शोधार्थी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

भारत विविध भाषाओं और संस्कृतियों का देश है। यहाँ प्रत्येक राज्य की अपनी भाषा, संस्कृति और साहित्यिक परंपरा है। अनेक भाषा और संस्कृतियों के होते हुए भी उनमें एक अद्‌भुत समभाव तथा एकरूपता पायी जाती है जो भारत को एकसूत्र में बांधकर रखती है। इसीलिए भारत जैसे बहुभाषी देश में हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। फिर भी स्वाधीनता आंदोलन के समय हिंदी राष्ट्रीय चेतना और जन जागरूकता का माध्यम बनी और यह कार्य हमारे मनीषियों ने कर दिखाया। प्रसिद्ध बांग्ला कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी हिंदी की महत्ता को रूपायित करते हुए कहा था "भारतीय भाषाएं नदियां हैं लेकिन हिंदी महानदी है।" इसकी इसी सर्वव्यापकता को देखते हुए ही हमारे संविधान निर्माताओं ने इसे भारत की राजभाषा के रूप में उल्लिखित किया। हिंदी को यह स्थान दिलाने में समस्त भारत के विद्वानों, राजनेताओं, समाज सुधारकों की अतुलनीय भूमिका रही है। जिसमें गुजरात राज्य अग्रणी रहा है। गुजरात की मिट्टी से अनेक ऐसी प्रतिभाएँ उभरी हैं जिन्होंने सिर्फ़ गुजराती साहित्य ही नहीं, बल्कि हिंदी भाषा और उसकी साहित्यिक समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान दिया। हिंदी–गुजराती भाषाई संवाद, अनुवाद कार्य, शैक्षणिक एवं संस्थागत प्रयासों, साथ ही सामाजिक.राजनीतिक चेतना के माध्यम से गुजरात के मनीषियों ने हिंदी को एक राष्ट्रीय संवाद भाषा के रूप में आगे बढ़ाया।

हिंदी भाषा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –

भाषा कोई स्थिर जड़ इकाई नहीं बल्कि सतत गतिशील प्रक्रिया है। भाषा की यही गतिशीलता संस्कृत से 'खड़ी बोली हिंदी' के विकास का आधार बनी। संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिंदी से होते हुए हिंदी क्रमिक रूप से विकसित हुई है। 14 सितंबर 1949 को संविधान के भाग 17, अनुच्छेद 343 में हिंदी के खड़ी बोली स्वरूप को भारत की राजभाषा का दर्ज़ा प्रदान किया गया। हमारे संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को शामिल किया गया है। जिसमें हिंदी, जो भारत में लगभग 42% लोगों द्वारा बोली, लिखी और समझी जाती है आज देश की संपर्क भाषा और राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। हिंदी के विकास और संवर्धन में न केवल उत्तर भारत के, बल्कि देश के अन्य क्षेत्रों के विद्वानों और मनीषियों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिनमें सी. राजगोपालाचारी, महात्मा गांधी, राजाराम मोहन राय, केशवचंद्र सेन, दयानंद सरस्वती, चंद्रशेखर आजाद, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, बालगंगाधर तिलक और सर टी. राघवाचार्य आदि विद्वान् उल्लेखनीय हैं। इसी क्रम में गुजरात के मनीषियों का योगदान भी अत्यंत सराहनीय है। यद्यपि गुजरात की मूल भाषा गुजराती है, फिर भी वहाँ के अनेक विद्वानों ने हिंदी के प्रचार–प्रसार और साहित्यिक समृद्धि में महती भूमिका निभाई है। जिनमें दयानंद सरस्वती, महात्मा गांधी, कस्तूरबा गांधी, कन्हैयालाल मनिकलाल मुंशी, रघुवीर चौधरी, काका कालेलकर, फूलचंद गुप्ता आदि हैं।

इनका अध्ययन हम तीन कालों के आधार पर करेंगे –

1. स्वाधीनता आंदोलन के पूर्व गुजराती मनीषियों का योगदान
2. स्वाधीनता आंदोलन के दौरान गुजराती मनीषियों का योगदान
3. स्वाधीनता आंदोलन के उपरांत गुजराती मनीषियों का योगदान

1. **स्वाधीनता आंदोलन के पूर्व गुजराती मनीषियों का योगदान–** इस काल में हिंदी भाषा अपने विकास की प्रक्रिया में थी। वह संस्कृत, पालि, प्राकृत फिर अपभ्रंश से विकसित होकर वर्तमान स्वरूप में आई। ऐसे में तत्कालीन मनीषियों और साहित्यकारों ने हिंदी को प्रत्यक्ष रूप से नहीं बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से संवर्धित किया। इस दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण विद्वानों का विवरण समीचीन है–

1. हेमचंद्रः

ये गुजरात के सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंह (संवत् 1150–1199) और उनके भतीजे कुमारपाल (संवत् 1199–1230) के दरबार में रहते थे। हेमचंद्र अपने समय के सबसे प्रसिद्ध जैन आचार्य थे। इन्होंने एक बृहत् व्याकरण ग्रंथ 'सिद्ध हेमचंद्र शब्दानुशासन' सिद्धराज के समय में लिखा, जिसमें संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश तीनों का समावेश किया।[1] यह ग्रन्थ आगे चलकर हिंदी व्याकरण और उसके इतिहास की पृष्ठभूमि बना।

2. दादूदयालः

इनका जन्म संवत् 1601 में गुजरात के अहमदाबाद में हुआ। सिद्धांत की दृष्टि से ये कबीर मार्ग के अनुयायी थे परंतु इन्होंने अपना एक अलग पंथ भी चलाया जो 'दादू पंथ' के नाम से विख्यात हुआ। दादूदयाल की गणना हिंदी के भक्तिकालीन निर्गुणपंथी कवियों में आदर सहित होती है। दादू समाज सुधारक, उपदेशक, और निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। इनकी भाषा के संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है – "दादू की बानी अधिकतर कबीर की साखी से मिलते–जुलते दोहों में है, कहीं–कहीं गाने के पद भी हैं। भाषा मिली–जुली पश्चिमी हिंदी है जिसमें राजस्थानी का मेल भी है। इन्होंने कुछ पद गुजराती, राजस्थानी और पंजाबी में भी कहे हैं।"[2] इस कथन से स्पष्ट है कि दादू दयाल ने अपनी वाणी में प्रचलित बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया। उनकी भाषा में ब्रज, खड़ी बोली और राजस्थानी का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है। अतः उन्होंने हिंदी भाषा को जनमानस की भाषा बनाने और उसके पृष्ठभूमि निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

3. मीराबाईः

मीराबाई (1498–लगभग 1547) हिंदी भक्ति आंदोलन की प्रमुख कवयित्रियों में से एक थीं। मीराबाई का योगदान हिंदी भाषा के लिए सर्वमान्य है। "मीराबाई यद्यपि जन्म से गुजराती नहीं थीं तथापि उनके जीवन के प्रायः अन्तिम 15 वर्ष गुजरात में ही व्यतीत हुए। गुजरात में मीरा की भावप्रवण वाणी का प्रसार कदाचित नरसी मेहता से भी अधिक है।"[3] मीरा ने अपनी रचनाओं में ब्रजभाषा, राजस्थानी और खड़ी बोली का सुंदर मिश्रण किया। उन्होंने क्लिष्ट संस्कृत या फारसी के बजाय आम लोगों की बोलचाल की भाषा को अपनाया। यही कारण है कि उनके पद गाँव–गाँव में आज भी गाए जाते हैं।

4. महामती प्राणनाथः

महामती प्राणनाथ (1618–1694) भक्तिकालीन संत, दर्शनशास्त्री, कवि और समाज सुधारक थे। वे प्राणामी संप्रदाय (प्रणामी पंथ) के प्रवर्तक माने जाते हैं। उनका जन्म गुजरात के जामनगर में हुआ था। उन्होंने हिंदी, गुजराती, अरबी, फारसी, संस्कृत और सिंधी भाषाओं में गहन ज्ञान प्राप्त किया और बहुभाषी ग्रंथों की रचना की। उनका हिंदी भाषा, साहित्य और विचार–जगत में योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, विशेषकर धार्मिक सहिष्णुता, भक्ति आंदोलन, और हिंदी को लोकभाषा के रूप में सुदृढ़ करने के संदर्भ में। इनकी भाषा में गुजराती, अवधी, ब्रज, अरबी–फ़ारसी, संस्कृत आदि के शब्दों का समावेश मिलता है, जिससे यह भाषा बहुभाषिक भारतीय जनता की आवाज़ बन गई। उनकी यही लेखन शैली आगे चलकर हिंदी में निर्गुण भक्ति और संत काव्य परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी बनती है।

इनके अतिरिक्त इस काल में नरसी मेहता, पीपा, रैदास आदि ने भी गुजराती हिंदी साहित्य और भाषा के संवर्धन में योगदान दिया।

2. स्वाधीनता आंदोलन के दौरान गुजराती मनीषियों का योगदान –

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल एक राजनीतिक संघर्ष नहीं था, बल्कि यह एक सांस्कृतिक और भाषायी पुनर्जागरण का प्रतीक भी था। इस आंदोलन के दौरान देश की विभिन्न भाषाओं में राष्ट्रीय चेतना का संचार हुआ, जिनमें हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में प्रमुख भूमिका निभाई। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में गुजरात की भूमि एक उर्वर केंद्र रही है जहां से अनेक क्रांतिकारी विचार, सत्याग्रह आंदोलनों और नेतृत्व की प्रेरणा उत्पन्न हुई। गुजरात न केवल महात्मा गांधी की जन्मभूमि रहा, बल्कि सरदार वल्लभभाई पटेल, रविशंकर महाराज, इंदरलाल याज्ञिक, कस्तूरबा गांधी, कानजी द्वारका, नवलकिशोर शर्मा जैसे अनेकों मनीषियों की भी जन्मदात्री है। इन मनीषियों ने अपने विचार, लेखन, संगठन और आंदोलनों के माध्यम से हिंदी के प्रचार–प्रसार और संवर्धन में उल्लेखनीय कार्य किए। जिनका विवरण निम्नलिखित है –

1. स्वामी दयानंद सरस्वतीः

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती (1824–1883) एक भारतीय महान चिंतक, विचारक और समाज सुधारक थे। वे न केवल धार्मिक पुनर्जागरण के अग्रदूत थे, बल्कि उन्होंने भारतीय भाषाओं, विशेषतः हिंदी के प्रचार–प्रसार और संवर्धन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी दृष्टि में भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण और सांस्कृतिक चेतना का आधार है। वे कहते थे "मेरी आँखें उस दिन को देखने के लिए तरस रही हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा (हिंदी) बोलने और समझने लग जाएं।" स्वामी दयानंद ने संस्कृत और गुजराती के प्रखंड विद्वान् होते हुए भी अपनी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी भाषा में की। यह ग्रंथ न केवल धार्मिक सुधार का घोषणापत्र था, बल्कि हिंदी गद्य लेखन की दृष्टि से भी क्रांतिकारी साबित हुआ। स्वामी दयानंद ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने अपनी शिक्षा के माध्यम से हिंदी भाषा को जन–जन तक पहुंचाने का काम किया। आर्य समाज द्वारा संचालित गुरुकुलों और विद्यालयों में भी हिंदी को प्राथमिक भाषा बनाया गया।

2. नर्मदाशंकर लालशंकर दवे:

'नर्मद' उपनाम से विख्यात नर्मदाशंकर (1833–1886ई.), गुजराती भाषा के पहले आधुनिक लेखक, समाज सुधारक और राष्ट्रवादी विचारक माने जाते हैं। उन्होंने न केवल गुजराती भाषा का आधुनिकीकरण किया, बल्कि हिंदी के संवर्धन, भारतीय भाषाओं की एकता और राष्ट्रभाषा के विचार को भी प्रबल समर्थन दिया। वे 1880 के दशक में हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का पुरजोर समर्थन करने वाले विद्वान थे। गुजराती साहित्य के आधुनिक युग का शुभारंभ इन्हीं से माना जाता है। वे युगप्रवर्त्तक साहित्यकार थे। जिस प्रकार हिंदी साहित्य में आधुनिक काल के आरंभिक अंश को 'भारतेंदु युग' की संज्ञा दी जाती है, उसी प्रकार गुजराती में नवीन चेतना के प्रथम कालखंड को 'नर्मद युग' कहा जाता है। हरिश्चंद्र की तरह ही उनकी प्रतिभा भी सर्वतोमुखी थी। उन्होंने गुजराती साहित्य को गद्य, पद्य सभी दिशाओं में समृद्धि प्रदान की, किंतु काव्य के क्षेत्र में उनका स्थान विशेष है। आधुनिक गुजराती साहित्य के चोटी के लेखक श्री के० एम० मुंशी ने नर्मदाशंकर को 'आधुनिक साहित्यकारों में प्रथम' निरूपित किया है। उनकी जीवनी के लेखक और मित्र प्रसिद्ध आलोचक नवलराम ने उन्हें 'अपने युग की जान' माना है।[4]

3. गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठी:

गोवर्धनराम माधवराव त्रिपाठी (1855–1907) आधुनिक गुजराती साहित्य के प्रमुख निर्माता, चिंतक और 'सरस्वतीचंद्र' जैसे कालजयी उपन्यास के रचयिता थे। सरस्वतीचन्द्र मूल रूप से गुजराती भाषा में रचित है जिसका हिंदी अनुवाद आलोक गुप्ता और वीरेंद्रनारायण सिंह द्वारा किया गया। जिसे साहित्य अकादमी, नई दिल्ली ने प्रकाशित किया। यह उपन्यास 19वीं सदी की पृष्ठभूमि में लिखा गया है। जो गुजरात ही नहीं समस्त उत्तर भारत में अत्यंत लोकप्रिय है। 1968 में जारी हिंदी फिल्म सरस्वतीचंद्र इसी उपन्यास पर आधारित थी। यह भी एक प्रकार से हिंदी–गुजराती भाषाओं के संवर्धन में महत्वपूर्ण है।

4. महात्मा गांधी:

भारतीय स्वाधीनता के युग पुरुष महात्मा गांधी (1869–1948) हिंदी के सबसे बड़े समर्थकों में थे। उन्होंने हिंदी को जनमानस की भाषा के रूप में स्वीकार किया और स्वतंत्र भारत के लिए इसे राष्ट्रभाषा बनाने की पुरजोर वकालत की। गांधी जी ने कहा था "हिंदी हिंदुस्तान की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। यह करोड़ों भारतीयों की भाषा है और इसे हम सबको सीखना चाहिए।"[5] वास्तव में गांधी जी ने हिंदी के विकास और संवर्धन के लिए अनेक संगठन और सम्मेलन आयोजित किए। दक्षिण भारत में उनके प्रचार के विषय में रामविलास शर्मा अपनी पुस्तक 'भाषा और समाज' में लिखते हैं "दक्षिण भारत में गांधी जी और उनके अनुयायियों–सहयोगियों ने जितना हिंदी प्रचार किया, उतना और किसी नेता, राजनीतिक पार्टी या सांस्कृतिक संस्था ने नहीं किया।"[6] वे 'हिंदुस्तानी' (हिंदी और उर्दू का मिश्रण) को सम्पर्क भाषा के रूप में प्रस्तुत करते थे ताकि सभी धर्मों और वर्गों को एकसाथ जोड़ा जा सके। जैसा कि उदय नारायण दुबे लिखते हैं – ''गांधी जी का हिंदी–प्रेम स्वयं हिंदी सीख लेने और दूसरों को हिंदी पढ़ने का परामर्श देने तक ही सीमित नहीं था, बल्कि इनके हिंदी प्रेम की सीमा सुदूर दक्षिण भारत के हिंदीतर भाषी प्रांतों में हिंदी प्रचार तक विस्तृत थी। हिंदी–प्रचार एवं हिंदीतर भाषी प्रांतों में हिंदी पढ़ाने की समुचित व्यवस्था करना

उनके सार्वजनिक जीवन का स्थायी कार्यक्रम बन चुका था।''[7] उन्होंने हिंदी के संवर्धन हेतु कई पत्र–पत्रिकाएं भी प्रकाशित कीं, जैसे – 'हरिजन', 'नवजीवन'। इन पत्रिकाओं ने हिंदी पाठकों को स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक सुधारों से जोड़ने के साथ हिंदीतर भाषी जनता में भी हिंदी के प्रति लगाव उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध हुई। गांधीजी की विचारधारा में हिंदी केवल भाषा नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का माध्यम थी। उनके द्वारा 1920 में स्थापित गुजरात विद्यापीठ हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार का प्रमुख केंद्र रहा है।

5. सरदार वल्लभभाई पटेल:

भारत के लौह पुरुष सरदार पटेल (1875–1950), ने हिंदी को प्रशासनिक और राष्ट्रीय एकता की भाषा के रूप में देखा। उन्होंने अपने भाषण (सरदार पटेल के भाषण संग्रह, 1948) में कहा था–

"एक देश, एक भाषा ही हमारी राष्ट्रीयता को मजबूत कर सकती है।" सरदार पटेल ने हिंदी को राजभाषा बनाए जाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान सभा में उन्होंने हिंदी को राजकीय कार्यों की भाषा बनाने की मांग का समर्थन किया। गुजरात विद्यापीठ में ही 1946 में हिंदी–हिंदुस्तानी प्रचार समिति की स्थापना हुई, जिसके प्रथम अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल थे। इस समिति ने हिंदी शिक्षण को गुजरात में सुलभ बनाने के लिए परीक्षा पद्धतियाँ, प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं प्रचार–सामग्री विकसित की।

6. काका कालेलकर:

कालेलकर जी (1885–1981) एक प्रसिद्ध समाजसेवी, लेखक और गांधीवादी विचारक थे। वे मूलतः गुजराती भाषी थे, लेकिन उन्होंने हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार और संवर्धन में जो योगदान दिया, वह उल्लेखनीय एवं ऐतिहासिक है। वे गांधीवादी विचारधारा के प्रवक्ता, शिक्षाविद्, साहित्यकार और बहुभाषाविद् थे। उन्होंने हिंदी साहित्य सम्मेलन, गुजरात विद्यापीठ और राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के माध्यम से हिंदी भाषा के प्रचार में भागीदारी की। वे मानते थे "हिंदी को राष्ट्रीय एकता का सेतु बनाना हमारी सांस्कृतिक आवश्यकता है।" काका कालेलकर ने अनेक पुस्तकें हिंदी में लिखीं तथा गुजराती साहित्य का हिंदी में अनुवाद भी किया। उनकी प्रमुख हिंदी रचनाएँ – जीवन–योग, बापू के चरणों में, रचनात्मक क्रांति। वे 1955 में भारत सरकार द्वारा गठित भाषा आयोग (Language Commission) के अध्यक्ष बने, जिसे आमतौर पर "कालेलकर आयोग" कहा जाता है। उनके कार्यों से यह स्पष्ट होता है कि वे हिंदी को राष्ट्रीय चेतना की भाषा बनाना चाहते थे।

7. झवेरचंद मेघाणी:

झवेरचंद मेघाणी (1896–1947) गुजराती भाषा के सुप्रसिद्ध लोककवि, लेखक, संपादक, स्वतंत्रता सेनानी और सामाजिक कार्यकर्ता थे। उन्हें "लोककवि" की उपाधि गांधीजी ने दी थी। उन्होंने गुजराती के साथ हिंदी भाषा साहित्य के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान दिया है। मेघाणी जी ने गुजराती लोकगीतों, वीरगाथाओं और जनकथाओं का हिंदी में अनुवाद कर हिंदीभाषी पाठकों तक पहुंचाया। उनकी प्रमुख हिंदी रचनाएँ – सोनल कथा, सौराष्ट्र के वीरों की गाथा, राणक देवी आदि हैं। वे गांधीजी के प्रबल अनुयायी थे। जब वे 'विदेशी वस्त्रों की होली' और 'सत्याग्रह' आंदोलनों में भाग लेते थे, तो अपने भाषणों और गीतों में हिंदी का उपयोग करते थे ताकि वह आम जनता तक पहुंच सके। यह सराहनीय प्रयास था।

8. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी:

के. एम. मुंशी (1887–1971ई.) का हिंदी साहित्य और भारतीय सांस्कृतिक चेतना के विकास में अत्यंत व्यापक और बहुआयामी योगदान रहा है। वे एक कुशल लेखक, स्वतंत्रता सेनानी, शिक्षाविद, और संस्थापक थे। उनकी दृष्टि केवल गुजरात तक सीमित नहीं थी, बल्कि वे भारतीय संस्कृति, और भाषाई एकता के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने "हिंदी भाषा को सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की रीढ़" की संज्ञा दी थी। मुंशी जी गुजराती भाषा के महान उपन्यासकार थे, लेकिन उन्होंने अपनी कई रचनाएँ हिंदी में भी अनूदित करवाईं। उनकी ऐतिहासिक, पौराणिक और सामाजिक उपन्यासों की शृंखला हिंदी में लोकप्रिय हुई। जैसेः "पृथ्वीवल्लभ", "जय सोमनाथ", "राजाधिराज", भगवान परशुराम"। मुंशी जी ने 1938 में "भारतीय विद्या भवन" की स्थापना की, जिसका उद्देश्य था – भारतीय संस्कृति, भाषा और शिक्षा का प्रचार। प्रारम्भ में (1915) 'यंग इंडिया' के संयुक्त सम्पादक बने। सन् 1938 से भारतीय विद्या भवन के आजीवन अध्यक्ष और 'भवन्स जर्नल' के सम्पादक रहे। सन् 1937–47 के दौरान दस वर्षों तक 'गुजराती साहित्य परिषद' के अध्यक्ष–पद पर काम किया। सन् 1944 में हिंदी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता की।[8] इस संस्था ने हिंदी साहित्य, भारतीय दर्शन, इतिहास, और संस्कृति पर आधारित सैकड़ों हिंदी पुस्तकों का प्रकाशन किया।

3. स्वाधीनता आंदोलन के उपरांत गुजराती मनीषियों के योगदान

1. रविशंकर महाराजः

रविशंकर व्यास (1884–1984), जिन्हें रविशंकर महाराज के रूप में जाना जाता है, गुजरात के एक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी और ग्राम सुधारक थे। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में कई आंदोलनों का नेतृत्व किया। उन्होंने ग्रामीण भारत में हिंदी के प्रचार–प्रसार में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने शिक्षा और ग्राम स्वराज के माध्यम से हिंदी को जनजीवन में स्थापित करने का अथक प्रयास किया। वे मानते थे कि हिंदी जनसंवाद की सबसे प्रभावी भाषा है और यह ग्रामविकास की धुरी बन सकती है।

प्रमुख कार्यः

- ग्राम स्वराज और ग्राम सुधार कार्यक्रम के माध्यम से जनजागरण।
- 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भागीदारी और जेल यात्रा।
- स्वतंत्रता के बाद भी राष्ट्रनिर्माण में योगदान, विशेषतः गुजरात के आदिवासी क्षेत्रों में।

2. मोरारजी देसाई :

मोरार जी देसाई(1896–1995) स्वतंत्र भारत के चौथे प्रधानमंत्री (1977–1979) हुए। वे प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी एवं नैतिक राजनीति के प्रतीक माने जाते हैं। मूलतः गुजराती भाषी होते हुए भी उन्होंने हिंदी को राजकाज की भाषा के रूप में स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने संविधान में वर्णित दिशा–निर्देशों का समर्थन करते हुए यह स्पष्ट किया कि भारत में प्रशासनिक और शासकीय कार्यों में हिंदी को प्रमुखता मिलनी चाहिए। एक दूसरे के साथ, एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक, जब तक एक भाषा में हम व्यवहार नहीं कर सकते तब तक बिरादरी

का भाव इतना पैदा ही नहीं हो सकता है। और वह काम हिंदी ही कर सकती है, इसमें मुझे कोई शक नहीं है।[9] मोरारजी देसाई का हिंदी के प्रति प्रेम केवल वैचारिक न होकर व्यावहारिक और संस्थागत स्तर पर था। उन्होंने अपने प्रशासनिक निर्णयों और सरकारी नीति निर्माण में हिंदी को प्राथमिकता दिलाई और राजभाषा के रूप में उसे स्थापित करने के लिए अनेक प्रभावशाली कदम उठाए।

3. उमाशंकर जोशी:

हिंदी और गुजराती के सेतु कहे जाने वाले उमाशंकर जोशी (1911–1988) गुजराती भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार, चिंतक, स्वतंत्रता सेनानी और शिक्षाविद् थे। वे हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के प्रति गहरी संवेदना रखते थे। उनकी दृष्टि में भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीय चेतना की वाहक है। उन्होंने गुजराती साहित्य के साथ–साथ हिंदी भाषा और साहित्य के संवर्धन में भी विशिष्ट योगदान दिया। वे मानते थे कि भारतीय भाषाओं के आपसी संवाद में हिंदी एक सेतु की भूमिका निभा सकती है। वे 1978–1983 तक साहित्य अकादमी (दिल्ली) के अध्यक्ष रहे। 'निशीथ एवं अन्य कविताएं' पुस्तक उनकी हिंदी के पाठकों को समर्पित है। उनका दृष्टिकोण भारत की भाषिक एकता में हिंदी की केंद्रीय भूमिका को स्पष्ट करता है।

4. रघुवीर चौधरी :

गुजरात के सुप्रसिद्ध साहित्यकार रघुवीर चौधरी ने हिंदी साहित्य के संवर्धन में उल्लेखनीय कार्य किया है। इनका जन्म 5 दिसंबर 1938 को गुजरात के बापूपुरा में हुआ था। ये गुजराती भाषा के प्रतिष्ठित उपन्यासकार, कवि, नाटककार और विचारक हैं। 2015 में इन्हें भारत के सर्वोच्च साहित्यिक 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। उनके लेखन में भारतीय संस्कृति, राजनीति और साहित्य की गहन समझ दिखाई देती है। वे साहित्य अकादमी (दिल्ली) की कार्यसमिति में भी रहे। वहाँ अन्य भारतीय भाषाओं में हिंदी के अनुवाद और विमर्श को बढ़ावा देने में योगदान दिया। उनकी कई प्रसिद्ध रचनाओं का हिंदी में अनुवाद हुआ। जिसमें उपन्यास "अवाज नी अंदर अवाज" का हिंदी अनुवाद "आवाज़ के भीतर की आवाज़" शीर्षक से प्रसिद्ध हुआ।

5. फूलचंद गुप्ता :

इनका जन्म 30 अक्टूबर, 1958 को हिम्मतनगर, गुजरात में हुआ था। फूलचंद गुप्ता हिंदी और गुजराती दोनों में सिद्धहस्त कवि एवं लेखक हैं। उन्होंने विशेष रूप से गुजराती दलित कविता को हिंदी में अनूदित कर हिंदी साहित्य को नए आयाम दिए। उनका संपादन 'गुजराती दलित कविता' का हिंदी संस्करण एक बहुचर्चित संग्रह है, जिसने गुजराती दलित साहित्य को हिंदी पाठकों तक पहुंचाया।[10] उन्होंने हिंदी और गुजराती में कविताएं, लघु कथाएं और निबंध लिखे हैं। कविता संग्रहः इसी माहोल में (1997), हे राम (2002), सांसत में है कबूतर (2003), कोई नहीं सुनाता आग के संस्मरण (2006), राख का ढेर (2010), कोट की जेब से झांकती पृथ्वी (2012), दीनू और कौवे (2012), झरने की तरह (2013), फूल और तितली (2014), तिमिर का दुर्ग (2021), यह कालखंड उपजाऊ है (2023) आदि इनकी हिंदी रचनाएं हैं। उन्हें हिंदी साहित्य में क्रांतिकारी लेखक के रूप में जाना जाता है।

निष्कर्ष –

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गुजराती मनीषियों ने हिंदी भाषा के संवर्धन में जो योगदान दिया है, वह भारतीय भाषाई एकता, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और राष्ट्रीय चेतना के विस्तार में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। उन्होंने एक ओर जहां साहित्य और चिंतन को बढ़ावा दिया, वहीं भारतीय स्वाधीनता आंदोलन को एक वैचारिक और भाषाई आधार प्रदान किया। महामति प्राणनाथ, दादूदयाल जैसे आध्यात्मिक संतों ने हिंदी में ज्ञान का प्रचार कर जनता के व्यापक वर्ग तक संदेश पहुंचाया। सरदार वल्लभभाई पटेल ने भी हिंदी को राष्ट्रीय एकता का माध्यम मानते हुए इसके सरकारी उपयोग की वकालत की। के.एम. मुंशी जैसे संविधान निर्माता और साहित्यिक संस्था भारतीय विद्या भवन के संस्थापक ने हिंदी और गुजराती के बीच संवाद को संस्थागत रूप दिया। नर्मदाशंकर दवे ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में देखने का जो दृष्टिकोण रखा, वह आधुनिक भारत की भाषा–नीति की नींव बना। गोवर्धनराम त्रिपाठी, उमाशंकर जोशी, रघुवीर चौधरी आदि ने अपने साहित्यिक आदर्शों द्वारा हिंदी लेखकों को प्रेरित किया, तो के.एम. मुंशी ने हिंदी को प्रशासनिक, सांस्कृतिक और शिक्षा के स्तर पर प्रोत्साहन दिया। महात्मा गांधी के प्रयास तो अविस्मरणीय हैं। इस प्रकार गुजरात के अनेक महापुरुषों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में देखने का आग्रह किया और इसके प्रसार हेतु सक्रिय कार्य किया। इन सभी के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। अतः हम कह सकते हैं कि हिंदी के संवर्धन, सांस्कृतिक समरसता, राष्ट्रीय एकता और भारतीय आत्मा के पुनर्जागरण की दिशा में गुजरात के मनीषियों का योगदान एक अमूल्य उपहार है।

संदर्भ ग्रन्थ :

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, साहित्य सरोवर आगरा, पृ. सं. 28
2. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, साहित्य सरोवर आगरा, पृ. सं. 69
3. गुजरात के संतों की हिंदी साहित्य को देन, शोध प्रबंध, डॉ. रामकुमार गुप्त, जवाहर पुस्तकालय मथुरा, 1976–77, पृ. सं 96
4. भारतीय साहित्य के निर्माता, नर्मदशंकर, गुलाबदास ब्रोकर, अनुवादक आलोक मेहता, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1979 पृ 70)
5. संपूर्ण गांधी वांग्मय, खंड 66, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अप्रैल 1977
6. भाषा और समाज, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, पंचम संस्करण 2002, पृ. सं. 371
7. राजभाषा के संदर्भ में हिंदी आंदोलन का इतिहास– उदय नारायण दूबे, प्रकाशन संस्थान, शाहदरा दिल्ली, 1979, पृष्ठ– 150
8. https://@pustak-org/index-php/books/authorbooks/Kanhaiyalal/20Maniklal/20Munshi
9. राजभाषा भारती, अंक 1 अप्रैल 1978, मोरारजी देसाई का उद्बोधन, पृष्ठ 10
10. “Prof Releases Book on Hindi Translations of Gujarati Dalit Poems-” Indian Express, Feb 2024.

बापू और उनका हिंदी प्रेम

– एस.के. सनोडिया
उप प्रबंधक, एनएमडीसी लिमिटेड, हैदराबाद

महात्मा गांधी हमारे देश के महानतम नेताओं में से एक थे। वे एक प्रसिद्ध वकील, महान राजनेता, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, समाज सुधारक, सामाजिक कार्यकर्ता, अर्थवेत्ता, शिक्षाशास्त्री, विचारक, लेखक और संपादक थे जो सन् 1916 से 1948 में मृत्युपर्यन्त भारत की राजनीति के केंद्र में रहे और उस स्वतंत्रता संग्राम के मुख्य नायक रहे जिसकी परिपूर्णता हमें देश की आज़ादी के रूप में प्राप्त हुई।

अंग्रेजों के अत्याचार, शोषण एवं परतंत्रता से भारत को स्वतंत्र कराने में अनेक महापुरूषों ने योगदान दिया था। इनमें प्रमुख नेताओं में महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, मदनमोहन मालवीय, जवाहरलाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस और सरदार वल्लभ भाई पटेल इत्यादि ऐसे नाम हैं, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया था। गांधी जी ने जीवनपर्यन्त भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रयास किया और भारत को स्वतंत्र कराने में अहम् भूमिका निभाई। गांधी जी को 'राष्ट्रपिता'[1] और 'बापू'[2] आदि नामों से भी संबोधित किया जाता है। महात्मा गांधी हिंदी भाषा से निश्छल प्रेम करते थे और इसे देश की राष्ट्रभाषा बनाना चाहते थे। उन्होंने सच्चे स्वराज्य के लिए लोगों से स्वदेशी और स्वभाषा का उपयोग करने का आग्रह किया था।

इनर टेम्पल, लंदन से कानून की शिक्षा प्राप्त कर गांधी जी सन् 1891 में बैरिस्टर के रूप में भारत लौटे। उन्होंने बम्बई में वकालत प्रारंभ की, किंतु इसमें उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली। दक्षिण अफ्रीका में एक बड़ा और सफल शिपिंग व्यवसाय चलाने वाले गुजराती व्यापारी दादा अब्दुल्ला को सन् 1893 में जोहान्सबर्ग में किसी मुकदमे की पैरवी के लिए एक वकील की आवश्यकता थी। गांधी जी ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और वे दक्षिण अफ्रीका चले गए।

गांधी जी को दक्षिण अफ्रीका में आए दिन 'रंगभेद' और 'नस्लीय भेदभाव' का सामना करना पड़ा। उन्होंने इन अन्यायों के विरुद्ध आवाज़ उठाने के लिए नेटाल इंडियन कांग्रेस का गठन किया तथा सत्याग्रह एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन के माध्यम से संघर्ष किया और सफल हुए जिसके फलस्वरूप वहाँ निवासरत भारतीयों के सम्मान और अधिकारों की रक्षा हुई तथा गांधी जी को भी भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के लिए एक नया दर्शन मिला। सन् 1915 में गांधी जी भारत लौट आए।

दक्षिण अफ्रीका के संघर्षों ने गांधी जी के मन में देशप्रेम और देशभक्ति की भावना जागृत कर दी थी। भारत लौटने पर गांधी जी ने अपने राजनीतिक गुरू श्री गोपाल कृष्ण गोखले, जो एक प्रसिद्ध भारतीय राजनेता थे, के परामर्श पर सम्पूर्ण भारत की यात्रा की और भविष्य की रणनीति बनाई।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के संस्थापक पं. मदनमोहन मालवीय ने 4 फरवरी 1916 को विश्व

विद्यालय के उद्घाटन के अवसर पर व्याख्यान देने के लिए महात्मा गांधी, जगदीश चंद्र बोस, सीवी रमन और प्रफुल्ल चंद रे इत्यादि प्रतिष्ठित वक्ताओं को आमंत्रित किया था।

इस अवसर पर आमंत्रित व्यक्तियों में शाही राजा–महाराजा और एनी बेसेन्ट भी सम्मिलित थीं। मंच में सभापति के रूप में दरभंगा के महाराजा रामेश्वर सिंह उपस्थित थे। उस दिन गांधी जी ने अपने भाषण से सभी उपस्थितों को स्तब्ध कर दिया। उन्होंने अपने भाषण में मुख्य रूप से भारतीय भाषाओं के महत्व पर जोर दिया तथा अंग्रेजी भाषा के अत्यधिक प्रयोग की तीखी आलोचना की। उन्होंने कुछ समय पूर्व बंबई में सम्पन्न कांग्रेस अधिवेशन का स्मरण करते हुए कहा कि वहाँ उपस्थित श्रोताओं को केवल 'हिंदुस्तानी' में दिए गए भाषणों ने प्रभावित किया। उन्होंने कहा कि यदि पिछले 50 वर्षों में भारत में स्थानीय भाषाओं में शिक्षा दी जाती तो आज भारत स्वतंत्र होता और यहाँ के लोग शिक्षित होकर अपने राष्ट्र के हृदय की बात कर रहे होते। गांधी जी ने अभिजात्य वर्ग पर गरीबों और मजदूरों की दुर्दशा के प्रति उदासीन होने का आरोप लगाया। उन्होंने भारतीयों से भारतीय भाषाओं को अपनाने और अंग्रेजी का मोह छोड़ने के लिए कहा था। उन्होंनि कहा था कि हमारी भाषाएं ही हमारा प्रतिबिंब हैं।

इस भाषण में प्रदर्शित सच बोलने के साहस और निर्भीकता ने गांधी जी को रातों रात स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्व पूर्ण नेता के रूप में स्थापित कर दिया।

अंग्रेजी शासन द्वारा लागू अत्यधिक भूमि कर और भेदभाव के विरुद्ध गांधी जी ने किसानों और मजदूरों को संगठित करना प्रारंभ किया। सन् 1924 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस समिति का नेतृत्व संभालने के बाद गांधी जी ने महिला अधिकारों, गरीबी उन्मूलन तथा अस्पृश्यता इत्यादि के विरुद्ध विभिन्न आंदोलनों यथा बिहार का चंपारन आंदोलन, खेड़ा आंदोलन, असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन इत्यादि का सफल नेतृत्व किया और अनेक बार जेल भी भेजे गए।

सन् 1930 से 1932 के दौरान ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में संवैधानिक सुधारों पर चर्चा हेतु लंदन में आयोजित किए तीन गोलमेज सम्मेलनों में से द्वितीय सम्मेलन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस समिति के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में महात्मा गांधी ने भाग लिया था, किंतु सांप्रदायिक समस्या पर गतिरोध के कारण उक्त सम्मेलन सफल नहीं हुआ।

सन् 1939 से प्रारंभ द्वितीय विश्व युद्ध में अंग्रेजों ने बिना सहमति भारत को महायुद्ध में सम्मिलित राष्ट्र घोषित कर दिया किंतु गांधी जी ने प्रथम विश्व युद्ध में मिले विश्वासघात के कारण सहायता करने से स्पष्ट मना कर दिया और कहा कि भारतीय सैनिक आपकी तब तक सहायता नहीं करेंगे जब कि आप भारत को पूर्ण स्वतंत्र न कर दें।

अगस्त, 1942 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस समिति द्वारा पारित प्रस्ताव के अनुसार गांधी जी ने 'करो या मरो' नारे के साथ प्रसिद्ध "भारत छोड़ो आंदोलन" छेड़ दिया। इसमें भारत में ब्रिटिश शासन को तत्काल प्रभाव से समाप्त करने, युद्ध के बाद एक अस्थायी सरकार के गठन और स्वतंत्र भारत की घोषणा की माँग की गई। आंदोलन को दबाने के लिए गांधी जी एवं कांग्रेस के प्रमुख नेताओं को ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा बंदी बना लिया गया। गांधी जी जब जेल से रिहा हुए, तब अंग्रेजो की "फूट डालो और राज करो" नीति के कारण देश में राजनीतिक परिस्थितियाँ बदल चुकी थीं।

सन् 1945 में समाप्त द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात विश्व की बदली हुई राजनैतिक स्थिति, शक्तिशाली देशों में ब्रिटेन के तीसरे नंबर पर चले जाने और भारत के दूसरे राजनीतिक दलों द्वारा युद्ध का समर्थन करके संगठनात्मक शक्ति प्राप्त कर लेने तथा आज़ाद हिंद फौज के बलिदान के कारण समस्त भारतीयों के रोष ने भयंकर रूप धारण कर लिया, जिसके फलस्वरूप अंग्रेजी शासन की नींव हिल गई थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत में अंग्रेजों ने स्पष्ट संकेत दिए कि भारतीयों के हाथों में सत्ता स्थानांतरित कर दी जाएगी। इस बिंदु पर गांधी जी ने संघर्ष वापस ले लिया।

ब्रिटिश संसद द्वारा जुलाई, 1947 में भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित किया गया तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा घोषणा की गई कि भारत को 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता दी जाएगी। यह भी घोषणा की गई कि भारत को भारत और पाकिस्तान, इन दो संप्रभु राष्ट्रों में विभाजित किया जाएगा। फलस्वरूप जगह–जगह पर साम्प्रदायिक दंगे फैल गए। गांधी जी दंगों को रोकने के लिए नोआखली गए तथा दिल्ली में उपद्रव रोकने के लिए आमरण अनशन की घोषणा की। 30 जनवरी, 1948 की शाम को सायं 5.17 बजे, जब गांधी जी अपनी पोतियों के साथ बिड़ला हाउस के बगीचे में अपनी प्रार्थना सभा को संबोधित करने जा रहे थे, नाथूराम गोडसे नामक एक व्यक्ति ने गोली मारकर गांधी जी की हत्या कर दी और सत्य, अहिंसा और मानवता के पुजारी गांधी जी 'हे राम' कहते हुए महाप्रयाण कर गए।

देश की राष्ट्रभाषा के प्रति गांधी जी की चिंता :

महात्मा गांधी इस बात से अत्यधिक चिंतित रहते थे कि भारत जैसे विशाल देश की कोई एक राष्ट्रभाषा नहीं है। इसीलिए उन्होंने सम्पूर्ण भारत को एकसूत्र में बाँधने और संगठित करने के लिए एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा था कि "राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है।" उन्होंने इस गूँगेपन को दूर करने के लिए भारत के सर्वाधिक जनमानस द्वारा बोली तथा समझी जाने वाली हिंदी भाषा को उपयुक्त पाया था। उन्होंने सारे भारतवासियों को एक करने की हिंदी की शक्ति और सामर्थ्य को पहचान कर व्यवस्थित रूप से सोच विचार करने के बाद यह घोषणा की थी कि स्वराज करोड़ों भूखे मरने वालों का, करोड़ों निरक्षरों का, निरक्षर बहनों और दलितों और अन्यों का हो और उनके लिए तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रंभाषा हो सकती है।

यह सर्वविदित है कि गांधी जी स्वयं गुजराती भाषी थे और अंग्रेजी के कुशल वक्ता होने के बावजूद हिंदी को देश की राष्ट्र भाषा बनाना चाहते थे। गांधी जी कहते थे कि हजारों व्यक्तियों को अंग्रेजी सिखाना उन्हें मानसिक रूप से गुलाम बनाना है क्योंकि विदेशी भाषा बच्चों पर अनावश्यक दबाव डालने, रटने और नकल करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है तथा उनमें मौलिकता समाप्त हो जाती है।

महात्मा गांधी ने राष्ट्र भाषा के लक्षणों के बारे में कहा था कि "(1) राष्ट्रभाषा ऐसी होनी चाहिए जो प्रयोग करने वालों के लिए सरल हो, (2) उस भाषा के द्वारा भारत वर्ष का आपसी, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो सके, (3) भारत के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों, (4) राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए तथा (5) उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्प स्थायी स्थिति पर ज़ोर नहीं देना चाहिए।" उस समय और आज भी हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें महात्मा गांधी जी द्वारा राष्ट्रभाषा बनने के लिए बताए गए सभी आवश्यक लक्षण पूरे होते हैं। उक्त विशेषताओं के अतिरिक्त हिंदी के पक्ष तर्क थे कि (1) यह एक

ऐसी भारतीय भाषा थी जो देश में सबसे ज़्यादा लोगों द्वारा बोली जाती थी और हिंदी नहीं बोल पाने अन्य भाषा–भाषी लोग भी इसे समझ लेते थे (2) सीखने की दृष्टि से अन्य भाषाओं की तुलना में हिंदी सरल थी, (3) हिंदी की लिपि वैज्ञानिक थी और यह जैसी बोली जाती थी वैसी ही लिखी जाती थी तथा (4) हिंदी लचीली भाषा थी तथा इसमें सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक सभी प्रकार के कार्यों के संचालन की पूर्ण क्षमता थी।

गांधी जी ने हिंदी भाषा के विषय में कहा था कि :

"भारत का हजारों वर्षों का इतिहास साक्षी है कि कोई भी विदेशी भाषा जन मानस की भाषा नहीं हो सकती, अंग्रेजी न तो कभी रही और न रहेगी। फिर इसके द्वारा भारत के धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवहार के निभने का सवाल ही नहीं उठता। भारतीय भाषाओं के बीच हिंदी ही इस उत्तंरदायित्व का निर्वाह बहुत दिनों से करती चली आई है और आज भी ऐसी क्षमता उसमें है। उसमें अखिल भारतीय व्यावपकता है और सरलता भी।"[3]

"जो व्यक्ति अथवा संस्था "यदि" और "जब तक" शब्दों के जाल में फँसे रहे वे राजभाषा हिंदी का मार्ग प्रशस्त करने में अधिक सफलता प्राप्त नहीं कर सके। राजभाषा हिंदी की अभिवृद्धि चाहने वाले व्यक्ति कुछ वर्षों के लिए यदि यह मान लेते कि शब्दकोशों में उपर्युक्त शब्दों का अस्तित्व है ही नहीं और सीमित साधनों तथा विपरीत परिस्थितियों में दृढ़ रहकर कार्य करते रहने की बात सोचते तो वे काफी बढ़ गए होते।"[4]

गांधी जी हिंदी को एक समर्थ भाषा मानते थे :

जन्म लेने के पश्चात मनुष्य अपने स्वजनों से जो भाषा सीखता है, बोलता है या अपने भाव प्रकट करता है, उसे उसकी मातृभाषा या स्वभाषा कहा जाता है। सम्पर्क भाषा उस भाषा को कहा जाता है जिस भाषा में अलग–अलग भाषाएँ बोलने वाले व्यक्ति आपस में वार्तालाप, जनसंचार या व्यापार करते हैं तथा राजकाज की भाषा को राजभाषा कहा जाता है।

गांधी जी सम्पर्क भाषा, राजभाषा और राष्ट्रभाषा बनने के लिए हिंदी को समर्थ भाषा मानते थे।

गांधी जी द्वारा राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को स्थापित करने के लिए किए गए प्रयास :

हिंदी को राष्ट्र भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए भारत में जिन व्यक्तियों ने सबसे अधिक प्रयास किए उनमें गांधी जी का नाम सबसे पहले लिया जाता है। गांधी जी ने अपनी अधिकांश सभाओं और आंदोलनों में हिंदी भाषा में लोगों को संबोधित किया। उनके प्रसिद्ध नारे "करो या मरो" और "भारत छोड़ो" हिंदी में हैं। इस प्रकार गांधी जी ने हिंदी को राष्ट्रीय आंदोलनों की भाषा का स्वरूप प्रदान किया तथा लोक नेता के रूप में पूरे देश में हिंदी का प्रचार किया।

गांधी जी के अथक प्रयासों से ही हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार पूरे देश में हुआ और वह राष्ट्रभाषा बनने के योग्य हो पाई। गांधी जी का मानना था कि देश की एकता के लिए एक भाषा का होना जितना आवश्यक है उससे भी ज्यादा आवश्यक यह है कि वह भाषा देश से सभी लोगों में देश के प्रति प्रेम का निर्माण करे। यह क्षमता केवल हिंदी में है। गांधी जी के प्रयासों के कारण भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस समिति के सभी सदस्यों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने पर सहमति व्यक्त की थी

तथा उसे राजभाषा के रूप में स्थापित करने के लिए भूमिका तैयार की।

गांधी जी की दृष्टि में राष्ट्रभाषा और राजभाषा में ज्यादा अंतर नहीं था। "कारण यह कि भारत की अखंड राष्ट्रीयता और भावनात्मक एकता की सहज अनुभूति ने उनकी दृष्टि में ऐसी व्यापकता ला दी थी जिसके सुरम्य परिवेश में पहुँचकर राष्ट्र भाषा और राजभाषा का संश्लिष्ट चित्र देखा जा सकता था, उन्हें अलग–अलग देखना नामुमकिन था।"[5]

हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने का संकल्प :

काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा वर्ष 1910 में हिंदी भाषा, हिंदी साहित्य तथा देवनागरी लिपि के प्रचार–प्रसार के लिए 'अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना की गई थी। 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' के 28 मार्च, 2018 को इंदौर में आयोजित 8वें अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए महात्मा गांधी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का संकल्प लिया था।

अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज अपनी स्थापना के उद्देश्यों के अनुसार हिंदी साहित्यकारों को प्रोत्साहन, पाठ्यपुस्तकों, शब्द कोशों तथा संदर्भ ग्रंथों के प्रकाशन और हिंदी परीक्षाओं के आयोजन एवं अहिंदीभाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार करने के कार्य में लगा हुआ है। हिंदी साहित्य सम्मेलन अधिनियम 1962 के द्वारा इसे राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित किया गया है। इस संस्था के केंद्र उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली, पंजाब, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और बंगाल में कार्यरत हैं।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना :

दक्षिण के हिंदीतर भाषी प्रदेशों में हिंदी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्थापित करने का कार्य बहुत जटिल था क्योंकि वहाँ हिंदी का अस्तित्व बहुत कम था। इसलिए गांधी जी ने दक्षिण में हिंदी के प्रचार पर बल दिया। सन् 1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन, इंदौर के अधिवेशन में पारित प्रस्ताव के अनुसार गांधी जी ने हिंदीतर–भाषी प्रदेशों, विशेष तौर पर तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम भाषी प्रदेशों में हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार की एक विस्तृत योजना तैयार की। उन्होंने हिंदी प्रेमी और समाजसेवी सी. राजगोपालाचारी एवं सेठ जमनालाल बजाज की सहायता से दक्षिण के प्रमुख व्यक्तियों से हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए पत्र व्यवहार के माध्यम से सम्पर्क किया और समाचार पत्रों में अपने विचार प्रकट किए। उनके इन प्रयासों से दक्षिण भारत के कई युवकों ने हिंदी पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। गांधी जी ने अपने पुत्र देवदास को प्रचारक बनाकर दक्षिण भारत भेजा। धीरे–धीरे हिंदी पढ़ने वाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ने लगी। महात्माा गांधी ने स्वयं भी दक्षिण भारत में प्रवास करके वहाँ के निवासियों में राष्ट्रभाषा के प्रति जागृति लाने के लिए राष्ट्रभाषा आंदोलन चलाया। हिंदी साहित्य सम्मेलन, मद्रास कार्यालय आगे चलकर दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में स्थापित हुआ तथा यह दक्षिण भारत में एक प्रमुख हिंदी सेवी संस्था है, जो भारत के दक्षिण के राज्यों यथा तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, केरल और कर्नाटक में हिंदी के प्रचार–प्रसार का कार्य कर रही है। 1964 में संसद में अधिनियम के माध्यम से इस संस्था को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित किया गया। इस संस्था को विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रमों की शिक्षा देने और उपाधियाँ प्रदान करने का अधिकार है। महात्मा गांधी ने ही इस संस्था की नींव डाली थी और आजीवन इस संस्था के अध्यक्ष रहे।

गुजरात विद्यापीठ की स्थापना :

गांधी जी ने सन् 1920 में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना अहमदाबाद में की थी। इस राष्ट्रीय संस्था द्वारा हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए अनेक रचनात्मक कार्य किए गए।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा :

विश्व् भर में हिंदी का प्रचार–प्रसार हो, इस लक्ष्य के साथ सन् 1936 में महात्मा गांधी ने एक स्वयं संचालित राष्ट्रभाषा संस्था के रूप में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा की स्थापना की थी। एक राष्ट्र और एक राष्ट्रभाषा के महान संकल्प के साथ गांधी जी द्वारा स्थापित इस संस्था की परिकल्पना को मूर्त रूप देने में इसके संस्थापकों में सम्मिलित डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, पं. जवाहरलाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस, सरदार वल्लभ भाई पटेल, सी. राजगोपालाचारी, आचार्य नरेन्द्र देव, आचार्य काका कालेलकर, सेठ जमनालाल बजाज, शंकरदेव, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, हरिहर शर्मा, श्रीनाथ सिंह एवं नर्मदाप्रसाद सिंह इत्यादि महापुरूषों ने अथक परिश्रम किया है। इस संस्था द्वारा दूरवर्ती शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं।

समिति की भारत के दक्षिण के 4 राज्यों को छोड़कर विभिन्न राज्यों में 25 से अधिक से इकाइयाँ और 20 देशों में शाखाएं हैं जो हिंदी के प्रचार–प्रसार का कार्य कर रही हैं। संस्था द्वारा राजभाषा हिंदी एवं देवनागरी लिपि का प्रचार–प्रसार, पाठ्यपुस्तकों का निर्माण तथा हिंदी से संबंधित विभिन्न परीक्षाओं के आयोजन संबंधी कार्य किया जाता है।

आज इन संस्थाओं से जुड़ी शिक्षण संस्थाएं पूरे देश में स्थापित है तथा हिंदी के प्रचार–प्रसार के काम को आगे बढ़ा रही हैं।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि गांधी जी की दृष्टि में पूरे भारत वर्ष के लिए राष्ट्रभाषा बनने की शक्ति केवल हिंदी भाषा में निहित थी। सन् 1917 में गुजरात शिक्षा परिषद के अधिवेशन में गांधी जी ने हिंदी की महत्ता का प्रतिपादन किया और सन् 1918 में इंदौर के अधिवेशन में हिंदी के प्रति देशवासियों को उनके कर्तव्य से परिचित कराया। उन्होंने हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए सभाओं एवं आंदोलनों में हिंदी का प्रयोग किया तथा हिंदी से संबंधित संस्थाओं के निर्माण तथा संचालन आदि कार्यों के माध्यम से देश सेवा के साथ–साथ आजीवन हिंदी भाषा की सेवा की। गांधी जी राष्ट्रभाषा को देश के स्वाभिमान के साथ जोड़कर भी देखते थे। गांधी जी का हिंदी भाषा के प्रति प्रेम और समर्पण निर्विवाद है। उनके हिंदी को राष्ट्र भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के आग्रह के फलस्वरूप आज हिंदी भाषा संघ की राजभाषा के रूप में उपयोग में लाई जा रही है। हिंदी के माध्यम से ही उन्होंने देश में एकता स्थापित करने में सफलता अर्जित की थी और राष्ट्र प्रेम और राष्ट्र भाषा पर्यायवाची हो गए थे।

हिंदी भारत के बहुसंख्यक वर्ग की स्वभाषा, पूरे देश की सम्पर्क भाषा तथा संघ की राजभाषा है। भाषाओं की विविधता वाले भारत में सभी भारतीय भाषाओं से स्पर्धा किए बिना उनके मध्य संवाद की भूमिका निभाने वाली हिंदी का जन्म एक लोकभाषा के रूप में हुआ था जिसे न केवल आमजन

प्रयोग में लाते थे बल्कि कई महान कवियों एवं साहित्यकारों ने हिंदी भाषा के माध्यम से साहित्य सेवा की है।

हिंदी की वर्तमान शब्द संपदा, जो दो लाख से अधिक है, में लगभग 85% शब्द हिंदी के हैं और शेष लगभग 15% शब्द विदेशी हैं। यही हिंदी की उदार प्रवृत्ति का प्रमाण है जिसने विदेशी और अन्य भारतीय भाषाओं के शब्द ग्रहण करके अपने आपको सम्पन्न बनाया है।

अंग्रेजी और मंदारिन के बाद हिंदी विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली तीसरी भाषा है। त्रिनिदाद और टोबैगो, गुयाना, सूरीनाम तथा फिजी में भी हिंदी का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका, मध्य पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में रहने वाले अप्रवासी भारतीयों की बड़ी संख्या में हिंदी प्रचलन में है।

देश को विकसित राष्ट्र बनाने के लिए आवश्यक है कि देश में बड़े पैमाने पर अनुसंधान एवं विकास केंद्रों का शुभारंभ किया जाए तथा वहाँ पर नए आविष्कारों हेतु प्रयास किए जाएँ। किंतु यह तभी संभव है जबकि लोगों को उनकी मातृभाषा चाहे वह हिंदी हो या अन्य प्रादेशिक भाषा, का बृहद् ज्ञान हो। राजनैतिक दलों को भी आज यह विचार करने की आवश्यकता है कि वे अपने वर्तमान स्वार्थ से ऊपर उठकर भविष्य में देश के चहुँमुखी विकास की दिशा में कार्य करें तथा भारत की अपनी भाषाओं के विकास के लिए अपना योगदान दें।

स्पष्ट है कि यदि उक्त सभी क्षेत्रों में हिंदी के विकास हेतु प्रयास किए जाएँ तो निश्चय ही हिंदी भाषा सिनेमा, धारावाहिकों, खबरों तथा गाँव–देहात के किस्से–कहानियों की भाषा से ऊपर उठकर गांधी जी की इच्छानुसार राष्ट्रभाषा के रूप में ज्ञान–विज्ञान की भाषा, तकनीकी संस्थानों, कल–कारखानों और चिकित्सा क्षेत्र की भाषा बनकर देश के युवाओं के उज्ज्वल भविष्य के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। यही हमारी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

संदर्भ :

(1) 4 जून, 1944 को सिंगापुर रेडियो के प्रसारण में नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने गांधी जी को 'राष्ट्रपिता' के रूप में संबोधित किया था। सन् 1947 में सरोजनी नायडू द्वारा भी गांधी जी को 'राष्ट्रपिता' के रूप में संदर्भित किया गया था।

(2) सन् 1917 में बिहार के चंपारन जिले के एक किसान राजकुमार शुक्ला द्वारा गांधी जी को 'बापू' कहकर संबोधित किया गया था। इसी किसान के आमंत्रण पर गांधी जी चंपारन सत्याग्रह के लिए गए थे।

(3) राजभाषा के संदर्भ में हिंदी आंदोलन का इतिहास–उदय नारायण दुबे, प्रथम संस्करण 1979, पृ. 155

(4) राजभाषा हिंदी संघर्षों के बीच में – हरि बाबू कंसल, प्रथम संस्करण, पृ 179–180

(5) राजभाषा के संदर्भ में हिंदी आंदोलन का इतिहास–उदय नारायण दुबे, प्रथम संस्करण 1979, पृ. 155–156

हिंदी को गुजरात का अवदान

– मन मोहन वैश्य,
मुख्य प्रबंधक, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, गुरूग्राम

हिंदी, भारत की सांस्कृतिक और राष्ट्रीय पहचान का अभिन्न अंग, न केवल एक भाषा है, बल्कि यह भारत की एकता और विविधता को एक सूत्र में पिरोने का माध्यम भी है। गुजरात, जो अपनी समृद्ध सांस्कृतिक, साहित्यिक, और व्यापारिक परंपराओं के लिए जाना जाता है, ने हिंदी के विकास, प्रचार, और प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

1. गुजराती और हिंदी भाषा का ऐतिहासिक संबंध

गुजराती और हिंदी, दोनों ही इंडो–आर्यन भाषा परिवार की भाषाएं हैं, जिनकी जड़ें प्राचीन संस्कृत और प्राकृत भाषाओं में निहित हैं। इनका ऐतिहासिक संबंध भारत की भाषाई और सांस्कृतिक परंपराओं के विकास के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। दोनों भाषाएं मध्यकालीन भारत में विकसित हुईं और इनके बीच साहित्यिक, सांस्कृतिक, और सामाजिक आदान–प्रदान ने हिंदी के संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1.1 प्राकृत और अपभ्रंश से उत्पत्ति

हिंदी और गुजराती दोनों की उत्पत्ति प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं से हुई है। प्राकृत, जो संस्कृत का सरलीकृत रूप थी, मध्यकाल में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती थी। पश्चिमी भारत में, विशेष रूप से गुजरात और राजस्थान के क्षेत्रों में, प्राकृत का एक रूप 'गुर्जर अपभ्रंश' के रूप में विकसित हुआ, जो गुजराती भाषा का आधार बना। दूसरी ओर, हिंदी का विकास खड़ी बोली और ब्रज, अवधी, और भोजपुरी जैसी बोलियों से हुआ, जो शौरसेनी और मागधी अपभ्रंश से उत्पन्न हुई थीं। इन अपभ्रंश भाषाओं ने दोनों भाषाओं के व्याकरण, शब्दावली, और साहित्यिक परंपराओं को प्रभावित किया। उदाहरण के लिए, गुजराती और हिंदी में कई समान शब्द, जैसे 'घर' (घर), 'पानी' (पाणी), और 'खाना' (खाणु), प्राकृत और अपभ्रंश की साझा विरासत को दर्शाते हैं।

1.2 मध्यकालीन साहित्य और सांस्कृतिक आदान–प्रदान

मध्यकाल में, गुजरात के जैन और वैष्णव साहित्य ने हिंदी साहित्य को गहराई से प्रभावित किया। जैन विद्वानों ने गुजराती और हिंदी दोनों में रचनाएँ लिखीं, जो धार्मिक और दार्शनिक विचारों को फैलाने का माध्यम बनीं। उदाहरण के लिए, जैन कवि हेमचंद्राचार्य ने संस्कृत और प्राकृत के साथ–साथ गुर्जर अपभ्रंश में भी रचनाएँ कीं, जिनका बाद में हिंदी में अनुवाद हुआ। उनकी रचनाएँ, जैसे सिद्धहेम शब्दानुशासन, ने हिंदी और गुजराती दोनों की व्याकरणिक और साहित्यिक परंपराओं को प्रभावित किया।

वैष्णव भक्ति आंदोलन ने भी गुजराती और हिंदी के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु बनाया। गुजरात के भक्ति

कवि नरसी मेहता की रचनाएँ, जैसे वैष्णव जन तो तेणे कहिए, हिंदी में अनूदित हुईं और भक्ति साहित्य की समृद्ध परंपरा को बढ़ावा दिया। इसी तरह, हिंदी के भक्ति कवि सूरदास और तुलसीदास की रचनाएँ गुजरात में लोकप्रिय हुईं, जिससे दोनों भाषाओं के बीच साहित्यिक आदान–प्रदान हुआ।

1.3 व्यापार और सांस्कृतिक संपर्क

गुजरात का समुद्री व्यापार और व्यापारिक नेटवर्क भारत के अन्य हिस्सों, विशेष रूप से हिंदी भाषी क्षेत्रों, के साथ सांस्कृतिक और भाषाई संपर्क का माध्यम बना। मध्यकाल में, गुजराती व्यापारी उत्तर भारत के शहरों, जैसे दिल्ली, आगरा और मथुरा में व्यापार के लिए जाते थे, जिससे हिंदी और गुजराती के बीच शब्दों और अभिव्यक्तियों का आदान–प्रदान हुआ। उदाहरण के लिए, गुजराती शब्द 'वहाण' (जहाज) और हिंदी शब्द 'नाव' के बीच समानता व्यापारिक संपर्कों की देन है।

1.4 आधुनिक काल में भाषाई एकीकरण

आधुनिक काल में, स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्रीय एकता के प्रयासों ने हिंदी और गुजराती के बीच संबंध को और मजबूत किया। महात्मा गांधी और अन्य गुजराती नेताओं ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रोत्साहित किया, जिससे गुजरात में हिंदी का प्रचार–प्रसार बढ़ा। गुजरात के साहित्यिक और शैक्षिक संस्थानों, जैसे गुजरात विद्यापीठ, ने हिंदी और गुजराती दोनों को बढ़ावा दिया, जिससे दोनों भाषाएं एक–दूसरे की पूरक बनीं।

2. स्वतंत्रता संग्राम और हिंदी का प्रचार

2.1 महात्मा गांधीः हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा

महात्मा गांधी, जिन्हें भारत का राष्ट्रपिता कहा जाता है, हिंदी के संवर्धन में सबसे महत्वपूर्ण योगदानकर्ताओं में से एक हैं। गुजरात के पोरबंदर में जन्मे गांधीजी ने हिंदी को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बनाया। 1917 में भड़ौंच में आयोजित गुजरात शिक्षा परिषद में गांधीजी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के लिए आवश्यक पांच लक्षण बताएः सर्वसुलभता, सरलता, समृद्ध साहित्य, व्यापक स्वीकार्यता, और राष्ट्रीय एकता का आधार। इन लक्षणों ने हिंदी को एक ऐसी भाषा के रूप में स्थापित किया, जो भारत की सांस्कृतिक और भाषाई विविधता को एकजुट कर सकती थी।

गांधीजी ने हिंदी को केवल उत्तर भारत तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे दक्षिण भारत और अन्य क्षेत्रों में भी प्रचारित करने पर जोर दिया। उन्होंने हिंदी को स्वराज का हिस्सा माना, क्योंकि उनके लिए स्वतंत्रता का अर्थ केवल राजनैतिक आजादी नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और भाषाई एकता भी थी। उनकी लेखन शैली सरल, स्पष्ट और प्रभावशाली थी, जिसने हिंदी गद्य को नई दिशा दी। उनकी पत्रिकाएँ जैसे हरिजन, यंग इंडिया और नवजीवन हिंदी में प्रकाशित होती थीं, जो सामाजिक सुधार, स्वदेशी, अहिंसा और स्वतंत्रता संग्राम जैसे विषयों पर लेखों के माध्यम से हिंदी को आम जनता तक पहुंचाती थीं।

2.2 सरदार वल्लभभाई पटेलः प्रशासन में हिंदी

गुजरात के एक अन्य महान स्वतंत्रता सेनानी, सरदार वल्लभभाई पटेल, ने हिंदी को प्रशासनिक और राष्ट्रीय एकीकरण के साधन के रूप में प्रोत्साहित किया। सरदार पटेल ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान और उसके बाद हिंदी को प्रशासन में लागू करने की वकालत की। उन्होंने हिंदी को एक ऐसी भाषा के रूप में देखा, जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों को एकजुट कर सकती थी। उनके प्रयासों ने हिंदी को सरकारी कार्यवाहियों और नीति निर्माण में स्थान दिलाने में मदद की।

2.3 कस्तूरबा गांधी और महादेव देसाई

कस्तूरबा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते हुए हिंदी को जनसंपर्क का माध्यम बनाया, विशेष रूप से महिलाओं के बीच। उन्होंने हिंदी में सभाओं को संबोधित किया और सामाजिक जागरूकता फैलाने के लिए हिंदी का उपयोग किया। उनकी सादगी और प्रभावशाली संवाद शैली ने हिंदी को ग्रामीण और अशिक्षित महिलाओं तक पहुंचाया। महादेव देसाई, गांधीजी के सचिव, ने हिंदी में लेखन और अनुवाद कार्य किए। उनकी पुस्तक गीता माता का हिंदी अनुवाद हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण योगदान है। इसके अलावा, उनकी डायरी, महादेवभाई की डायरी, हिंदी में प्रकाशित हुई, जिसमें स्वतंत्रता संग्राम के दौरान की घटनाओं का विस्तृत वर्णन है। ये रचनाएँ हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में सहायक रहीं।

2.4 स्वदेशी और राष्ट्रीय जागरण

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान गुजरात के मनीषियों ने हिंदी को स्वदेशी आंदोलन और राष्ट्रीय जागरण का माध्यम बनाया। स्वदेशी आंदोलन में हिंदी के प्रचार ने इसे आम जनता की भाषा के रूप में स्थापित किया। गुजरात में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलनों और सभाओं में हिंदी का उपयोग हुआ, जिसने इसे राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बनाया।

3. साहित्यिक योगदान

3.1 नरसी मेहताः भक्ति साहित्य का आधार

गुजरात के भक्ति कवि नरसी मेहता ने हिंदी भक्ति साहित्य को गहराई से प्रभावित किया। नरसी मेहता, जिन्हें गुजराती साहित्य में सूरदास के समकक्ष माना जाता है, ने अपनी भक्ति रचनाओं के माध्यम से हिंदी और गुजराती साहित्य के बीच एक सांस्कृतिक सेतु स्थापित किया। उनकी रचना 'वैष्णव जन तो तेणे कहिए' न केवल गुजराती में, बल्कि हिंदी में भी अनूदित हुई और व्यापक रूप से लोकप्रिय हुई। उनकी अन्य रचनाएँ, जैसे हरि रस और सुदामा चरित, हिंदी में अनूदित होकर हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में सहायक रहीं। नरसी मेहता की रचनाओं में लोकभाषा का प्रयोग हुआ, जो हिंदी साहित्य के लिए प्रेरणा का स्रोत बना। उनकी कविताओं में सामाजिक समानता और आध्यात्मिकता का संदेश था, जो हिंदी भक्ति साहित्य के मूल्यों के साथ संनादति था।

3.2 जैन और वैष्णव साहित्य

गुजरात के जैन विद्वानों ने हिंदी में धार्मिक और दार्शनिक साहित्य की रचना की। जैन साहित्य में नैतिकता, अहिंसा और आत्म–चिंतन जैसे विषयों पर हिंदी में रचनाएँ लिखी गईं, जो हिंदी साहित्य में एक नया आयाम जोड़ती थीं। कांजी स्वामी, जिन्हें 'कोहेनूर ऑफ काठियावाड़' कहा गया, ने जैन दर्शन और रत्नत्रय को बढ़ावा दिया, जिसका हिंदी में अनुवाद हुआ। उनकी पुस्तक 'जैन दर्शनः एक परिचय' हिंदी में प्रकाशित हुई, जिसने जैन दर्शन को हिंदी पाठकों तक पहुंचाया।

वैष्णव संतों ने भी हिंदी में भक्ति रचनाएँ लिखीं। गुजरात के वैष्णव मंदिरों, जैसे द्वारकाधीश मंदिर और सोमनाथ मंदिर, पर आधारित साहित्य ने हिंदी में धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित किया।

3.3 हिंदी में लिखी गई प्रमुख पुस्तकें

गुजरात के लेखकों ने हिंदी साहित्य में कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं, जिन्होंने हिंदी को समृद्ध करने में योगदान दिया। कुछ प्रमुख पुस्तकें निम्नलिखित हैं:

- **महात्मा गांधी:** 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग' (हिंदी अनुवादः सत्यना प्रयोग) – यह आत्मकथा हिंदी गद्य की उत्कृष्ट कृति है, जिसमें गांधीजी के जीवन और दर्शन को सरल और प्रभावशाली भाषा में प्रस्तुत किया गया है।
- **महादेव देसाई:** 'गीता माता' – भगवद्‌गीता का हिंदी अनुवाद, जो हिंदी साहित्य में धार्मिक और दार्शनिक साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।
- **काका कालेलकर:** 'हिमालय की यात्रा' – यह यात्रा वृत्तांत हिंदी में लिखा गया, जिसमें हिमालय की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक यात्रा का वर्णन है। कालेलकर की लेखन शैली ने हिंदी गद्य को नई गहराई दी।
- **हंसा मेहता:** 'स्त्री शिक्षा और सामाजिक सुधार' – यह पुस्तक हिंदी में लिखी गई, जिसमें महिलाओं की शिक्षा और सामाजिक सशक्तीकरण पर जोर दिया गया। यह हिंदी साहित्य में नारीवादी विचारों को प्रस्तुत करने वाली एक महत्वपूर्ण रचना है।
- **उमाशंकर जोशी:** 'गुजरात की सांस्कृतिक विरासत' – हिंदी में अनूदित यह पुस्तक गुजरात की सांस्कृतिक और साहित्यिक परंपराओं को हिंदी पाठकों तक पहुंचाती है।
- **रमणलाल देसाई:** 'भारतीय संस्कृति और समाज' – हिंदी में अनूदित यह पुस्तक भारतीय समाज और संस्कृति पर विचार प्रस्तुत करती है, जो हिंदी पाठकों के बीच लोकप्रिय हुई।

3.4 हिंदी पत्रिकाएँ और साहित्य सम्मेलन

गुजरात से प्रकाशित हिंदी पत्रिकाओं ने हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'नवजीवन' और 'हरिजन' जैसी पत्रिकाओं ने सामाजिक सुधार, स्वतंत्रता संग्राम और साहित्यिक रचनाओं को प्रकाशित किया। इन पत्रिकाओं ने हिंदी को जनमानस तक पहुंचाने में मदद की। गुजरात में आयोजित हिंदी साहित्य सम्मेलनों और कवि सम्मेलनों ने हिंदी कविता को लोकप्रिय बनाया। इन आयोजनों में गुजरात के कवियों और लेखकों, जैसे कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' और उमाशंकर जोशी, ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं, जिसने हिंदी साहित्य को नई ऊँचाइयों तक पहुंचाया।

3.5 आधुनिक साहित्य और पत्रकारिता

आधुनिक काल में गुजरात के लेखकों और पत्रकारों ने हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता को समृद्ध किया। हंसा मेहता ने हिन्दी में सामाजिक और नारीवादी मुद्दों पर लेखन किया। उनकी पुस्तक स्त्री शिक्षा और सामाजिक सुधार ने हिन्दी साहित्य में नारीवादी विमर्श को बढ़ावा दिया। युवा लेखकों ने हिन्दी साहित्य में आधुनिक विषयों, जैसे पर्यावरण, सामाजिक बदलाव और वैश्वीकरण को शामिल किया। गुजरात से प्रकाशित हिन्दी समाचार पत्रों, जैसे गुजरात समाचार और दिव्य भास्कर (हिन्दी संस्करण), ने हिन्दी को जनमानस तक पहुँचाने में मदद की।

4. शैक्षिक और सामाजिक योगदान

4.1 हिंदी का शैक्षिक महत्व

गुजरात के शिक्षाविदों ने हिंदी को शिक्षा के क्षेत्र में प्रोत्साहित किया। हंसा मेहता और जीवराज मेहता जैसे मनीषियों ने हिंदी को स्कूलों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाने पर जोर दिया। गुजरात के शैक्षिक संस्थानों, जैसे गुजरात विद्यापीठ, में हिंदी का अध्यापन शुरू हुआ, जिसने नई पीढ़ी को हिंदी से जोड़ा। गणेश वासुदेव मावलंकर, जिन्हें 'दादा साहब' के नाम से जाना जाता है, ने संसदीय

कार्यवाहियों में हिंदी के उपयोग को प्रोत्साहित किया, जिससे हिंदी को प्रशासनिक स्तर पर मान्यता मिली।

4.2 स्वामी दयानंद सरस्वती और आर्य समाज

स्वामी दयानंद सरस्वती, जो आर्य समाज के संस्थापक थे, ने गुजराती भाषी होते हुए भी हिंदी को अपनाया और इसे जनता तक पहुंचाने में योगदान दिया। उनकी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश का हिंदी संस्करण हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण रचना है, जिसने धार्मिक और सामाजिक सुधारों को प्रोत्साहित किया।

4.3 सामाजिक सुधार और हिंदी

मनीभाई देसाई जैसे सामाजिक कार्यकर्ताओं ने हिंदी को सामाजिक सुधार का माध्यम बनाया। उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य किया और इसे सामाजिक जागरूकता का साधन बनाया। गुजरात में सामाजिक सुधार आंदोलनों, जैसे महिला सशक्तीकरण और शिक्षा में हिंदी का उपयोग हुआ, जिसने इसे सामाजिक एकता का प्रतीक बनाया।

5. सांस्कृतिक आदान–प्रदान

5.1 लोकनृत्य और लोकनाट्य

गुजरात की समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं ने हिंदी को विभिन्न रूपों में प्रभावित किया। गरबा और डांडिया जैसे लोकनृत्यों में हिंदी गीतों का समावेश हुआ, जिसने हिंदी को लोकप्रिय संस्कृति का हिस्सा बनाया। भवई जैसे लोकनाट्यों में हिंदी का उपयोग हुआ, जिसने हिंदी को ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचारित किया। इन सांस्कृतिक गतिविधियों ने हिंदी को न केवल शहरी, बल्कि ग्रामीण जनता तक पहुंचाया।

5.2 लोककथाएँ और साहित्यिक अनुवाद

गुजरात की लोक कथाओं का हिंदी में अनुवाद हुआ, जिससे हिंदी साहित्य में नई कहानियाँ और कथानक शामिल हुए। गुजराती साहित्य की समृद्ध परंपरा ने हिंदी साहित्य को प्रेरित किया। उदाहरण के लिए, सौराष्ट्र की रसधारा जैसी पुस्तकों के हिंदी अनुवाद ने हिंदी पाठकों को गुजरात की सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराया।

5.3 व्यापार और हिंदी

गुजरात के व्यापारियों ने हिंदी को व्यापारिक पत्र–व्यवहार का माध्यम बनाया। समुद्री व्यापार के कारण गुजरात में विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों का मेल हुआ, जिसने हिंदी में नए शब्द और अभिव्यक्तियाँ जोड़ीं। गुजरात के व्यापारियों और उद्यमियों ने उत्तर भारत में कई प्रमुख व्यवसाय स्थापित किए, जिनमे कुछ प्रमुख उदाहरण हैं अडानी समूह, रिलायंस इंडस्ट्रीज, सन फार्मास्युटिकल्स, अंबुजा सीमेंट, टोरेंट फार्मास्युटिकल्स। इन व्यवसायों ने न केवल आर्थिक विकास में योगदान दिया, बल्कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में सांस्कृतिक और सामाजिक आदान–प्रदान को भी बढ़ावा दिया।

6. हिंदी सिनेमा और धारावाहिकों में गुजरातियों का योगदान

हिंदी फिल्मों का निर्माण

गुजरात के फिल्म निर्माताओं ने हिंदी सिनेमा को नई दिशा दी। कुछ प्रमुख नाम और उनकी फिल्में

निम्नलिखित हैं:

- **संजय लीला भंसाली:** गुजराती मूल के इस प्रसिद्ध निर्देशक ने हम दिल दे चुके सनम (1999), देवदास (2002), बाजीराव मस्तानी (2015), और पद्मावत (2018) जैसी हिंदी फिल्मों का निर्माण किया। उनकी फिल्मों ने हिंदी सिनेमा को भव्यता और सांस्कृतिक गहराई प्रदान की।

- **केतन मेहता:** गुजराती फिल्म निर्माता केतन मेहता ने मिर्च मसाला (1987), माया मेमसाब (1993), और मंगल पांडे: द राइजिंग (2005) जैसी हिंदी फिल्में बनाईं, जो सामाजिक और ऐतिहासिक विषयों पर आधारित थीं। उनकी फिल्मों ने हिंदी सिनेमा को सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक गहराई प्रदान की।

- **पान नलिन:** गुजराती मूल के अंतरराष्ट्रीय फिल्म निर्माता पान नलिन ने संसारा (2001) और वैली ऑफ फ्लावर्स (2006) जैसी हिंदी फिल्मों के माध्यम से भारतीय संस्कृति और हिंदी को वैश्विक दर्शकों तक पहुंचाया। उनकी फिल्मों ने हिंदी सिनेमा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाई।

7. विदेशों में गुजरातियों का योगदान

7.1 गुजराती डायस्पोरा

गुजरातियों की समुद्री व्यापार और प्रवास की लंबी परंपरा रही है। गुजराती समुदाय विश्व के 129 देशों में फैला हुआ है और भारतीय डायस्पोरा का लगभग 33% हिस्सा गुजरातियों का है। यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका और पूर्वी अफ्रीका में गुजराती समुदाय ने व्यापार, उद्योग और सामाजिक कार्यों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

7.2 विदेशों में हिंदी का प्रचार

विदेशों में रहने वाले गुजरातियों ने हिंदी और भारतीय संस्कृति के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यूनाइटेड किंगडम में गुजराती समुदाय, जो भारतीय समुदाय का लगभग आधा हिस्सा है, ने हिंदी को सामुदायिक आयोजनों, सांस्कृतिक उत्सवों और स्कूलों में प्रचारित किया। संयुक्त राज्य अमेरिका में गुजराती संगठनों ने हिंदी भाषा की कक्षाएँ और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए, जिसने हिंदी को नई पीढ़ी तक पहुंचाया।

8. निष्कर्ष

गुजरात के मनीषियों ने हिंदी के संवर्धन में बहुआयामी योगदान दिया। स्वतंत्रता संग्राम में हिंदी को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बनाने से लेकर साहित्य, शिक्षा, पत्रकारिता और सांस्कृतिक आदान–प्रदान तक, गुजरात ने हिंदी को समृद्ध और लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। महात्मा गांधी, सरदार पटेल, नरसी मेहता, स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे मनीषियों के प्रयासों ने हिंदी को न केवल एक भाषा, बल्कि भारत की सांस्कृतिक और राष्ट्रीय पहचान का अभिन्न अंग बनाया। गुजरात की यह विरासत आज भी हिंदी के विकास और प्रसार में प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है।

राजभाषा विभाग स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में 26 जून, 2025 को भारत मंडमप, नई दिल्ली में आयोजित समारोह में प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी

राजभाषा विभाग स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में दिनांक 11 जुलाई, 2025 को हैदराबाद में आयोजित कार्यक्रम में दीप प्रज्ज्वलित करते हुए मंचासीन अतिथिगण

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, एन डी सी सी -II भवन, नई दिल्ली-110001
के लिए इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली द्वारा मुद्रित